

छन्दःप्रभाकर

अर्थात्

भाषापिङ्गल सटीक

जिसमें

छन्दःशास्त्रकी विशेष ज्ञानोत्पत्तिकेलिये मात्राप्रस्तार,
वर्णप्रस्तार, मेरु, सर्कटी, पताका प्रकरण, मात्रिक
सम, अर्द्धसम, विषम और वर्णसम, अर्द्धसम
और विषमवृत्त प्रकरणोंका वर्णन बड़ी विचित्र
और सरल रीतिसे लक्षण और उक्तम
उदाहरणों सहित दिया है।

जिसे

व्युत्त बाबू जगन्नाथप्रसादजी (उपनाम भानु कवि) ने १९०८
सेटलमेंट आफिसर-जिल्लअ वर्धा (मध्यप्रदेश) ने अत्यन्त
परिश्रमसे रच कर छन्दःप्रमी महाशयोंके उपकारार्थ
प्रकाशित किया।

यह ग्रन्थ श्रीमन्सहाराजाधिराज श्री१०८
श्रीमद्गोखामी श्रीबालकृष्णलालजी महाराज
कांकरौलीनरेशकी ससर्पण किया गया है।

काशी

भारतजीवनप्रेसमें श्रीयुक्त बाबू रामकृष्णजी वर्मा
द्वारा छापानेकी है। Entered
संवत् १९३१ 22 Apr 2005

सूचीपत्रम् ।

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
(अ)		अरसांत	२४६
अचलधृति	२१३	अरिक्ता	४५
अत्यष्टिः	२१५	अवतारी (२५)	५३
अत्युक्त्या	१२५	अश्वगति	२१४
अतिक्रतिः	२४७	अश्वलक्षित	२३८
अतिजगती (५)	१८६	अश्ववतारी	६४
अतिधृतिः	२२६	अशोकपुष्पमंजरी	२५५
अतिशर्करी	२०१	अष्टिः (३०)	२०८
अद्रितनया	२३७	असम्बाधा	१८५
अनङ्गकीड़ा	२८१	अहि	२३२
अनङ्गशेखर (३०)	२५७	अहिवर	८०
असुकुला	१६३	अहीर	३८
असुष्टुप	१४०	(आ)	
अपरवक्त्र	२७०	आकृतिः (३५)	२३३
अपराजिता	१८५	आख्यानिकी	२७०
अपरान्तिका (१५)	१०३	आङ्ग	३७
अभीर	३८	आशा	१६०
अमृतगति	१५२	आदित्य	३८
अमृतधनि	८७	आनन्दवर्चक (१०)	४८
अमृतधारा	२७८	आपातलिका	१०२
अमृतधुनि (३०)	८७	आपीड़	२७७
अर्ण	२५२	आभार	१८०, २४६
अर्णव	२५२	आभीर	३८
		आर्व्या (३०)	८५

सन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	सन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
(आर्या (मेदाः)	८७-१००	१ उपेन्द्रवज्रा	१५७
आर्यागीति	८७	उमा	२६४
आर्याप्रकरणम्	८३	उज्जाल (माविकार्द्धसम)	८२
(इ)		उज्जाला (माविकसम) ^{८०}	६८
इन्द्रवज्रा	१५७	उशिक	१९६
इन्दुवदना	१८८	(ऋ)	
इन्द्रवंशा	१७०	ऋषि	१६९
(उ)		(ए)	
उक्था	१९५	एकावलि	१८२
उग्राह्या	८४	(क)	
उज्वला	१८२	कच्छप	८०
उल्लृतिः	२४८	कञ्जल ^(७५)	४०
उदृगता	२७८	कञ्जश्रवलि	१८९
उदृगाया	८४	कान्द	१८३
उदृगीति	८६	कान्दुक	१८१
उद्दाम	२५२	कान्या	१२८
उद्यत	७१	कमल ^(८०)	१२८
उद्धर्षिणी	१८५	कमला	१५०
उदर	८१	कमलावती	६६
उदोच्चवृत्तिः	१०२	कर्ण	६५
उपगीति	८६	करखा	६८
उपचित्र	२६२	करता ^(६५)	१३१
उपचित्रा	४५	करभ	७८
उपमान	५२	करहन्त	१३८
उपस्थितप्रचुपित ^(६५)	९०८	करहंस	१३८
उपस्थिता	१५१	कलहंस	१८०

छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
कला (१६०)	१२८	कृष्ण	१२८
कलाधर	२६१	केतुमती (५२५)	२६८
कवित्त	२५८	कौष्ठ	२४८
काम्य	५७	(ख)	
कामटा	१५६	खंजा	२७२
कामरूप (१५५)	५७	खन्धा	८४
कामा	१२५	खरारी	६८
कामिनीमोहन	१७१	ख्यानिकी (१२०)	२७१
काव्य	५७	(ग)	
किरणान	२६३	गगनानङ्ग	५५
किरीट (१००)	२४७	गङ्गा	६७
कीर्ति	१५५	गङ्गाधर	२४१
कीर्ति (उपमेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१५८	गङ्गादक	२४१
कीड़ाचक्र	१७२, २२४	गजगती (५२५)	१४२
कीड़ा	१३०	गण्डका	२२८
कुकुभ	३७	गयन्द	७८
कुटिल (१०५)	१८८	गरुडरुत	२१३
कुण्डलिया	८८	गायत्री	१३२
कुन्दलता	७४८	गायिनी (१२०)	८६
कुमारललिता	१३६	गाहा	८४
कुलक	४६	गाहिनी	८७
कुसुमविचित्रा	१७६	गाङ्गू	८४
कुसुमस्तवकटण्डक (१५०)	२५३	गीता	५८
कुसुमितलताविभिता	२१८	गीति (१२५)	८५
कृतिः	२२८	गीतिका (मात्रिक)	५८
कृपाण	२६३	गीतिका (वर्णवृत्त)	२६०

कन्दोनामानि	पुटाङ्काः	छोनामानि	पुटाङ्काः
मीनार्था	११३	चन्द्रलेखा	२०४
गुपाल	४२	चन्द्रवर्त्म	१७८
गोपाल (गुपाल देखी) (१५०)		चन्द्रिका	१८८
गौरी	१८५	चन्द्रावर्मा (१२६५)	५०२
ग्वाल	२५	चपला	८८
(घ)		चम्पकमाला	१५०
घनाक्षरी	२५८	चर्चरी	२२५
घनाक्षरी (रूप)	५६१	चल	७८
(च)		चान्दायण (५७०)	५०
चक्र (१४५)	१८८	चामर	२०६
चक्रविरति	१८८	चारुहासिनी	१०३
चकिता	२१०	चित्र	२१०
चकोर	२६८	चित्रा (चीपाई)	४४
चक्षरी (मात्रिक)	७३	चित्रपदा (१०५२)	१४५
चक्षरी (वर्णवृत्त) (०५०)	२५४	चित्रलेखा	२०१
चक्षरीकावली	१८०	चित्रा (मात्रिक)	४४
चक्षुला	२०८	चित्रा (वर्ण)	२०४
चक्षुलाक्षिका	१७	चुलियाला	६१
चक्षुली	२५४	चौपाई (१०५२)	४
चण्डरसा (१५५)	१०३	चौपाई	४६
चण्डवृष्टिप्रपात	२५९	चौपाई (रूप)	४६
चण्डवृष्टिप्रयात	२५९	चवपैया	६२
चण्डालिनी (दीहा)	७०	चौबोला	४१
चण्डी	१८८	चौवंसा (१०५५)	१३३
चन्द्रकला (१६०)	२४८	चौरस	१३३
चन्द्रमणि	३८	(छ)	
		छपे	८०

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
कृष्यै (भेदाः)	८१	तरणिजा (२१०)	१२८
कवि	६७	तरलनयन	१८०
कसा (१११)	१८२	ताटङ्क	६६
काया	२२६	तामरस	१०४
(ज)		तारक	१८६
जगती	१७०	तारका (२१५)	२२१
जघनचपला	८८	तारी	१२६
जनहरण	२६०	ताली	१६
जयकरी (१६५)	४०	तित्रा	१०८
जलधरमाला	१७७	तिलका	१२५
जलहरण	२६०, २६२	तिलना (२२०)	१६५
जलोत्तितगति	१२	तिष्ठा	१२५
जाया	१६०	ती	२०६
जोमूत (२००)	२५२	तीर्णा	१२८
जोडा	१३४	तुङ्ग	१४३
ज्योतिःशिव्वा	२८१	तुङ्गा (२२५)	१४३
(भा)		तुरङ्गम	१४३
भूलना (प्रथम)	५७	तूण	२०३
भूलना (द्वितीय)	७०	तैधिक	४१
भूलना (तृतीय) (२०५)	७०	तोटक	१७०
(ड)		तोमर (२३०)	६८
डमरू	०१३, ०६३	त्रिकल	७८
डिङ्गा	४५, १२५	त्रिभङ्गीदण्डक	१५५
(त)		त्रिभङ्गी	६४
तन्वी	०४३	त्रिष्टुप्	१५७
तनुमथा	१३२	त्रैलोक (२३५)	५०

कृत्नीनामानि	पृष्ठाङ्काः	कृत्नीनामानि	पृष्ठाङ्काः
त्वरितगति	१५१	धारि (२६०)	१८९
(द)		धारी	१८४
दण्डक	६८, २५१	धीरललिता	५१४
दण्डकला	६६	धृतिः	०१८
दण्डिका	००८	ध्रुव	७६
दमनक (२३०)	१६८	(न)	
दिगपाल	५०	नगस्वरूपिणी (२३५)	१४१
टिवा	२३४	नन्द	१५
दीप	३८	नन्दन	२१८
दीपकमाला	१५५	नन्दिनी	१८०
दुर्मिल (नवैया) (२५५)	०४४	नर	७८
दुर्मिल	६७	नरहरी (२५०)	४८
दैगिक	३८	नराच	२११
दोधक	१६४	नराचिका	१५५
दोवै	६०	नरिन्द्र	६०
दोहा (२३०)	७६	नरिन्द्र	६०
दोहा (चण्डालिनी)	७७	नलिनी (२३५)	००६
दोही	८१	नवमालिका	१८३
द्रुतमथा	२६८	नवमालिनी	१८३
द्रुतविलखित	१७६	नागराज	२११
दिनराचिका (२५५)	२५८	नान्दीमुखी	१८८
(ध)		नायक (२६०)	१३५
धना	८३	नाराच	२२०
धगानन्द	८३	नारी	१२६
धरा	१२०	नासन्निक	५८
धाता	४५	निशिपाल	००५

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
निमि (२८५)	१२८	पौराणिक (३१०)	४७
नील	११४	प्रकृतिः	२३१
नीलचक्र	१५६	प्रचित	२५२
(प)		प्रञ्चलय	४४
पङ्कभवलि	१८२	प्रञ्चलिया	४४
पङ्कजवाटिका	१८२	प्रत्यापीड (३१५)	२७७
पङ्क्तिः (३२०)	११०, १५०	प्रतिष्ठा	१२८
पञ्जभटिका	४६	प्रबोधिता	१८७
पञ्चामर	२१०	प्रभद्रक	२०७
पद्मान	१२७	प्रभद्रिका	२०६
पणव	१५०	प्रभा (३२०)	१७६
पथ्या (३०५)	८७	प्रभावति	१८८
पथा	१८८	प्रमाणिका	१४०
पट्टिका	४४	प्रमाणी	१४०
पहरि	४४	प्रमिताचरा	१७५
पद्म	१४३	प्रमुदितवदना (३२५)	१७६
पद्मावती (३००)	६६	प्रवर्तक	१०२
पयोधर	७८	प्रवरललिता	२१२
पौन	३५	प्रहरणकलिका	१८६
पाईता	१४८	प्रहरणकलिता	१८६
पादाकुलक	४६	प्रहर्षिणी (३३०)	१८८
पादाङ्गुलक (३०५)	११३	प्राच्यवृत्ति	१०२
पीयूषवर्ष	४८	प्रियंवदा	१८२
पुट	१८१	प्रिया	१९७
पुष्पिताम्रा	१७०	प्रेमा	१६०
पृथ्वी	११६	प्रवङ्गम् (३३५)	५०

(८)

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
(फ)		भद्रा	१६०
फुल्लदाम	१२८	भद्रिका (३०८)	१४८
(व)		भागवत	३८
वन्धु	१६४	भाम	२०८
वरवे	७५	भाराकाशा	२१७
वल	७८	भुजगशिशुसुता	१४७
वलय (३८०)	१५	भुजङ्गप्रयात (३३५)	१७१
वसुधा	१८८	भुजंगविजृम्भित	२४८
वसुमति	१२६	भुजङ्गसङ्गता	१४८
वानर	७८	भुजङ्गिनी	४२
वाला	१५६	भुजङ्गी	१६८
वाला(उपमेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१६०	भ्रमर (३०८)	७७
वासन्ती	१८६	भ्रमरविलसिता	१६४
विडाल	८०	भ्रमरावलि	२०६
विश्व	१५०	भ्रामर	७८
विश्वी	१५०	(म)	
विहारी (३५०)	५१	मकारन्द	२४६
वीर	६४	मच्छ (३०५)	८०
वृद्धि	८६	मञ्जरी	१८७
वृद्धि(उपमेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१६१	मंजरी (संवैया)	१४६
वैताली	१०१	मंजरी (विषम)	१७७
व्याल (३५५)	८०	मंजीर	२२५
(भ)		मंजुभाषिणी (३६०)	१८७
भक्ती	१२८	मंडूक	७८
भद्रक	१६५	मणिगुणनिकर	१०२
भद्रविराट	२६८	मणिगुन	२०१

छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
सण्णिवन्ध	१४६	मनहर (४९०)	२५८
सण्णिसध्य (३६५)	१४६	मनहरण	२०६
सण्णिमाला	१७७	मनहंस	२०५
सत्तगयन्द	२४०	मनोरमा	१५१
सत्तमयूर	१८८	मयूरसारिणी	१५५
सत्तमातंगलीलाकर	२५५	मकॅट (४९५)	७८
सत्तसमक (३२०)	४२	मरहटा	६९
सत्ता	१५४	मल्लिका	१४२
सत्ताक्रीडा	२२८	मल्लिका (सवैया)	२४१
सदनगृह	७१	मल्ली	२४८
सदनमल्लिका	१४३	महाचपला (४२०)	८८
सदनललिता (३६५)	२११	महातैथिक	६२
सदनहर	७१	महादैथिक	४८
सदलेखा	१६८	महानाराच	२५८
सदिरा	२३६	महापौराणिक	४८
सदुकाल	७८	महाभागवत (४२५)	५६
सध्या (४००)	१२६	महाभुजंगप्रयात	१७२
सधु	१२६	महामालिनी	२२१
सधुभार	६७	महामोदकारी	२२६
सधुमती	१६७	महायौगिक	६१
सन्धान	१३५	महारीद्र (४२०)	५१
सन्दर (५०५)	१२८	महालक्ष्मी	१४७
सन्दाक्रान्ता	२१७	महावतारी	५५
सन्दाकिनी	१७६	महासंस्कारी	४७
सन्दारमाला	२६६	मही	१२५
सन्मोहन	४१	महीधर (४३५)	२५८

छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
माणवकीड़ा	१४०	स्वगेन्द्र	१२७
साधवी	१४६	सृदुगति	५४
मानव	४०	मेघविस्फूर्जिता	२२६
मानहंस	२०६	मैनावली	१८०
मानसहंस (२१/०)	२०६	मोटनक	१६७
मानिनी	२४१	मोतियदाम	१७८
माया	१८७	मोद्	२३५
माया (उपमेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१६०	मोदक	१७८
मालती (पडचरा)	१३४	मोहनि. (२७०)	२०८
मालती (डादशाचरा)	१७८	मोहिनी	७६
मालती (सवैया)	२४०	मौक्तिकमाला	१६२
माला	१५८		
मालाधर	२१८	(य)	
मालिनी	१०२	यमक	१३१
मालिनी (सवैया) (४५/०)	१३४	यवमती	२७१
माली	४८	यशोदा (२६५)	१३२
माचासमक	४३	युक्ता	१४७
मात्रिकदण्डक	६८	योग	४८
मुखचपला	८५	यौगिक	६०
		(र)	
सुक्तक (सम)	२५८	रणहंस	२०५
सुक्तक (विषम)	२८०	रतिपद	१५०
सुक्तहरा	१७८	रथोदता	१६२
सुक्तहरा	२४४	रमण	१२७
सुक्तामणि	५५	राग	१८३
सुरारि	१३७	राजीवगण	४७
सृगी	१२७	राधा (२८५)	१८४

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
राधिका	५१	लक्ष्मी (वर्णवृत्त) (५१९०)	१४१
राम	४७	लक्ष्मीधर	१७१
रामा	१४४	लक्ष्मीधरा	१७१
रामा (उपभेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१६१	लाक्षणिक	६४
रास	५१	लीला (प्रथम)	३८
रिद्धि	१६१	लीला (द्वितीय) (५२५)	५४
रुक्मवती	१५१	लीला (वर्णवृत्त)	१३७
रुचिरा (माघिक)	६३	लीलाकर	२५२
रुचिरा (द्वितीय)	८२	लीलावती	४४
रुचिरा (वर्णवृत्त)	१८८	लीला	२००
रूपघनाक्षरी	२६१	लौकिक	३६
रूपक्षीपाई	४६	(व)	
रूपमाना	५४	वर्णार्द्धसमप्रकरणम्	२६५
रूपवती	१५०	वर्द्धमान	२८०
रेखता	५४	वसन्ततिलक	१८५
रोला	५३	वसन्ततिलका	१८४
रौद्र	६८	वसुमती	१२६
रौद्रार्क	५२	वाणिनी	२१२
(ल)		वाणी	१५८
ललना	१८३	वातोर्धी	१६१
ललित्	१८४	वानर	७८
ललित (विषम)	२७८	वानवासिका	४४
लक्षिता	१८१	वाम	२४५
लवली	२७७	वामा	१५४
लक्ष्मी	२४२	वासव	५७
लक्ष्मी (माघिक)	८६	वासन्ती	१८६

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
विक्रमतिः	२६७	वैखदेवी	१७४
विगाथा	८४	वंशस्थविलम्	१७०
विगाहा	८४	व्याल	८०, २५२
विजया	७२	(३)	
विजोदा	१३४	शङ्कर	५६
विजोहा	१३४	शङ्ख	२५२
वितान	१४४	शङ्खनारि	१६६
विव्याधारी	१८५	शंभू	२२८
विव्युन्माला	१४२	शङ्करी	१८४
विव्युल्लेखा	१३४	शरभ (दोहा)	७८
विपरीताख्यानिकी	२७१	शरभ (वर्णवृत्त)	२०१
विपिनतिलका	२०२	शशिकला	२०१
विपुला	१४१	शशिवदना	१६३
विपुला (आर्या)	८७	शशी	१२६
विवुधप्रिया	२२५	शानु	१२६
विमोहा	१३४	शार्दूल	८०
विलासिनी	१६५	शाहूललसिता	२२३
विश्रीक	४३	शाहूलविक्रीडित	२६७
विशेषक	२१४	शाहूललललिता	२२५
विष्णुपद	५७	शाला	१५८
वृक्ष	२२८	शालिनी	१६३
वृक्ष	१६८	शिखरणी	२१५
वृन्ता	१६८	शिखा	२७१
वृहती	१४६	शिष्या	१३८
वेगवती	२६८	शीर्षरूपक	१६८
वैताली	१०१	शुक्कामदा	१५६

कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	कन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
शुद्धगा	१६०	समुद्रिका	१६१
शुद्धध्वनि	६५	सम्बोद्धा	१६१
शुद्धविराट	१५३	सरभ (देखी शरभ)	
शुद्धविराटऋषभ	२८०	सरसी (मात्रिक)	५८
शुभग	७२	सरसी (वर्णवृत्त)	२६२
शुभगति	३७	सवासन	१६८
शुभगीता	५८	सर्वैया	२६४
शृङ्गारिणी	१७१	साकी	६०
शेषराज	१६४	सायक	१६६
शोभन	५४	सार (मात्रिक)	६०
शोभा	२३०	सार (वर्णवृत्त)	१२६
श्रेन	७८	सारङ्ग	१८०
श्रेनिका	१६७	सारङ्गिक	१४८
श्रेनी	१६७	सारवती	१५३
श्री	१२५	सालिनी	१६३
श्लोक	१४५	साहिनी	८४
श्वान	८०	सिद्धि	१६१
(ष)		सिंहनाद	१८०
षट्पदी (देखी कृष्णय)	८०	सिंहनी	८७
(स)		सिंहविक्रान्त	२५३
सखी	४०	सिंहविक्रीड	२५४
सती	१२८	सिंहोन्नता	१८५
सर्प	८१	सीता	२०७
समानसर्वैया	६६	सुख	२४८
समानिका	१२६	सुखमा	१५४
समानी	१४३	सुखिलक	२०७

छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
सुगती	३६	स्वागता	१६५
सुगीतिका	५६	स्वान	८०
सुधानिधि	२५७	[ह]	
सुन्दरि (त्रयोविंशत्यक्षरा) (६३५)	२३७	हरमुखी	१४८
सुन्दरी (द्वादशक्षरा)	१७५	हरि	१२८
सुन्दरी (सवैया)	२४७	हरिगीतिका	६०
सुनन्दिनी	१८७	हरिगङ्गता	२७०
सुप्रतिष्ठा	१३०	हरिणी (एकदशक्षरा)	१६६
सुभद्रिका	१६२	हरिणी (सप्तदशक्षरा)	२१६
सुसुखी (सवैया)	२४०	हरिपद	८२
सुसुखी	१५७	हरिप्रिया	७३
सुमेरु	४८	हरी	२००
सुलक्षण	४१	हनुमुखी	१४७
सुलक्षण	४१	हाकल	४०
सुवास	१३८	हाकलि	४१
सोमराजी	१३३	हाकली	१५३
सोरठा	८१	हारिणी	२१७
सौरभक	२७८	हारी	१३२
संयुत	१५४	हीर (मात्रिक)	५२
संस्कारी	४३	हीर (वर्णवृत्त)	२२३
संस्कृतिः	२४१	हुण्नास	६५
स्वन्धक	८४	हंस (दोहा)	७८
स्त्री	१२५	हंस (वर्णवृत्त)	१३१
स्त्रक्	२०२	हंसगति (६५०)	४८
स्त्रगंधरा	२३१	हंसमाला	१३८
स्त्रग्विष्णी	१७१	हंसाल	६८

छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः	छन्दोनामानि	पृष्ठाङ्काः
हंसी (दशाक्षरा)	१५२	त्रिभङ्गीदंडक	२५५
हंसी (उपभेद इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा)	१५९	त्रिभङ्गी	६४
हंसी (द्वाविंशत्यक्षरा) (६५५)	२३४	त्रिष्टुप् —	१५७
(च)		त्रैलोक (६६०)	५०
क्षमा	१८९		
(च)			
त्रिकल	७९		



INTRODUCTION.

This work is an attempt to give a complete and systematic view of the science of Prosody in the Hindi Language. Hindi claims to be the immediate offspring of Sanskrit and its modern representative in the home of its highest ancient development, and by right of direct heirship, it inherits all the many-sided refinements and verbal flexibility and wealth of the original tongue. In certain centuries it received the highest patronage and encouragement, and such great names, as Tulsidas, Soordas, Kesheodas, Kalidas, Bhushan, Padmakar, Gang Bhat, which mark some of the extreme reaches of its development, stand out pre-eminent to challenge the admiration of all posterity; and thus while the dialects of Hindi are diversified, careful cultivation has given them a refinement of verbal combinations and a subtlety of verbal fusions and forms which render the collective material presented for the manipulation of the literary craftsman or for the use of imaginative genius, unique and unrivalled in elegant plasticity. This work explains more than 100 technical terms and enunciates not less than 400 constructional rules metrically illustrated by the Author himself.

In Sanskrit, *Pingal Rishi* is the greatest authority. He is to Aryan Prosody what Manu is to Aryan Law. In Sanskrit and in Bhasha or Hindi several works have, at different times, appeared, the chief among which are Chhando-Manjari, Vritta Ratna-kar, Chhando-Vinod, Chhandasar and Chhando-Vichar. But they are all after the old style, where as the present work is an attempt to give one comprehensive and systematic view of the science of Prosody from the earliest period of its culture to its most recent developments, eliminating all that has become permanently obsolete and all that bore indications of absurd complexity. The present writer has also taken upon himself the task of naming certain novel and latter-day metres and metrical arrangements, and in doing so he has selected the most appropriate, modest and simple names.

In Hindi, as in Sanskrit, all metrical composition is divided into

two great sections which are characterized by two separate modes of metrical computation. Computation by series of syllables and computation of the number of syllabic instants in each line or verse. And the present work is accordingly divided into two main sections named "*Môtric*" and "*Varnic*". These two sections of the work are preceded by a general introduction which contains a historical view of the science and also a critical view of its present state. That introduction and several of the opening pages of each section of the work explain the structure of the science giving all the definitions and rules that enunciate scientific principles.

In each of the two sections of the work, besides the body of paragraphs explaining the science, the formulæ and rules which illustrate and determine the whole art of metrical composition, are given.

Every kind of metre and every metrical arrangement known and practised at the present time or met with in any of the popular works of former days, is fully described, and the metrical formula which rigidly governs it, is accurately set down. Here one prominent feature, which is special to this work and which is unprecedented in Sanskrit or Hindi prosodical treatises, requires clear though brief mention. Every kind of verse is measured either by means of the eight fixed *ganas* (or tri-syllabic feet) and the short and long quantities, or only by the number of quantities. In some languages the quantities are fixed by the ear and regulated by vocal practice. In Sanskrit and Hindi he who knows the alphabet thoroughly, knows the quantities accurately; and the "*ganas*" themselves are made up of different arrangements of the quantities. The initial letters of these eight *ganas* and the initial letters of the two quantities are the ten letters which, are the *pi* and *theta* of prosodical trigonometry. These are the items out of which every kind of metrical formula is constructed. Hitherto in Sanskrit and Hindi these *formulæ* have been mostly given as mere meaningless, grotesque combinations of the fixed letters, thrown into some particular accented arrangement, so regulated as to suit the accent of the name of the metre itself. Thus at the end of his Standard Sanskrit English Dictionary Mr. Lakshman Ramchandra Vaidya M. A. L. L. B. (Bombay), gives a long appendix on Sanskrit Prosody. One instance is taken

from the examples there given, in order to show what is meant. माणवक is a kind of verse made up of one म *gana*, one त *gana* and one short and one long quantity. The bare formula for this is मतलम; but the constructional rules are all given in a kind of laconic rhythmised verse and in order to run with the rhythm of the name माणवकम् the formula मतलम has been, by the common practice of Prosodians, contorted into मातलमगा, and the whole of the constructional rule or formula runs in the rhythm of मातलमगा माणवकम्. But मातलमगा is a mere "meaningless" "grotesque combination of the fixed letters" &c &c; and the whole of मातलमगा has a thoroughly Unsanskrit sound and has absolutely no Sanskrit verbal meaning. Also in previous works the formula has been most frequently given in a sort of verse whose metre is different from the metre described. These two things have been entirely thrown out of this work. Formerly an Anapaestic verse, for instance, and the rule for its construction, were given in an Iambic couplet, with the letters of the formula thrown into an Iambic combination. In the present treatise the rule for the construction of an Anapaestic stanza is given in an Anapaestic stanza or line, the symbolic letters of the formula being formed into the same metre.

This is one main novel feature. But another and one of far greater interest and importance to students, is that the opening letters of the words of the stanza or line invariably contain the whole of the formula. Further the combinations of the initial letters into the different *formulæ* are not guided by mere sound or metre, but each formula is so constructed as to produce a word or portion of a word or a collection of words with a verbal meaning which fits into the independent sense of the stanza or verse itself. Again each stanza or verse of this kind itself contains the full and exact name of the metre described or prescribed.

Furthermore each stanza or verse thus composed by the Author (which are 400 in number) is so written as to be of the fullest use for educational purposes;—no love-matter or love-stories are introduced; nothing abstruse is given; each stanza or verse inculcates some moral principle or relates some harmless idyllic anecdote from ancient lore.

Where the Matric computation of syllabic instants has to be formulated, this has been done in a single verse in the same measure as that described, with the computation given in clear and unmistakable symbols.

The present work is thus easy of comprehension, simple and clear in arrangement; it is adapted for the use of both the sexes at all ages of life; it avoids all mere bombast and show in all that has been inserted of original poetical composition; it comes to be a handy manual for reference with all its numerous and clear scientific tables, lists and classifications and its full and exact Index; and the scope, tone and style of the work, since they resolutely exclude every thing savouring of racial or religious dogmatism or prejudice, are such as to qualify it eminently for the position of a text book, if the different syndicates should be pleased to confer upon it that rank; and perhaps no student of Hindi would grumble if a copy of it were bestowed upon him as a prize book, rather, he would hug it with joy and delight.

The Author has devoted to this subject years of patient and earnest study; but the present work has, after that long preparation, itself been entirely written in the odds and ends of time snatched recently from the most engrossing onerous official duties connected with active out-door operations in the Revenue Settlement Department. The exigencies of the Public Service threatened in the future to leave the Author less than the minimum of leisure he could eke out here to fore, and the issue of the long contemplated and long cherished work could not therefore be further delayed. And thus, with these few explanatory remarks, the Author now submits this work as a first attempt of its kind for the indulgent acceptance of the public.

Wardha C. P. }
June 1894. }

JAGANNATH PRASAD.



आज्ञानुसार

समर्पण ।

श्रीमन्महाराजाधिराजगोस्वामीश्री१०८महाराजबाल
कृष्णलालकांकरोलीनराधिपेषु सविनयं निवेदनमिदम् ।

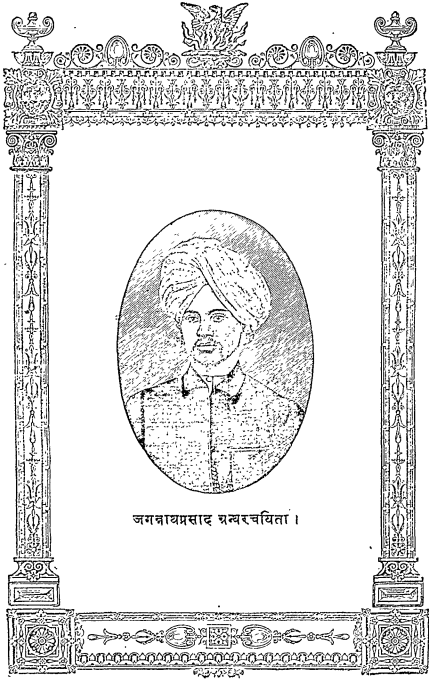
पूज्यवर,

समाचारपत्ररूपी समीरद्वारा श्रीमान्के विद्यानुरा-
गितारूपी सौरभसमूहसे आमोदित हो श्रीमान्के दर्श-
नोंका अभिलाषी चिरकालसे हो रहा था सो आज मैं
अखिलेशके अनुग्रहसे इस छन्दःप्रभाकरसंज्ञक भाषा
पिंगल ग्रंथद्वारा श्रीमान्की सेवामें उपस्थित हो इसे
श्रीयुतके करकमलमें समर्पण करता हूं। भाषा-काव्यके
प्रोत्साहनार्थ श्रीमान्ने वाराणसीमें जो कवि-समाज
स्थापित किया है, और जिस निःसहाय कुम्भज-पीत
“साहित्यसुधानिधिको” पुनः प्रकाशित किया है वे सब
श्रीमान्की काव्यरसिकता तथा विद्यानुरागिताका
पूरा २ परिचय दे रहे हैं। इन्हींसे मुझे सुदृढ़ आशा
होती है कि श्रीमान् मुझसे तनुवाग्बिलासीरचित इस
ग्रन्थको स्वीकृत कर मुझे निज कृपापात्रोंकी श्रेणीमें
स्थान प्रदान करेंगे और भाषामें आवश्यक ग्रंथोंको नि-
र्म्माण करनेकेलिये भाषाप्रेमियोंका उत्साह बढ़ावेंगे।

श्रीमान्का कृपाकांक्षी

जगन्नाथप्रसाद

वर्धा (मध्यप्रदेश)



जगन्नाथप्रसाद शम्बरचरिता ।

॥ श्रीः ॥



अथ भूमिका ।

धन्य है उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरको कि जिसकी कृपालवलीशसे यह छन्दःप्रभाकरसंज्ञक पिङ्गल * भाषामें निर्मित होकर सकल विद्या और काव्यानुरागी विद्वज्जनोंके हितार्थ प्रकाशित हुआ ।

सर्व विद्याओंके मूल ईश्वरोक्त वेद हैं, और छन्दःशास्त्र वेदोंके छः † अङ्गोंमेंसे एक अङ्ग है । अतएव वेदोंके तुल्य इस छन्दःशास्त्रका पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना हम सकल आर्यसन्तानोंका परम कर्तव्य है । बिना छन्दःशास्त्रके पढ़े छन्दोंका यथार्थ ज्ञान एवं बोध नहीं हो सक्ता ॥ आर्यावर्तमें संस्कृत और भाषा-विचक्षणोंमेंसे विरलाही कोई पुरुष निकलेगा कि जिसे काव्य प-

* पिङ्गल एक महर्षिका नाम है और उनका रचा हुआ छन्दःशास्त्र भी पिङ्गलके नामसे प्रसिद्ध है ।

† शिक्षा कल्पी व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति पङ्गानि ।

दुर्लभा अनुराग न ही । इसी प्रकार बहुतेरींकी काव्य रचनेकी भी अभिरुचि होती है । परन्तु विना छन्दःशास्त्र जाने उनका काव्य गणागणकी दृषणांसे पृथक् न होनेके कारण विद्वज्जनोंके समीप उपहासास्पद होता है ।

छन्दःशास्त्रका थोड़ा बहुत भी ज्ञान होना मनुष्यकेलिये परमावश्यक है । अपने ऋषि महर्षि और पूर्वजोंने जितने ग्रन्थ निर्माण किये हैं, वे प्रायः छन्दोवद्द ही हैं । वेद, स्मृति, शास्त्र, पुराण इत्यादि, जो देखिये सब छन्दोवद्द ही हैं । यदि छन्दका इतना गौरव अथवा साहाय्य न होता, तो भूतपूर्व महर्षिगण इस-केलिये इतना परिश्रम क्यों करते ? कोई भी विषय छन्दोवद्द रहनेके कारण अल्प समयमें ही कांठस्थ हो सकता है, और गद्यकी अपेक्षा पद्यमें थोड़ेमें ही बहुत आशय प्रकाशित हो सकता है । यही ससम्भार हमारे प्राचीन महर्षियोंने बहुत परिश्रमसे सकल शास्त्रपुराणादि सद्ग्रन्थोंको छन्दोंमें ही सङ्कलित किया है । अतएव हमको भी उन्हींका अनुकरण करना परमोचित है ॥

किसी सत्कविने कहा है ।

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा ।

कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा ॥

अर्थात् इस असार संसारमें मनुष्यजन्म ही दुर्लभ है, मनुष्यका जन्म पाकर विद्याका पाना उससे भी दुर्लभ है, विद्या भी प्राप्त होकर काव्यरचना आनी अति दुर्लभ है और कविता रचनेमें भी सुशक्तिका होना अतीव दुर्लभ है ॥ इससे यह प्रतिपा-

दित हुआ, कि नरदेह पाकर छन्दका ज्ञान होना श्रेयस्कर है । यथार्थमें विद्वज्जनोंकेलिये छन्दोविनोदसे बढ़कर इस असार संसारमें कोई दूसरा विनोद नहीं है । कहा भी है 'काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्' ॥

इस संसारमें जितनी भाषा प्रचलित हैं, उनका सौन्दर्य उनकी कवितामें ही पाया जाता है । जब तक छन्दका ज्ञान नहीं होता, तबतक मातृभाषाका भी ज्ञान भली भांति नहीं हो सकता, और जबतक मातृभाषाका पूरा २ ज्ञान न हो, तबतक मनुष्य दूसरी विद्याका भी ज्ञान पूर्णतया प्राप्त नहीं कर सकता ॥

काव्यके पढ़ने पढ़ानेमें जो आनन्द होता है, वह सर्वथैव वर्णनशक्तिसे परे है । इस आनन्दका अनुभव केवल काव्यानुरागी ही कर सकते हैं ॥

छन्दःशास्त्रमें किसी मत अथवा धर्मविशिषका प्रतिपादन नहीं है । यह केवल एक विद्या है, जो सर्वानुकूल है ॥

धन्य है श्रीसद्गोखामी तुलसीदासजी, बाबा सूरदासजी, श्रीनाभादासजी तथा केशवदासजी प्रभृति सत्कवियोंको, जो हम-लोगोंके कल्याणार्थ एकसे एक विचित्र काव्यरत्न छोड़ गये हैं । इन सत्कवियोंकी और इनके अतिरिक्त और भी जो प्राचीन एवं अर्वाचीन उद्दण्ड कवि इस आव्यवित्तमें होगये हैं उनकी बाणी माननीय, मनोहारिणी और मङ्गलकारिणी क्यों है? और वे कवि मनोवाञ्छित फल क्यों पाया करते थे? इन प्रश्नोंका सयुक्तिक उत्तर यही प्रतीत होता है, कि वे लोग पिङ्गलका भली भांति अ-

ध्ययनकर गणागणके सख्यक् विचारपूर्वक काव्यरचना किया करते थे । परन्तु आधुनिक लोग बहुधा भूतपूर्व लोगोंकी प्रणालीके विरुद्ध आचरण करते हैं, अर्थात् विना छन्दःशास्त्रको भली भांति जाने काव्य करने लग जाते हैं । भला कहिये ! उनको कविता किस प्रकार दोषरहित एवं आदरणीय हो सकती है ?

आजकल भारतवर्षमें विद्यात्साहिनी एवं गुणग्राहिणी राज-राजेश्वरी भारतेश्वरी सहाराणी श्रीविद्योरियाके सुप्रबन्धसे यद्यपि विद्यामें उत्तम प्रकार उन्नति हो रही है, तथापि छन्दःशास्त्रमें यथावत् उन्नति न होते उत्तरोत्तर अवनति ही होती जाती है । कई दिनोंसे छन्दोग्रन्थोंका अवलोकन करते २ इसका कारण जहां तक मननपूर्वक शोधा गया, तो यही प्रतीत हुआ, कि भाषा-में ऐसा कोई छन्दोग्रन्थ नहीं है कि जिसके द्वारा सर्वसाधारण काव्यालुरागी पुरुषोंको सहजमें लाभ पहुँचे । जो थोड़े बहुत छन्दोग्रन्थ हैं भी, वे अपूर्ण, क्लिष्ट अथच परस्पर विरोधी होनेके कारण लोगोंको भली भांति लाभ पहुँचानेके बदले हानि ही पहुँचाते हैं॥

इसलिये मैंने सर्वसाधारणके हितार्थ यह ग्रन्थ निर्माण किया है । इसके पढ़नेसे अल्पकालमें ही बहुतसा ज्ञान हो जायगा, क्योंकि आजकल लोगोंकी अवस्था दिनदिन हीन होती जाती है, और उनके पीछे कईएक संसारी बखड़े ऐसे लगे रहते हैं, कि जिनसे उनको विद्याविलासके उत्तेजनार्थ जैसा चाहिये वैसा अवकाश नहीं मिलता । फिर ऐसी अवस्थामें क्लिष्टग्रन्थोंके द्वारा, कि जिनको देखकर ही जी घबड़ा उठता है, कब लाभ उठा स-

कते हैं ? पिङ्गल—यह छन्दके नियमोंका ग्रन्थ है । यह जितना सरल हो, उतना ही लाभदायक है, और जितना कठिन हो, उतना ही हानिकारक है, क्योंकि जब नियम ही कठिन हैं, किंवा उनमें गड़बड़ है, तो विद्यार्थियोंको कब उनसे लाभ पहुंचनेका सम्भव है ? संस्कृतमें, जो भाषाकी माता है, देखिये तो छोटे २ सूत्रोंसे कैसे भारी २ काम लिये हैं । यही कारण है, कि लोग अल्पकालमें ही बहुतसी विद्या पढ़कर उसके आनन्दका अनुभव करने लगते हैं, परन्तु भाषामें कोई ऐसी प्रणाली आजतक नहीं निकली कि घोड़ेमें ही अधिक आशय प्रगट हो, और अल्प परिश्रमसे ही मनुष्योंको विशेष लाभ पहुंचे ॥

भारतवर्षमें, देखिये तो नायकाभेद एवं शृङ्गारादि विषयक तो अनेकानेक ग्रन्थ एकसे एक बढ़कर विद्यमान हैं और बनते ही जाते हैं । (इसका कारण यही है कि जहां दो चार ग्रन्थ देखकर थोड़ी बहुत भी काव्यकी शक्ति हुई तो लगे झट नायकाभेद रचने) इससे परमार्थ सिद्धि कदापि नहीं होती, बरन उलटी हानि ही होती है, परन्तु छन्दःशास्त्र जो सब काव्योंका मूल है, उसके क्या संस्कृत क्या भाषामें बहुत ही कम ग्रन्थ देखनेमें आते हैं । यथार्थमें इस छन्दःशास्त्रकी ओर जैसा चाहिये वैसा ध्यान नहीं दिया गया । यही एक उसकी अवनतिका प्रधान कारण है॥

उक्त बातें निश्चित होजाने पर निम्नाङ्कित बातोंकी प्रधानत्व देकर श्रीयुत भट्ट हलायुधजीकी टीका सहित प्राचीन छन्दःशास्त्र, श्रुतबोध, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमञ्जरी, वृत्तदीपिका इत्यादि सद्ग्रन्थों-

के आधारसे ही मैंने यह 'छन्दःप्रभाकर' संज्ञक छन्दोग्रन्थ सर्व-साधारण काव्यानुरागी व्यक्तियोंके हितार्थ प्रकाशित किया है । इस ग्रन्थमें मैंने विषयकी अपूर्णता, वर्णन-प्रणालीकी क्लिष्टता, अन्योन्य छन्दोग्रन्थोंमें विरोध और गूढ़ * शृङ्गारादि जो नियम-प्रधान ग्रन्थोंके दूषण हैं, उनकी ओर विशेष दृष्टि दी है ॥ कई छन्दोग्रन्थ ऐसे हैं कि जिनमें प्रस्तार सूची आदि प्रत्यर्थोंका पूर्ण रीतिसे वर्णन ही नहीं किया गया है । कई ऐसे हैं, कि जिनकी रचना कठिन रहनेके कारण बहुत लोग उन्हें यथावत् समझ नहीं सकते, कई ऐसे हैं, कि जिनमें वर्णवृत्तोंको मात्रिक छन्द लिख सारा है, जैसे, हारी, वसुमती, समानिका, कुमारललिता, तुङ्गा, मदलेखा, सारंगिय, मानव्रज्रीड़ा, शिष्या, विद्युन्माला, भ्रमरविलसता, अनुकूला इत्यादि । इसी प्रकार छन्दोंके लक्षण वर्णन करनेकी रीतिमें त्रुटि पाई जाती है, अर्थात् वर्णवृत्तोंके लक्षण मात्रिक छन्दोंके लक्षणोंकी रीतिसे और कहीं मिश्रित वर्णन किये गये हैं । भाषाके पिङ्गलोमें भिखारीदासजीका पिङ्गल उत्तम है परंतु वह भी उपरोक्त दोषोंसे मुक्त नहीं है । जैसे:—

* नियमके ग्रन्थोंका गूढ़शृंगारसे ओतप्रोत भरे रहना शुद्धहृदयवाले विद्यानुरागी छात्रोंकेलिये लाभदायक नहीं हो सक्ता । इसका कारण यही है कि गूढ़शृंगारपूरित नियमग्रन्थ पिता निज पुत्र वा कन्याको, गुरु निज शिष्यको, भाई निज भगिनीको, और माता स्वपुत्र अथवा कन्याको लज्जावशात् भली भांति नहीं पढ़ा सकती । अतएव गूढ़शृंगार नियमप्रधान-ग्रन्थोंके दूषणोंमें समझना चाहिये ॥

नाम	रूप	जैसा पाया जाता है	प्राचीनमतानुसारशुद्धलक्षण
समानिका	SSISIS	तीननंदगसमानिका	“रजग” अर्थात् रगण, जगण और एक गुरु
मानवक्रीड़ा	SISSIS	गोसभगोनरक्रीड़ा है	“भतलग” भगण, तगण, लघु और गुरु
शिष्या	SSSSSS	शतोगोशिष्याकीजि	“ममग” मगण, मगण और एक गुरु
विद्युन्माला	SSSSSSS	चारोकर्णाविद्युन्माला	“ममगग” मगण, मगण और दो गुरु
भ्रमरविलसता	SSSIIIIIIS	तिन्वाननगोभ्रमरविलसता	“मभनलग”, मगण, भगण, नगण, लघु और गुरु
अनुकूला	SISSIIIISS	गोसभसोगोहरि अनुकूले	“भतनगग” भगण, तगण, नगण, और दो गुरु

ऐसे ही अनेक दृष्टान्त हैं जो विस्तारभयसे नहीं दिये हैं ॥

ये सब वर्णवृत्त हैं, क्योंकि इनमें अक्षरोंकी गुरु लघुका नियम है । उपरोक्त वृत्तोंमेंसे दो वृत्तोंका उदाहरण नीचे दिया जाता है ॥

भ त ल ग

माणवक्रीड़ा S॥ SSI । S

जैसा भिखारीदासजीने लिखा है । जैसा मैंने लिखा है, लक्षण, लक्षण—गोसभगोनरक्रीड़ा है । नाम और उदाहरण सहित ।

S । । S S । । S S । । S S । । S

उदाहरण—धन्य यशोदाहि कही भूतल गो विप्र सबै ।

नन्द बड़ो भाग सही ॥ रक्षणको जन्म जबै ॥

ईश्वर छै जाहि घरै । लीन हरी शैल धरी ।

मानवकी क्रीड़ा करै ॥ माणव क्रीड़ा जु करी ॥

भ त न ग ग

अनुकूला ऽ॥ ऽ॥ ॥॥ ऽ ऽ

जैसा सिखारीदासजीने लिखा है । जैसा मैंने लिखा है, लक्षण,
लक्षण-गो सभ सोगो हरि अनुकूले । नाम और उदाहरण सहित

ऽ ॥ ॽ ॽ ॥ ॥ ॽ ॽ ऽ ॥ ॽ ॽ ॥ ॥ ॽ ॽ

उ०-गोपिहु टुंढो व्रत कत दूजा । भीतिन गंगा जग तुव दाया ।

कूवरहीकी करहु न पूजा ॥ सेवत तोहीं मन बच काया ॥

योग सिखावै मधुकर भूलो । नासहु वेगी मस भव-शूला ।

कूवरहीसों हरि अनुकूलो ॥ ही तुम माता जन अनुकूला ॥

इसी प्रकार और भी जान लो ।

यदि किसीने निम्नाङ्कित वर्णवृत्तका स्वरूप लिखकार पूछा
कि इसमें कौन २ से गण हैं ।

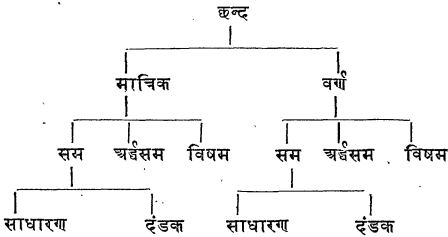
ऽ ॥ ॽ ॽ ॥ ॽ

तो कहना चाहिये कि भगण, तगण और लघु गुरु हैं । यदि
कहो, कि एक गुरु, सगण, भगण और एक गुरु हैं, अथवा एक
भगण, एक गुरु, एक भगण और एक गुरु हैं, अथवा गुरु, लघु,
यगण और सगण हैं, अथवा भगण, दो गुरु और एक सगण हैं-
तो ये सब कथन प्राचीन प्रणालीके विरुद्ध अत्यन्त अशुद्ध और
भ्रमोत्पादक हैं । शुद्ध मत यह है कि वृत्तके आदि अक्षरसे तीन २
अक्षर लेकः गणोंकी गिनती करता जाय, जो शेष वचें वे गुरु
अथवा लघु होंगे ॥

भला कहिये ! ऐसे ग्रन्थोंसे लोगोंको भ्रम क्यों न पैदा हो ।
साधारण न्यायसे भी देखिये, तो यही सिद्ध होता है, कि मात्रिक-

को मात्रिक छन्द और वर्णको वर्णवृत्त ही मानना ठीक है, और मात्रिक छन्दोंका लक्षण मात्रिक प्रधानुसार और वर्णवृत्तका लक्षण वर्णवृत्तकी प्रधानुसार ही कहना ठीक है, अन्यथा नहीं । कई कवियोंने चौपाईके लक्षण दोहेमें अथवा दोहेके लक्षण चौपाई अथवा और २ छन्दोंमें कहे हैं, यह प्रथा भी लाभदायक नहीं । जिसका लक्षण जो हो, उसको उसी वृत्तमें कहना परमोचित है । संस्कृतके पण्डितोंने बहुधा ऐसा ही किया है । इस ग्रन्थमें इन सब बातोंका स्पष्टीकरण तो उचित स्थानोंपर कर ही दिया है, परन्तु यहां भी संक्षेपसे विद्यार्थियोंके ज्ञानार्थ लिखा जाता है ॥

जानना चाहिये कि छन्दोंके मुख्य भाग दो हैं, जो निम्नाङ्कित छन्दावृत्तमें दर्शाये गये हैं ॥



उपरोक्त वृत्तसे जाना गया, कि छन्दोंके मुख्य भेद दो हैं, अर्थात् मात्रिक और वर्ण; फिर इनके उपभेद बहुतसे हैं । उनमेंसे मुख्य २ ऊपर दर्शाये गये हैं । प्रत्येक छन्दकी चार चरण वा पाद

वा पद होते हैं । अब कैसे जाना जाय, कि अमुक छन्द मात्रिक है वा वर्ण ? इस क्षमके निवारणार्थ यह दोहा स्मरण रखना चाहिये ।

दोहा—लघु गुरु चारों चरणमें, क्रमते मिलें समान ।

वर्णवृत्त है अन्यथा, मात्रिक छन्द प्रमान ॥

अर्थात् जिसके चारों चरणमें गुरु लघुका क्रम आदिसे अन्त तक एक समान मिलता जाय, वही वर्णवृत्त है; अन्यथा अर्थात् जिसमें यह क्रम न पाया जाय, वह मात्रिक छन्द कहाता है ॥ यथा:—

S | S | S | S

और काम डारिये ।

राम ना विसारिये ॥

राम राम गाइये ।

राम धाम पाइये ॥

इस छन्दके चारों चरणोंमें गुरु लघुका क्रम एक सा मिलता है, अतएव यह वर्णवृत्त है । अब मात्रिक छन्दका उदाहरण लिखा जाता है ॥

शिव शिव कही । (७ मात्रा)

जो सुख चही ॥ (७ मात्रा)

जो सुमति है । (७ मात्रा)

तो सुगति है ॥ (७ मात्रा)

इस छन्दके चारों चरणोंमें गुरु लघुका क्रम एक सा नहीं मिलता, परन्तु सात २ मात्रा बराबर मिलती हैं; अतएव यह

मात्रिक छन्द है। मात्रा गिननेमें दीर्घाक्षरकी (जिसको गुरु कहते हैं) दो मात्रा और ङ्खाक्षरकी (जिसको लघु कहते हैं) एक मात्रा गिनी जाती है। इनके विशेष भेद ग्रन्थ देखनेसे ज्ञात होंगे ॥

इस ग्रन्थका नियम इस प्रकार रक्खा गया है, कि मंगलाचरणके पश्चात् छन्दकी व्याख्या देकर प्रस्तार सूची आदि मात्रिक प्रत्ययोंका गद्य अर्थात् वाचामें वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् मात्रिक कसमछन्द इसप्रकार लिखे गये हैं, कि जिस छन्दका जो लक्षण और जो नाम है, उसको उसी छन्दकी एक पंक्तिमें देकर उसका उदाहरण अन्य प्रचलित ग्रन्थोंसे लेकर दिया गया है, परन्तु जहां पर निजिष्ठानुकूल उदाहरण नहीं मिले, वहां खरचित उदाहरण दिये गये हैं। लक्षण बहुधा ऐसी रीतिसे रचे गये हैं कि उन्हीं से यति अर्थात् विश्राम मालूम हो सकते हैं, जैसे १५ मात्राओंके किसी छन्दमें ८ और ७ पर विश्राम हुआ, तो यों लिखा गया है “वसु + मुनि” इससे पन्द्रह मात्राका बोध होता है और ८ और ७ पर यतिका भी बोध होता है ॥

मात्रिक समोंमें ३२ मात्राओं तक “साधारण” और इससे अधिक मात्रावाले छन्द “दण्डक” कहाते हैं। मात्रिक दण्डकोंके भी लक्षण एक २ पंक्तिमें देकर उन्हींके नीचे उनके उदाहरण दिये गये हैं ॥

मात्रिक अर्द्धसम—जिन मात्रिक छन्दोंमें विषम अर्थात् पहिले और तीसरे और सम अर्थात् दूसरे और चौथे पद एक से होते हैं, उन्हें मात्रिक अर्द्धसम कहते हैं। उनके लक्षण सम और

विषम पदोंके सम्बन्धसे दो पंक्तियोंमें देकर उन्हींके नीचे उनकी उदाहरण दे दिये गये हैं ॥

विषम—जिन छन्दोंके चारों पद असमान हों उन्हें विषम कहते हैं । ऐसे छन्दोंके लक्षण चारर चरणोंमें वर्णन किये गये हैं ॥

साञ्चिक अर्द्धसप्त वा साञ्चिक विषम किसी आचार्यने पृथक् वर्णन नहीं किये । इस ग्रन्थमें मैंने केवल विद्यार्थियोंकी सुगमताकेलिये पृथक् २ वर्णन किये हैं । और उनकी संख्या जाननेकी रीतें भी जो और किसी ग्रन्थमें नहीं दी हैं, उदाहरण सहित लिख दी हैं ॥

साञ्चिक अर्द्धसप्त और साञ्चिक विषमान्तर्गत आर्या और वैताली छन्दोंका भी संक्षेपसे वर्णन किया गया है ॥

आर्या—भाषामें इस छन्दका प्रयोग बहुधा नहीं पाया जाता, परन्तु इसका ज्ञान होनेके हेतु इसके मुख्य २ भेद कहे हैं ॥

वैताली—यह छन्द भी आर्या छन्दके समान अपने ढंगका निराला ही है । यद्यपि इसका प्रयोग भाषामें बहुत कम है तथापि छन्दःप्रभाकारके पाठकोंको इस विषयसे वंचित रखना अलुचित समझ मैंने इसका भी समास-वर्णन उदाहरण सहित करदिया है ।

इस प्रकार छन्दःप्रभाकारके पूर्वार्द्धमें सम्पूर्ण साञ्चिक छन्दोंका यथावत् वर्णन कर निम्न लिखानुसार इसके उत्तरार्द्धमें वर्णहत्तीका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है ॥

एक वर्णसे लेकर २६ वर्णों तकके समस्त साधारण गाने जाते हैं, उनसे अधिक अक्षरवाले वर्णदण्डका कहते हैं ॥

प्रथम एक वर्णसे लेकर २६ वर्ण तक प्रसार द्वारा 'हत्ती'के

जितने भेद होते हैं वे और उनमेंसे इस ग्रंथमें जितने भेद लिखे गये हैं उन सबका ज्ञापक एक कोष्ठ दिया गया है । इसके पश्चात् वर्णप्रसार वर्णसूची इत्यादि प्रत्ययोंका सोदाहरण विस्तार-पूर्वक गद्यमें वर्णन किया गया है ॥

वर्णसमवृत्तोंके वर्णनमें निम्नलिखित प्रवक्ष्य स्वीकृत किया गया है ।

१—प्रत्येक वृत्तकी व्युत्पत्ति उसी वृत्तमें कही गई है, अर्थात् वही उसका उदाहरण है । प्रत्येक पद्यका अर्थ उसीकी नौचे सरल गद्यमें दिया गया है ॥

२—पिङ्गल ज्ञापक सार्थ अक्षर प्रत्येक वृत्तके आदिमें रक्त्वे गये हैं अर्थात् सम्पूर्ण वर्णवृत्तके आदिमें 'म, न, भ, य, ज, र, स, त, ग, ल' येही वर्ण स्थापित किये गये हैं; इनमेंसे बिना प्रयोजन कोई अक्षर दो बार नहीं आया । इनके नाम और रूप नीचे लिखे जाते हैं—

नाम	रेखारूप	वर्णरूप	लघुसंज्ञा	
सगण	ऽ ऽ ऽ	सागाना	स	माता
नगण	। । ।	नगन	न	नसल
भगण	ऽ । ।	भागन	भ	भानरा
यगण	। ऽ ऽ	यगाना	य	यमेता
जगण	। ऽ ।	जगान	ज	जमान
रगण	ऽ । ऽ	रागना	र	राजभा
सगण	। । ऽ	सगना	स	सलग
तगण	ऽ ऽ ।	तागान	त	ताराज
गुरु	ऽ	गा	ग	
लघु	।	ल	ल	

य मा ता रा ज भा न स ल गं — पं. मधुसूदन जीकृतसूत्र ।

जैसे कोई वृत्त एक नगण और एक यगण रखनेसे बनता है, तो उसकी रचनामें यह ध्यान रक्खा गया है कि 'न य' की पश्चात् फिर दस अक्षरोंसे कोई भी अक्षर न आवे कि जिससे विद्यार्थियोंको भ्रान्ति हो । प्रत्येक गण तीन २ अक्षरोंका होता है । यदि कोई वृत्त सात वर्णोंवा हुआ, तो उसके अन्तमें एक गुरु वा एक लघु अवश्य होगा । इसी प्रकार कोई आठ अक्षरोंका हुआ तो उसके अन्तमें दो गुरु वा दो लघु, वा एक गुरु और एक लघु वा एक लघु और एक गुरु होगा अर्थात् वर्णवृत्तोंमें जब गुरु लघु गिने जायँगे, तब अन्तमें ही गिने जायँगे । इस कारण लक्षणके वर्णनमें उपरोक्त आठ गणाक्षरोंसे जहांतक कोई अक्षर मिले वहीं तक उसका लक्षण समझना, उसके परे कोई भी अक्षर हो उसे गणसूचक नहीं समझना चाहिये । जैसे कोई वृत्त रगण जगण गुरु और लघुके विन्याससे बनता है तो यों लिखा गया है 'रजगल' अब लकारके पश्चात् यदि (स) वा (न) आवे तो भी उक्त नियमानुसार उसे सगण वा नगण सूचक नहीं समझना चाहिये क्योंकि 'ग' अथवा 'ल' अन्तमें ही रक्खे जाते हैं । कहीं २ प्रथमाक्षरके पश्चात् फिर ये वा सांकेतिक शब्द आये हैं और उनसे गण नहीं निकलते तो उन्हें वहां संख्यासूचक समझना चाहिये । जैसे 'भा सत'—'भा' इस वर्णसे भगणका बोध अवश्य ही होगा, परन्तु यदि (स) से सगण और (त) से तगणका बोध न हो तो (सत) से सात संख्याका बोध मानना चाहिये, अर्थात् सात भगण ॥

३—पद्याद्य पिङ्गल सूचक अक्षरोंसे केवल पिङ्गलके गणोंका ही बोध नहीं होता, वरन अन्यार्थ भी प्रकाशित होता है, जिसमें विशेषकर ईश्वरभजन वा कोई सुन्दर उपदेश पाया जाता है। यदि किञ्चिन्मात्र कहीं शृङ्गार भी आया है तो जहाँतक वनपड़ा मर्यादा सहित ही रक्खा गया है ॥

४—जिस वृत्तका जो नाम है वह उसी वृत्तमें निकलता है और वह सार्थक रक्खा गया है। किसी २ कविने छन्दकी संज्ञा-में भी पर्यायवाची शब्दोंका प्रयोग किया है। जैसे मानवक्रीड़ाके वदले नरक्रीड़ा, मृगीके वदले हरिणी इत्यादि। यह प्रथा ठीक नहीं और भ्रमकारक है ॥

५—कहीं २ मैने किसी वृत्तके लक्षण भिन्न २ रीतिसे उसी एक वृत्तमें दो बार कहे हैं वे ऐसे वृत्त हैं जिनमें क्रमपूर्वक आदिसे अन्त तक गुरु लघु वा लघु गुरु वर्णोंका नियम है ॥

अब उक्त पांचों बातोंका स्पष्टीकरण नीचे उदाहरणोंके द्वारा किया जाता है।

स्रग्विणी (र र र र)

५ १ ५ ५ १ ५ ५ १ ५

राररी राधिका श्यामसों क्यों करै ।

सौख मो मानले मान काहे धरै ॥

चित्तमें सुन्दरी क्रोध ना आनिये ।

स्रग्विणी मूर्त्तिको कृष्णकी धारिये ॥

टीका—किसी सखीकी उक्ति राधिका प्रति—

अरी राधिका ! श्रीकृष्णसे रार क्यों करती है ? और (व्यर्थ)

मानको क्यों धारण करती है ? हे सुन्दरी ! निज हृदयमें वृषित न होकर मेरी शिक्षाको स्वीकृत रक और निज चिन्तमें श्रीहृष्याकी माला पहिरीहुई मूर्त्तिकी धारण कर । यह 'र र र र' का स्रग्विणी वृत्त है ॥

यह स्रग्विणी वृत्त है । इसमें चार रगण होते हैं, सो इस स्रग्विणी वृत्तके लक्षण स्रग्विणी वृत्तहीमें दर्शित किये गये हैं अर्थात् वही उसका उदाहरण है । इस कथन-प्रणालीका यही अभिप्राय है कि छन्दःप्रभाकरके पाठकोंको लक्षण और उदाहरण-केलिये दो बातें याद न करनी पड़ें, एकहीसे सब काम निकलें ॥

इस वृत्तके आदिमें 'रार री रा' रकार चतुष्टयकी योजना की गई है सो येही इस वृत्तके पिङ्गल ज्ञापक अक्षर हैं । इसकी रचनामें विद्यार्थियोंके भ्रमोच्छेदनार्थ उक्त नियमोंमेंसे दूसरे नियमानुसार पिंगल सूचक रकार चतुष्टयके पश्चात् मनभयादि दशाक्षरोंसे भिन्न धकार रक्खा है । इस धकारके पश्चात् आनेवाले अक्षर मनभयादिकोंमेंसे होने पर भी पिंगल सूचक नहीं माने जा सकते हैं । इसी प्रकार अन्य वृत्तोंमें भी समझलो ॥ (२)

'राररीरा' इस रकार चतुष्टयसे केवल चार रगणोंका ही बोध नहीं होता किन्तु अन्यार्थ भी प्रकाशित होता है ॥ (३)

स्रग्विणी इस वृत्तकी संज्ञा है और पद्यस्थ श्रीकृष्णकी मूर्त्तिका विशेषणभी है ॥ (४)

प्रमाणिका (ज र ल ग)

। १ । १ । १ । १ । १

जरा लगाय चित्तहीं ।

भजो जु नन्द नन्दहीं ॥

प्रमाणिका हिये गही ।

जु पार भी लगा चही ॥

टीका—यदि संसार पार होना चाहते हो, तो जरा चित्त लगाकर नन्दजीके नन्दनको भजो । इस हमारी उक्तिकी प्रमाणिका जानकर हिये गही अर्थात् निज हृदयपटलपर अङ्कित कर-लो । इस वृत्तमें इस वृत्तकी व्युत्पत्ति भिन्न २ रीतिसे दो बार कही गई है । यथा—

(१) जरा लगा—अर्थात् जगण, रगण, लघु और गुरुका प्रमा-
णिका वृत्त है ॥

(२) लगा चही—अर्थात् आदिसे अन्त तक क्रमपूर्वक लघु गुरु
चार बार आनेसे प्रमाणिका वृत्त बनता है । (५)

इस प्रकार सम्पूर्ण समवृत्तोंका वर्णन करनेकी पश्चात् वर्णद-
ण्डकोंका भी वर्णन समवृत्तोंकी भांति ही किया गया है, परन्तु
इनमें विलक्षणता इतनी ही है कि इनका वर्णन मात्रिक [सम-
छन्दोंकी समान एक पंक्तिमें किया गया है, और इनकी उदाहरण
अन्य प्रचलित सदृश्योंसे लेकर लिखे गये हैं । वर्णवृत्तोंकी नामकी
आगे जो कहीं २ संख्यायें दी हैं वे यति सूचक हैं ॥

वर्णार्द्धसम और विषम—इन वृत्तोंका वर्णन कुछ २ वैतालीय
न्दकोंके समान गद्यमें ही किया है, क्योंकि इनका प्रचार
भाषामें बहुत कम है ॥

ग्रन्थभरमें विशेष ध्यान इस बात पर भी दिया गया है, कि
प्रत्येक छन्द क्या मात्रिक क्या वर्ण स्वतन्त्र रचा गया है । अन्य

छन्दोद्यन्यकर्त्ताओंके समान मैंने कोई छंद वा वृत्त परतन्त्र नहीं रचा है । जैसे भिखारीदासजीने लिखा है—

(कन्द)

अन्ते भुजंगप्रयातके लघु इक दीने कन्द ।

प्रथम तो कन्द वृत्तका लक्षण दोहेमें कहा गया है, उसमें भी यह, कि भुजंगप्रयातके अन्तमें एक लघु देनेसे कन्द वृत्त बनता है । अब विद्यार्थीको यह खोज हुई, कि भुजंगप्रयात किसको कहते हैं, क्योंकि वह इस लक्षणसे तो कुछ ज्ञात ही नहीं होता । जब भुजंगप्रयातका लक्षण जाना जाय, तब उसके अन्तमें एक लघु रखनेसे कन्द वृत्त रचा जाय । इसीको मैंने इस प्रकार लिखा है—

(कन्द)

यचौ लाइकै चित्त आनन्दकन्दारिहे ।

टीका—चित्त लगाकर आनन्दकन्द परसेपुत्रसे याचना करो ॥

पिंगलार्थ—‘यचौ’ = यगण चार । ‘लाइकै’ = लघु एक ॥

इसमें लक्षण, नाम और उदाहरण सब एक ही स्थानमें पाये गये । पूर्णदाहरण ग्रन्थमें यथास्थानपर देखो ॥

मेरा अभिप्राय प्राचीन कवियोंको दूषण देनेका कदापि नहीं है उन्होंने जो अपने समयमें किया वही उनकोलिये परस प्रशंसीय था, परन्तु अब वह समय न रहा, अतएव उन ग्रन्थोंसे आजकल, जैसा चाहिये वैसा लाभ होनेका सम्भव नहीं है ॥

धन्य है श्रीमत् पिङ्गलाचार्यजी महाराजको, जिन्होंने यह छन्दःशास्त्र हमलोगोंके कल्याणार्थ निर्माण किया है, कि जिसके

द्वारा हम सब प्रेमपूर्वक ईश्वरका गान और भजन करके सहजमें धर्म अर्थ काम और मोक्षकी प्राप्ति कर सकते हैं । कोषमें 'पिंगल' शब्दका अर्थ सर्प भी है, अतएव लोग इन्हें फणि, अहि और मुजंगादि नामोंसे परिचित कराते हैं और इनकी शेषजीका अवतार मानते हैं । यथार्थमें ये बड़े भारी महर्षि हो गये हैं ॥

इस छन्दस्वागरका पारावार नहीं है, इसमें ज्यों २ छुवकी लगाओ त्यों २ एकसे एक असूख्य रत्न हाथ आते हैं । जो छन्द प्रकट नहीं है, वे सब 'गाथा' कहते हैं । बहुतसे सत्कवियोंने नानाप्रकारके छन्द अपने २ मनीष्यसे रचकर उनके भिन्न २ नाम रखे हैं, वे सब आदरणीय ही हैं, क्योंकि प्रसारकी रीतिसे अनेक छन्द निकल सकते हैं । और पात्रोंको ही नूतन छन्द रचकर उसके नाम रखनेका अधिकार है, अन्यको नहीं । और पात्र वेही हैं, जो छन्दोंके लक्षणोंको भली भांति समझते समझाते, पढ़ते और पढ़ाते हैं, परन्तु जो नाम एक वार किसी कविने किसी छन्दका रख दिया है दूसरेको उचित है कि उसका आदर करके उस नामको न पलटे । इससे केवल भ्रम उत्पन्न होता है, और लाभ कुछ नहीं ॥

जिस छन्दका जो नाम प्राचीन सत्कवि रख गये हैं, उसका वही नाम रहना चाहिये । जैसे किसी व्यक्ति विशेषका नाम 'सुन्दर' है तो उसे 'सुभग' नामसे पुकारनेमें वह कदापि उत्तर न देगा, यद्यपि सुन्दर और सुभग दोनोंका अर्थ एकही है, परन्तु संज्ञामें भेद है । वैसे ही 'भानु' जिस आदमीका नाम है, उसे 'रवि' कहकर पुकारना ठीक नहीं । हां भानुसे यदि सूर्यका बोध

ग्रहण करना है, तो उसे सूर्य्यबोधक चाहे जिस शब्दसे प्रकाशित कर सकते हैं। मैंने अपने ग्रन्थमें भ्रमनिवारणार्थ जितने भिन्न २ नाम जिन २ छन्दोंके कवियोंने अलग २ कहे हैं वे यथा सम्भव एकत्रित किये हैं। परन्तु छन्दमें बहुधा वही नाम रक्खा है जो विशेष प्रचलित है ॥

आप सब सज्जनोंसे मेरा अन्तिम निवेदन यह है, कि एक वार इस ग्रन्थको आद्योपान्त अवश्य पढ़ जाइये। इसके पश्चात् यदि काव्य करनेकी रुचि उत्पन्न हो तो देव-काव्य कीजिये, क्योंकि उसमें यदि कोई दग्धाक्षर अथवा गणागणका दोष भी पड़ जायगा, तो दोष न माना जायगा, परन्तु नरकाव्य न कीजिये। यदि करनेकी इच्छा ही हो, तो पूर्ण सावधानीसे नियमपूर्वक कीजिये क्योंकि नरकाव्यमें गणागण इत्यादिका महादोष है ॥

जो लोग समझते हैं कि उर्दू अथवा फ़ारसीके समान ललित छन्द ब्रजभाषामें नहीं पाये जाते वे निष्पन्नपात होकर इस छन्दः-प्रभाकरको सननपूर्वक अवलोकन करेंगे तो निश्चन्देह उक्त सिद्ध्या भ्रमसे मुक्त होकर भाषाकी पूर्णताका पूरा अनुभव करसकेंगे ॥

मैं गुणग्राही सज्जन महाशयोंसे यह भी आशा रखताहूँ कि वे कृपादृष्टिसे इस ग्रन्थका स्वीकार करके इससे लाभ उठावेंगे, और मेरे परिश्रमको सफल करके मुझे कृतकृत्य करेंगे, और यदि अपने सन्तानोंको अल्पावस्थासे ही इसका अभ्यास कराते रहेंगे तो वर्षोंकी विद्या अल्पकालमें अल्प परिश्रमसे ही प्राप्त हो जायगी। परमेश्वरकी कृपासे यदि इसका प्रचार यथोचित रीतिसे होजा-

यगा, तो क्या आश्चर्य है कि फिर “एक दिना नहिं एक दिना कवहूँ फिर वे दिन फेर फिरेंगे” अर्थात् फिर एक दिन वही समय दृष्टिगोचर होगा जो श्रीमान् भोजनरेश और श्रीमद्गुसाईं तुलसीदासजी, श्रीवावासूरदासजी तथा श्रीकेशवदासजी प्रभृति सत्त्वियोंके जीवितकालमें था कि जिस समय घर २ कवि विराजमान थे और मनोवांछित फल पाते थे ॥

अब सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरसे इस अल्पमतिकी वारम्बार यही प्रार्थना है, कि हे परमात्मन् ! ऐसी कृपा कीजिये कि जिससे देशदेशान्तरोंमें पिङ्गलका प्रचार होकर छन्दःशास्त्रका शुद्ध ज्ञान सब लोगोंको भली भांति प्राप्त हो जावे, और सब लोगोंके हृदयमें सत्काव्य रचनेकी अभिरुचि उत्पन्न हो, जिससे आपके ही भजनमें नित्य मग्न रहकर अपना २ जन्म सफल करें, और अन्तमें परसपदको प्राप्त हों ॥

अन्तमें श्रीयुत पण्डित गङ्गाप्रसादजी अग्निहोत्री नागपुरनिवासीको जिन्होंने इस ग्रन्थके शोधनेमें तथा श्रीयुत पण्डित हीरालालजी मिश्रको जिन्होंने इस ग्रन्थको सावधानीसे लिखनेमें मुझे सहायता दी है अनेकानेक धन्यवाद देकर भूमिका समाप्त करता हूँ ॥

वर्धा
मध्यप्रदेश
चैत्र शुद्धा ६ १९५०

जगन्नाथप्रसाद



ओ३म्

अथ छन्दःप्रभाकरो लिख्यते ।

दोहा ।

श्रीगणपति-शारद-चरण, वन्दौं मन वच काय ।
विघ्न अविद्या जाहितें, तुरतहिं जात नसाय ॥

सोरठा ।

देहु जु पिंगलराय, बुद्धि सु छन्द प्रबन्धकी ।
अब में सहज सुभाय, छन्दप्रभाकर कहतु हौं ॥

छन्दका लक्षण ।

मात्रा, वर्णकी रचना, विराम, गतिका नियम और चरणान्तमें समता जिस कवितामें पाई जाती है उसे 'छन्द' कहते हैं ।

छन्द दो प्रकारके होते हैं एक 'मात्रिक' अथवा 'जाति' और दूसरा 'वर्णवृत्त'

मात्रिक छन्द और वर्णवृत्तकी पहिचान ।

दोहा—लघु गुरु चारों चरणमें, क्रमतें मिलें समान ।

वर्णवृत्त है अन्यथा, मात्रिक छन्द प्रमान ॥

टीका—जिस पद्यके चारों चरणोंमें लघु गुरुका क्रम एक सा मिले उसे 'वर्णवृत्त' कहते हैं, और जिसमें लघु गुरुका क्रम एक सा न हो उसे 'मात्रिक' छन्द कहते हैं ॥

सूचना—संस्कृतमें छन्द तीन प्रकारके मानेजाते हैं, यथा, गण-

छन्द (१) मात्रिकछन्द (२) अक्षरछन्द (३) ॥ आर्यांकी गणना गणछन्दमें है, परन्तु भाषामें छन्दके दो ही भेद माने हैं, और आर्यांकी मात्रिकछन्दका उपभेद माना है । यह अनुचित नहीं है । वर्णके उच्चार करनेमें जो समय व्यतीत होता है उसे 'मात्रा' कहते हैं । ऋस वर्णको 'लघु' और दीर्घ और भूतको छन्दःशास्त्रमें 'गुरु' कहते हैं ॥

मात्राके पर्यायवाची शब्द ।

मत्ता, मत्त, कला और कल ।

छन्दके व्यवहारमें ऋसमात्राकी एक संख्या मानी जाती है । यथा, राम, कृष्ण, गोपाल—इन शब्दोंके अंत्याक्षरकी मात्रा लघु है, मात्राकी गणनामें इनकी संख्या एक समझी जायगी । लघु मात्राका संकेत इस (१) ऊर्ध्व रेखाके द्वारा प्रकाशित किया जाता है । 'ल' 'ला' इसके अन्य नाम हैं ।

गुरु मात्राकी संख्या दो गिनी जाती है । यथा—हरी, रमा, दया, इन शब्दोंके अंत्याक्षरकी मात्रा गुरु है । इसका संकेत ऐसी (५) वक्र रेखाके द्वारा लिखा जाता है । 'ग,' 'गी,' 'गो,' 'गा' इत्यादि इसके अन्य नाम हैं ।

भाषामें शब्दोंके अन्तमें 'ऋ' और 'ऌ' देखनेमें नहीं आते । अनुस्वार और विसर्गकी भी दो मात्रा मानी जाती हैं । यथा—इंद्र और दुःख-इंद्रकी इकार पर अनुस्वार है और दुःख शब्दके 'दु' के आगे विसर्ग है, इसलिये 'इं' वा 'दुः' की दो दो मात्रा गिनी जायँगी ॥

भाषा-काव्यमें संयोगी अक्षरकी आदिका लघु स्वर कहीं लघु और कहीं गुरु माना जाता है । जहां गुरु माना जाता है, वहां उसकी दो मात्रा गिनी जाती हैं । और जहां लघु माना जाता है वहां उसकी एक मात्रा गिनी जाती है । यथा, लघुका उदाहरण—

शरद् जुन्हैया मोदप्रद करत कन्हैया रास ।

इस दोहाईमें 'जुन्हैया' और 'कन्हैया' शब्दोंमें नकार और हकारका संयोग है, परन्तु इन शब्दोंमें जकारकी उकारकी मात्रा और ककारकी अकारकी मात्रा लघु गिनी जाती है और उसकी संख्या भी एक गिनी जाती है, कारण इसका यह है कि 'जु' अथवा 'क' में गुरुत्व नहीं पड़ा—गुरुका उदाहरण—

द्वित्व वर्ण जहँ आदिको लघु सोऊ गुरु होत ।

इस दोहाईमें 'द्वित्व' शब्दमें तकार और वकारका योग है इसलिये इसके आद्यक्षर 'द्वि' की मात्रा गुरु पढ़ी जाती है और संख्या भी दो गिनी जायगी ॥

ध्यान इस बात पर रखना चाहिये कि संयोगीके आदिका लघु वही गुरु माना जाता है जहां उसे गुरुत्व प्राप्त होता है, यदि गुरुत्व न प्राप्त हो तो लघु ही माना जायगा ॥

छन्दकी शुद्धताकेअर्थ कविलोग कभी २ हल्को सस्वर और दीर्घको ऋस्व और ऌस्वको दीर्घ मानलिते हैं; यथा, 'विघ्न' का 'विघन' और 'सीय' का 'सिय' वा 'हरि' का 'हरी' इत्यादि ॥

इसी प्रकार यमकालङ्कार अथच छन्दशुद्धताकेअर्थ कविलोग

यदाकदा व्याकरणकी भी उपेक्षा कर निजिष्ट सम्पादित करते हैं;
यथा, संस्कृतभाषायाम्—

स्फुटाङ्गारवद्गां खुरैः स्पर्शयन्तो
रटन्तो नटन्तो भटन्तोषयन्तः ।
कुरङ्गा इवाङ्गानि सङ्कोचयन्त-
स्सुरङ्गास्तुरङ्गाः पुरङ्गाहयन्ति ॥

इस पद्यके पूर्वार्द्धमें निजिष्टसिद्धार्थं शुद्ध रूप 'भटान्'के स्थान-
में 'भटम्' लिखा है । इसकेलिये प्रमाण भी है—(अपि मापं मपं
कुर्याच्छन्दोभंगन्नकारयेत्) इसी प्रकार भाषामें भी जानो ॥

राम करों केहिं भाँति प्रशंसा ।
मुनि-महेश-मन-मानस-हंसा ॥

इस चौपाईकी अर्धालीमें सोलह मात्रा पूर्ण होनेकीहेतु पर-
मभागवत श्रीगोस्वामी तुलसीदासजीने स्वसंकलित भाषाके अ-
द्वितीय काव्य रामायणमें 'हंस' के स्थानमें 'हंसा' लिखा है ॥

वर्णका गुरुत्व अथवा लघुत्व उसके उच्चारण पर निर्भर है, जैसा
इस दोहेसे सिद्ध होता है ।

दीर्घ हू लघु कर पढ़ै, लघु हू दीर्घ जान ।
मुखसों प्रगटै मुखसहित, कौविद करत वखान ॥

अथ शुभाशुभदग्धाक्षरप्रकरणम् ।

काविजन काव्यरचना करते समय अक्षरोंके शुभाशुभ फलपर
अवश्य ध्यान देते हैं ॥

शुभाक्षर

अशुभाक्षर

क ख ग घ च छ ज
ड ढ ध न य श स
ञ

ड भ ज ट ठ ढ ण त थ
प फ व भ म र ल व ष
ह

इन १६ अशुभाक्षरोंमेंसे भी भाषाकवियोंने पांच अक्षर सुख्य चुनलिये हैं जो अति वर्जनीय हैं और दग्धाक्षर कहाते हैं वे ये हैं 'भ ह र भ ष' पदके आदिमें इनका रखना महादोष है। किसी र कविने 'त' को शुभ और 'घ' 'ध' और 'न' को अशुभ मान लिया है, परन्तु बहुमत न होनेके कारण यह प्रमाणिक नहीं। 'ख' और 'न' को दग्धाक्षर मानना वड़ी भूल है। यथार्थमें 'ष' और 'ण' दग्धाक्षर हैं। निम्नलिखित दोहे स्मरण रखनेके योग्य हैं।

दीजो भूल न छन्दके, आदि 'झ ह र भ ष' कोय ।
दग्धाक्षरके दोषते, छन्द दोषयुत होय ॥

भाषा छन्दोमञ्जरी ।

मङ्गल सुरवाचक शब्द, गुरु होवे पुनि आदि ।
दग्धाक्षरको दोष नहिं अरु गण दोषहुँ वादि ॥

छन्दके आदिमें 'भ ह र भ ष' इन अक्षरोंको न रखे, यदि रखे तो गुरु कर दे अथवा सुर वा मंगलवाची शब्द रखे; ऐसा करनेसे दग्धाक्षरका दोष मिट जाता है। सुर और मंगलवाची-शब्द आदिमें रखनेसे मात्रिक छन्दोंमें जगण; रगण, सगण और

। ५ । ५ । ५ । ५

तगणका दोष भी मिट जाता है ॥ (वर्णवृत्तके प्रकारमें इसका ५ ५ । स्पष्टीकरण देखो)

खर जिनको संस्कृतमें 'अच्' कहते हैं, सब शुभ हैं, उनमेंसे 'अ इ उ ऋ' लघु और 'आ ई ऊ ए ऐ ओ औ अं अः' गुरु माने जाते हैं ॥ और ऋ लृ का प्रयोग भाषामें प्रायः नहीं होता । इसके कुछ उदाहरण नीचे लिखे हैं ।

**दोहा—हरिसे ठाकुर परिहरे, और देव मन लाय ।
सो नर पार न पावहीं, जन्म जन्म भरमाय ॥**

इसके आदिमें हकार दग्धाक्षर है, परन्तु सुरवाची हरि शब्दके आदिमें होनेके कारण दूषणरहित है ॥

**दोहा—झारखण्डमें बसत हैं, वैजनाथ भगवान ।
भुकि २ तिनकी झलकको, देव करै नित गान ॥**

इसके आदिमें झकार दग्धाक्षर है, परन्तु दीर्घाक्षर होनेसे निर्दीष है । इस दोहेके प्रथम पादमें 'डमेंब' जगण है परन्तु सुरवाची होनेके कारण अदूषित है । इसी प्रकार और भी जानी।

प्रत्ययोंका वर्णन ।

जिनके द्वारा नाना प्रकारके छन्दोंके विचार और संख्यादिक प्रकाशित हों उन्हें प्रत्यय कहते हैं । सम्पूर्ण छन्दःशास्त्रमें ९ प्रत्यय हैं उनके नाम ये हैं । प्रस्तार १, सूची २, पाताल ३, उद्दिष्ट ४, नष्ट ५, मेख ६, खंडमेख ७, पताका ८ और सईटी ९ ॥

१ प्रस्तार ।

जितनी मात्राके जितने भेद हो सकते हैं उनकी रूपोंके दिखा देनेके ही प्रस्तार कहते हैं ॥

साच्चिक प्रस्तारकी दो भेद हैं—एक विषमकल और दूसरा समकल—१, ३, ५, ७, ९ आदि सात्राओंकी 'विषम' और २, ४, ६, ८, १० आदि सात्राओंकी 'समकल' कहते हैं ॥

विषमकलके प्रस्तारमें प्रथम ऋक्ष सात्राका रूप अर्थात् सरल (१) रेखाका प्रयोग करते हैं—फिर शेष सात्राओंके स्थानमें दीर्घ सात्राका रूप (५) बन्न रेखा स्थापित करते हैं; जैसे, पांच सात्राओंका प्रथम भेद यों लिखा जायगा (१ ५ ५)

समकलके प्रस्तारमें सात्रासंख्याके प्रमाणके तुल्य दीर्घ सात्राका प्रयोग किया जाता है, जैसे छः सात्राओंका प्रथम भेद यों लिखा जायगा (५ः ५ ५)

प्रस्तार बढ़ानेकी रीति ।

जितनी सात्राके छन्दके प्रस्तारको बढ़ाना हो उतनी ही सात्राके प्रथम प्रस्तारके भेदको लिखा, पश्चात् दीर्घ सात्राके संकेतके नीचे ऋक्ष सात्राके संकेतको स्थापित कर दाहिनी ओरकी सब सात्रा ज्यों की त्यों नीचे लिखलो, पुनः सात्राकी संख्याको पूर्ण करनेके हेतु वार्द्ध ओरको आवश्यकतानुसार गुरु और लघु सात्राके सहित लिखा और स्मरण रखो कि वार्द्ध ओरके दीर्घके नीचेसे अथवा जिसमें एक ही दीर्घ हो तो उसीके नीचेसे उक्त रीतिसे लिखना प्रारम्भ करो, यह क्रिया वहां तक करो कि जहां तक अन्तका सर्वलघु भेद न आजाय ॥

विद्यार्थियोंके बोधार्थ उक्तरीतिका छः सात्राओंके प्रस्तार तक उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण किया जाता है ॥

१ सात्राचीका प्रस्तार (विप्रसकल)	पांच सात्राचीका प्रस्तार (विप्रसकल)
१ पहिला भेद	१५५ पहिला भेद
१	५१५ दूसरा भेद
२ सात्राचीका प्रस्तार (ससकल)	१११५ तीसरा भेद
५ पहिला भेद	५५१ चौथा भेद
११ दूसरा भेद	११५१ पांचवां भेद
२	१५११ छठवां भेद
३ सात्राचीका प्रस्तार (विप्रसकल)	५१११ सातवां भेद
१५ पहिला भेद	१११११ आठवां भेद
५१ दूसरा भेद	८
१११ तीसरा भेद	६ सात्राचीका प्रस्तार (ससकल)
३	५५५ पहिला भेद
४ सात्राचीका प्रस्तार (ससकल)	११५५ दूसरा भेद
५५ पहिला भेद	१५१५ तीसरा भेद
११५ दूसरा भेद	५११५ चौथा भेद
१५१ तीसरा भेद	११११५ पांचवां भेद
५११ चौथा भेद	१५५१ छठवां भेद
११११ पांचवां भेद	५१५१ सातवां भेद
५	१११५१ आठवां भेद
	५५११ नवां भेद
	११५११ दसवां भेद
	१५१११ ग्यारवां भेद
	५११११ बारवां भेद
	११११११ तेरवां भेद

यदि कोई पूछे कि “तुमने छः मात्राओंके प्रस्तारका ग्यारहवां भेद किस प्रकार लिखा” ? तो उक्त नियमानुसार उत्तर देना चाहिये । देखा’ दसवां भेद (॥ ५ ॥) ऐसा है । अर्थात्—

१ २ ३ ४ ५ स्थान
 । । ५ । । १० वां भेद
 । ५ । । । ११ वां भेद

ग्यारहवां भेद इस प्रकार भरा गया कि दसवें भेदके तीसरे स्थानमें जो गुरु है प्रथम उसके नीचे लघु लिखा, फिर चौथे स्थानमें लघुके नीचे लघु लिखा, फिर पांचवें स्थानमें लघुके नीचे लघु लिखा, अब दाहिनी ओरके तीनों स्थान भरगये, परन्तु मात्रा तीनही हुईं—अब तीन मात्रा और बाकी रहीं तो जिस तीसरे स्थानसे पूर्ति आरम्भ की थी उसकी बाईं ओर जो दूसरा स्थान है उसके नीचे शेष तीन मात्राओंमेंसे नियमानुसार प्रथम एक गुरु रक्खा, अब एक मात्रा और बची वह दूसरे स्थानकी बाईं ओर अर्थात् प्रथम स्थानके नीचे रक्खी गई । स्मरण रक्खो कि जिस स्थानसे क्रमपूर्वक दाहिनी ओरकी पूर्ति करते हो उसी स्थानसे क्रमपूर्वक बाईं ओरकी पूर्ति करो ॥

इस प्रस्तारके स्पष्टीकरण द्वारा जाना गया कि १ मात्राके छन्दका १ भेद दो मात्राओंके छन्दके दो भेद, तीन मात्राओंके छन्दके ३ भेद, चार मात्राओंके छन्दके ५ भेद, पांच मात्राओंके छन्दके ८ भेद और ६ मात्राओंके छन्दके १३ भेद होते हैं। इनसे अधिक नहीं होते ॥

मात्रिक छन्दोंकी संख्याका कोष्ठक

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
भेदसंख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८६

यदि ग्यारह मात्राके छन्दकी संख्या जाननी हो तो १० मात्राओंकी छन्दसंख्याको ९ मात्राओंकी छन्दसंख्यामें जोड़ देनेसे ग्यारह मात्राओंकी छन्दसंख्या जानी जायगी । इसी प्रकार ११ मात्राओंकी छन्दसंख्याको १० मात्राओंकी छन्दसंख्यामें जोड़नेसे १२ मात्राओंकी छन्दसंख्या सिद्ध होगी । इससे यह जाना गया कि पीछेकी दो संख्याओंके जोड़नेसे आगेकी संख्या बन जाती है । इहीं छन्दाङ्गोंकी संख्याओंको 'सूचीअङ्क' अथवा 'उद्दिष्टाङ्क' कहते हैं ॥

२ सूची ।

जिसके द्वारा मात्रिक छन्दोंकी संख्याकी शुद्धता और उनके भेदोंमें आदि अन्त लघु वा आदि अन्त गुरुकी संख्या सूचित होती है, उसको सूची कहते हैं ॥

रीति ।

जितनी मात्राके छन्दकी सूची देखनी हो उतनी ही छन्दकी संख्या सूची अङ्कको क्रमसे लिखो । अब जो अन्तका अङ्क है वही मात्रिक छन्द अर्थात् कल्पित छन्दकी शुद्ध संख्या है । और उस संख्याके वाईं ओरके दूसरे अङ्ककी संख्याके तुल्य आदिमें और अन्तमें लघु मात्रा हैं और उसके वाईं ओरके अर्थात् तीसरे अङ्कके

समान आदि और अन्तमें गुरु मात्रा हैं और इसी तीसरे अंकके समान आद्यन्त लघु हैं, और इसके बाईं ओरके दूसरे अर्थात् अंत अंकसे पांचवें अंकके समान आद्यंत गुरु हैं । विद्यार्थियोंके बो-
धार्थ आगे आठ मात्राओंतककी सूची लिखी जाती है । एक मात्राकी सूची नहीं होती ॥

	आदि लघु अंत लघु	छन्दसंख्या	(१) 5
२ मात्राकी सूची	१	२	(२) ॥

	आदिगुरु अन्तगुरु	आदि लघु अन्त लघु	छन्द संख्या	(१) 15 (२) 51 (३) 111
३ मात्राकी सूची	१	२	३	
	आद्यन्त लघु			

	आदि गुरु अन्त गुरु	आदि लघु अन्त लघु	छन्द- संख्या	(१) 55 (२) 115 (३) 151 (४) 511 (५) 111
४ मात्राकी सूची	१	२	३	५
	आद्यन्तलघु			

			आदिगुरु अन्तगुरु	आदिलघु अन्तलघु	छन्द संख्या	(१) 155 (२) 515 (३) 1115 (४) 551 (५) 1151 (६) 1511 (७) 5111 (८) 11111	
५ सात्राकी सूची	१	२	३	५	८		
	आद्यं तगुरु		आद्यन्त लघु				
			आदिगुरु अन्तगुरु	आदिलघु अन्तलघु	छन्द संख्या	(१) 555 (२) 1155 (३) 1515 (४) 5115 (५) 11115 (६) 1551 (७) 5151 (८) 11151 (९) 5511 (१०) 11511 (११) 15111 (१२) 51111 (१३) 111111	
६ सात्राकी सूची	१	२	३	५	८	१३	
		आद्यंतगुरु		आद्यंतलघु			
			आदिगुरु अन्तगुरु	आदिलघु अन्तलघु	छन्द- संख्या		
७ सात्राकी सूची	१	२	३	५	८	१३	२१
			आद्यन्तगुरु		आद्यन्तलघु		

		आदिगुरु	आदिलघु	छन्द				
		अन्तगुरु	अन्तलघु	संख्या				
८ मात्राकी सूची	१	२	३	५	८	१३	२१	३४
		आद्यन्त- गुरु	आद्यन्त- लघु					

शीघ्र समझमें आनेकेहेतु १ से ६ मात्रातककी सूचियोंके आगे प्रस्तारके चिह्न भी लिख दिये हैं । ६ मात्राओंकी सूचीसे जाना गया कि ६ मात्राके कुल १३ छन्द बन सकते हैं । उनमेंसे ८ छन्द ऐसे आन पड़ेंगे कि जिनके आदिमें लघु हैं । और ८ ऐसे आनपड़ेंगे जिनके अन्तमें लघु हैं । ५ छन्द ऐसे होंगे जिनके आदिमें गुरु और ५ ही छन्द ऐसे होंगे जिनके अन्तमें गुरु हैं । और ५ ही छन्द ऐसे निकलेंगे जिनके आदिमें और अन्तमें भी लघु हैं और २ छन्द ऐसे होंगे जिनके आदिमें और अन्तमें भी गुरु हैं । इसी प्रकार और भी जानलो ॥

३ पाताल

प्रत्येक मात्रिक छन्दके भेद अर्थात् उसकी संख्याका ज्ञान, लघु, गुरु, सम्पूर्ण कला, वर्ण वा पिण्ड आदिके जाननेको पाताल कहते हैं ॥

रीति

जितनी मात्राका पाताल बनाना हो उतनी ही ऊर्ध्व रेखा

खींचो, पुनः एक रेखा पातालकी शोभाकेलिये और खींचो और चार रेखा तिरछी खींचो जिससे कि कोष्ठ बन जावे । फिर पहिले कोष्ठमें १, दूसरेमें २, तीसरेमें ३ आदि अंक लिखो । फिर दूसरे कोष्ठमें सूचीके अंक लिखो, फिर तीसरे कोष्ठमें इस प्रकार अंक लिखो कि पहिलेमें १, दूसरेमें २, और तीसरेमें पिछले दो अंक और दूसरे कोष्ठका शीर्षाङ्क जोड़के लिखो । चौथेमें पिछले दो अंक और तीसरे कोष्ठका शीर्षाङ्क जोड़कर लिखो । पांचवेंमें पिछले दो अंक और चौथे कोष्ठका शीर्षाङ्क जोड़कर लिखो । ऐसा और भी जानो ॥

विद्यार्थियोंके ज्ञानार्थ नीचे ८ सात्राओंका पाताल बनाया जाता है ॥

पातालयंत्र

सात्राओं की संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८
छन्दों की संख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४
लघु गुरु संख्या	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

इस यन्त्रमें ६ सात्राओंके छन्दका प्रसार देखना ही तो ६ अंकोंकी नीचेके कोष्ठमें १३ का अंक है यही ६ सात्राओंके छन्दकी सम्पूर्ण संख्या है । १३ को नीचे ३८ का अंक है यही ६ सात्राके सम्पूर्ण छन्दोंकी लघु सात्राओंका ज्ञापक है । ३८ की वाई और

२० का अंक है यही ६ मात्राओंके सम्पूर्ण छन्दोंकी गुरु मात्रा-
का सूचक है। वीसके दूने ४० हुए, चालीस और अड़तीसका
योग अठहत्तर ७८ है। इसलिये ६ मात्राओंके संपूर्ण छन्दोंमें सब
कला ७८ हैं। २० गुरु और ३८ लघु मिलकर ५८ होते हैं इतने ही
वर्ण जानो। ६ मात्राओंके छन्दोंकी संपूर्ण कला ७८ है इसका
आधा ३९ हुआ इसीको पिएड जानो। इसी प्रकार उक्त यन्त्रमें
अन्य मात्राओंका भी निश्चय करलो ॥

४ उद्दिष्ट

कितनी ही मात्राके प्रसारका भेद यदि प्रश्नकर्ता लिखकर
पूछे कि यह कौनसा भेद है तो इसके जाननेको उद्दिष्ट कहते हैं।

रीति

दिये हुए प्रसारके भेदके ऊपर मात्रिक सूचीके अंक इस प्र-
कार लिखो कि लघुके केवल शीर्ष पर और गुरुके शीर्ष और पग
दोनों पर क्रमपूर्वक वे अंक हों। पश्चात् अन्तके अंकमेंसे वाई'
ओरके गुरुके शीर्ष अंकोंका योग ऋण करदो। जो शेष रहे वही
प्रश्नका उत्तर होगा; यथा, किसी प्रश्नकर्ताने पूछा कि ६ मात्राके
छन्दोंमें (5 । 5 ।) यह कौनसा भेद है तो उक्त रीतिसे सूचीके
अंक इस प्रकार लिखो—

१	३	५	१३
५	१	५	१
२		८	

अब अन्तका अंक तिरह है। इस १३ मेंसे वाई' ओरके गुरुके
शीर्षाङ्गोंके योगको अर्थात् ५ और एकके योग ६ को घटाया तो

शेष ७ रहे, इसलिये यह सातवां भेद है। इसकी शुद्धता प्रसारसे देखली ॥

विद्यार्थियोंके ज्ञानार्थ १ मात्रासे ४ मात्रा तकका उद्दिष्ट लिखा जाता है ॥

एक मात्राका उद्दिष्ट

१
।

दो मात्राका उद्दिष्ट

१	१
५	भेद
२	
१ २	२
। ।	भेद

तीन मात्राओं का उद्दिष्ट

१ २	
। ५	१ भेद
३	
१ ३	
५ ।	२ भेद
२	
१ २ ३	
। । ।	३ भेद

चार मात्राओंका उद्दिष्ट

१	३	
५	५	१ भेद
२	५	
१ २ ३		
। । ५		२ भेद
	५	
१ २ ५		
। ५ ।		३ भेद
३		
१ ३ ५		
५ । ।		४ भेद
२		
१ २ ३ ५		
। । । ।		५ भेद

स्मरण रहे कि अन्तका अंक केवल शीर्षही पर नहीं किन्तु पग-
तलमें भी आन पड़ता है; जैसे, चार मात्राओंके छन्दके पहिले
और दूसरे भेदोंमें आया है । जब अन्याङ्क पगतल पर आवे तो
उसीमेंसे घटानेकी क्रिया करनी चाहिये ॥

५ नष्ट

जिसके द्वारा अमुक मात्राके प्रस्तारके अमुक संख्यक भेदका
रूप जानाजाता है उसे नष्ट कहते हैं ॥

रीति

जितनी मात्राके प्रस्तारमें जिस भेदका रूप प्रश्नकर्ता पूछे
उतनी ही लघु मात्रा लिखकर उनके ऊपर सूचीके अंक स्थापित
करो । फिर जो भेद पूछा था उसकी संख्याको अन्याङ्कमेंसे घटा-
दो । जो शेष बचे उसको बड़े छोटेके क्रमसे पूर्वाङ्कोंमेंसे जिन
जिनमें घटानेका सम्भव हो घटाते जाओ ऐसा करनेसे जो अंक
घट जावे उसके नीचेकी मात्रा गुरु करके आगेकी एक लघु
मात्रा मिटादो । जो रूप रहेगा वही प्रश्नकर्ताके प्रश्नका उत्तर
होगा; यथा, यदि प्रश्नकर्ता पूछे कि ६ मात्राके छन्दोंमें सातवें
भेदका रूप कैसा होगा तो उक्त रीतिसे ६ मात्रा ऐसी

१ २ ३ ५ ८ १३ लिखकर उनपर सूचीके अंक लिखो ।
। । । । । । अब ध्यानपूर्वक देखो कि इसका अ-
न्यांक १३ है । प्रश्नकर्ताके भेदके अंकको अर्थात् ७ को १३ मेंसे
घटादो, शेष ६ रहे । अब वाई' ओरको देखो कि ६ मेंसे कौनर

संख्या घट सकती है । पहिले जो अंक घट सकता है वह ५ है तो अब ५ के नीचेकी लघु मात्राको दीर्घ करदी और उसके आगेकी एक लघु मात्रा जो आठके नीचे है मिटादी । अब ६ मेंसे ५ घट गण शेष १ रहा, अब देखो कि शेष १ मेंसे और कौन सा अंक घट सकता है । १ मेंसे केवल १ ही घट सकता है, अतएव १ के नीचेकी लघु मात्रा दीर्घ करदी और उसके आगेकी एक लघु मात्रा जो २ के नीचे है मिटादी, तो अब रूप ऐसा हो जायगा ॥

१	२	३	५	८	१३	
।	।	।	।	।	।	पहिला रूप
ऽ	०		ऽ	०		नियमानुसार क्रिया
ऽ		।	ऽ		।	शेष रूप

तो शेष रूप 'ऽ।ऽ।' सिद्ध हुआ । इसीको ६ मात्राके छन्दोंका सातवां भेद जानो ॥

विद्यार्थियोंके बोधार्थ १ मात्राके नष्टसे ४ मात्राओंके नष्ट तकका स्पष्टीकरण किया जाता है ॥

एक मात्राका १ ही छन्द होता है, अतएव नष्टके उदाहरण की आवश्यकता नहीं ॥



नट	भेदों की संख्या	सर्वलघु	शिपांक	सिद्धरूप
२ मात्राओंका	१	१ २ । ।	१ १ । । ५ ०	५
	२	१ २ । ।	१ ० । ।	॥
३ मात्राओंका	१	१ २ ३ । । ।	१ २ २ । । । ५ ०	। ५
	२	१ २ ३ । । ।	१ २ १ । । । ५ ०	५ ।
	३	१ २ ३ । । ।	१ २ ० । । ।	। । ।
४ मात्राओंका	१	१ २ ३ ४ । । । ।	१ २ ३ ४ । । । । ५ ० ५ ०	५ ५
	२	१ २ ३ ४ । । । ।	१ २ ३ ३ । । । । ५ ०	। । ५
	३	१ २ ३ ४ । । । ।	१ २ ३ २ । । । । ५ ०	। ५ ।
	४	१ २ ३ ४ । । । ।	१ २ ३ १ । । । । ५ ०	५ । ।
	५	१ २ ३ ४ । । । ।	१ २ ३ ० । । । ।	। । । ।

इसी प्रकार और भी जानो ॥

६ मेरु

जितनी मात्राके संपूर्ण प्रसारके भेदों अर्थात् छन्दोंके रूपों-

में जितने २ गुरु और जितने २ लघुके जितने रूप होते हैं उन-
की संख्या दर्शनिका में कहते हैं ॥

शेरु बनानेकी रीति

पहिले एक कोष्ठ लिखके फिर नाभिकी और अर्थात् नीचेको
टुहरे २ तिहरे २ चौहरे २ आदि अभीष्ट मात्रा तकके कोष्ठ खींचो,
फिर इन कोष्ठोंमें इस प्रकार अंकन्यास करो, कि पहिले कोष्ठमें
१ का अंक लिखा, पुनः दाहिनी ओरके सब कोष्ठोंमें अन्त तक
१ ही १ लिखा, परन्तु बाईं ओरके कोष्ठोंमेंसे पहिलेमें एक दो,
दूसरेमें एक तीन, चौथेमें एक चार आदि लिखा। बीचके कोष्ठों-
को भरनेकी यह रीति है कि प्रत्येकके शीर्षाङ्गको वक्र गतिसे
जोड़कर भरदो। विद्यार्थियोंके बोधार्थ नीचे दस मात्रा तकका
शेरु लिखा जाता है ॥

शेरुका स्वरूप

१ मात्राका रूप	१	१	छन्दों की सर्व संख्या			
२ मात्राओंके रूप	१	१	२			
३ मात्राओंके रूप	२	१	३			
४ मात्राओंके रूप	१	२	१	५		
५ मात्राओंके रूप	३	४	१	८		
६ मात्राओंके रूप	१	६	५	१	१३	
७ मात्राओंके रूप	४	१०	६	१	२१	
८ मात्राओंके रूप	१	१०	१५	७	१	३४
९ मात्राओंके रूप	५	२०	२१	८	१	५५
१० मात्राओंके रूप	१	१५	३५	२८	९	८८

SSSSS SSSSI SSSIIII SSIIIII SIIIIII IIIIIII IIIIIIIII

इस मेरुसे प्रकाशित हुआ कि दस मात्राके छन्दोंमें

१ छन्द सर्वगुरुका है

३५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें ४ गुरु और २ लघु हैं

३५ ३ गुरु और ४ लघु हैं

२८ २ गुरु और ६ लघु हैं

६ १ गुरु और ८ लघु हैं

१ छन्द ऐसा होगा जिसमें सर्व लघु हैं ।

इसी प्रकार सब मात्राओंके मेरु बनानेमें दाहिनी ओरको एक एक गुरु घटाते और दो दो लघु बढ़ाते जाओ ॥

एकावलीमेरु

उक्त मेरुमें गुरुसंख्या क्रमपूर्वक घटती जाती है जैसे ४, ३, २ और १ परन्तु एकावली मेरुमें क्रमपूर्वक बढ़ती जाती है जैसे १, २, ३ और ४ ॥

रीति

पहिले एक कोष्ठ लिखकर, फिर दुहरे २ तिहरे २ और चौहरे २ कोष्ठ दाहिनी ओरको बनाओ । फिर कोष्ठोंको इसप्रकार भरो कि बाईं ओरके कोष्ठोंमें १ ही १ लिखो फिर दूसरे कोष्ठमें एक, दो, तीन, चार आदि अङ्क लिखो, फिर अन्तके कोष्ठमें, जो दाहिनी ओर है, एक, तीन, एक चार आदि लिखो और प्रेष कोष्ठकोंमें शीर्षस्थ कोष्ठके अङ्कोंको वक्रगतिसे जोड़कर लिखदो ॥

उदाहरणार्थ नीचे नौ मात्राका एकावलीमेरु लिखा जाता है ॥

१	१	१						
२	१	१	२					
३	१	२	३					
४	१	३	१	५				
५	१	४	३	८				
६	१	५	६	१	१३			
७	१	६	१०	४	२१			
८	१	७	१५	१०	१	३४		
९	१	८	२१	२०	५	५५		

||||| S||||| SS|||| SSS|| SSSS|

इस एकावलीमेरुसे प्रकाशित हुआ कि ९ मात्राओंके छन्दोंमें सर्व लघुका १ छन्द है ।

१ गुरु और ७ लघुको ८ छन्द हैं

२ गुरु और ५ लघुको २१ छन्द हैं

३ गुरु और ३ लघुको २० छन्द हैं

४ गुरु और १ लघुको ५ छन्द हैं

इसी प्रकार और भी जानो ।

७ खण्डमेरु

जिसके द्वारा विना मेरुकी रचना किये मेरुका काम निकले उसे खण्डमेरु कहते हैं ॥

रीति

जितनी मात्राका खण्डमेरु बनाना हो उनसे एक कोष्ठ अधिक बनाओ और उन कोष्ठोंमें एक एकका अंक लिखो । पुनः उक्त कोष्ठोंके नीचे दो कोष्ठ न्यून बनाकर उनमेंसे पहिले कोष्ठमें एक, फिर शेष कोष्ठोंमें वक्रगतिसे अंक जोड़कर स्थापित करो, पुनः इसके नीचे दो कोष्ठ कम करके पहिलेमें १ और शेषोंमें वक्रगतिसे अंक जोड़के भरते चले जाओ । सारांश इसी प्रकार

जितना अभीष्ट हो लिखते चले जाओ । विद्यार्थियोंके बोधार्थ
दस मात्रा तकका खण्डमेरु नीचे देते हैं ॥

गुरुस्थान

	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	१	२	३	४	५	६	७	८	९	
लघुस्थान	१	३	६	१०	१५	२१	२८			
	१	४	१०	२०	३५					
	१	५	१५							
	१									

इस खण्डमेरुके अन्त्यांक १, १५, ३५, २८, ९ और १ आदि हैं
इनसे प्रकाशित हुआ कि दस मात्राओंके छन्दोंमें

१ छन्द सर्वगुरुका है

१५ छन्द ऐसे हैं जिनमें ४ गुरु और २ लघु हैं

३५ ३ गुरु और ४ लघु हैं

२८ २ गुरु और ६ लघु हैं

९ १ गुरु और ८ लघु हैं

१ छन्द ऐसा है जिसमें सर्वलघु हैं

अन्त्यांकके ऊपर जितने कोष्ठक पड़ें उतने ही गुरु और बाईं
ओरको जितने कोष्ठक हों उतने ही लघु समझो, जैसे ३५ के
ऊपर तीन कोष्ठक हैं तो इससे तीन गुरु समझना और ३५ के
बाईं ओर ४ कोष्ठक हैं तो इससे ४ लघु समझना चाहिये ॥

८ पताका

गुरु और लघुके जितने २ भेद सेरुके द्वारा प्रकाशित होते हैं उतने २ भेदोंके योग्य स्थान जिसकी द्वारा जानेजायँ उसे पताका कहते हैं ॥

रीति

प्रथम एक खड़ी रेखा खींचकर उसमें कल्पित मात्राकी संख्या के समान कोष्ठ बनाओ, फिर अधः अर्थात् नीचेसे सूचीके अंक लिखो, फिर ऊपरसे तीसरे कोष्ठकी दाहिनी ओरकी बढ़ाओ, इसी प्रकार प्रत्येक तीसरे तीसरे कोष्ठकी बढ़ाते चले जाओ । कौन सा कोष्ठ किस संख्या तक बढ़ाया जाय इसका ज्ञान मात्रा सेरु और एकावली वा खण्डसेरुसे ही सक्ता है । फिर इन बढ़े हुए कोष्ठोंमें लिखनेका प्रारम्भ इस प्रकार करो कि प्रथमके बढ़े हुए कोष्ठोंमें सूचीके ऊपरके अंकसेसे उसीके नीचेकी पहिली एक संख्याकी छोड़कर बाकी अंक क्रमपूर्वक एकएक घटाकर लिखो, फिर इस बढ़े हुए कोष्ठकी प्रत्येक संख्यामेंसे नीचेकी ओर सूचीकी पहिली एक संख्या छोड़कर बाकी अङ्कोंको क्रमपूर्वक एक २ घटाओ और जो अंक बाकी निकलते जायँ उन्हें दूसरे कोष्ठमें भरते चले जाओ । इसी प्रकार इस दूसरे बढ़े हुए कोष्ठमेंसे उसकी नीचेकी सूचीके अङ्कोंमेंसे पहिली संख्याकी छोड़कर बाकी अंक क्रमपूर्वक घटाकर तीसरा कोष्ठ भरलो, परन्तु इस बातका स्मरण रखो कि जो अंक ऊपरके कोष्ठ अथवा कोष्ठोंमें एक बार आ-चुका हो, वह दूसरी बार न आने पावे । प्रत्येक कोष्ठकी संख्या-

मेंसे सूचीके अंक एक एक ही बार क्रमपूर्वक घटाओ। यदि किसी संख्यामें घटानेसे कोई संख्या ऐसी निकले कि जो ऊपरके कोष्ठों में पाई जाय, तो उस संख्याको छोड़दो ॥

स्पष्टण रक्खो कि जिस सूचीके अंकके दाहिनी ओरका कोष्ठ भरना ही उसी अंकसे घटाना प्रारम्भ करो, उसके ऊपरका एक अंक छोड़दो । परन्तु नीचेके सब अंक क्रमपूर्वक घटाओ ॥

विद्यार्थियोंके जाननेके निमित्त आठ मात्राकी पताका भरनेकी रीति विस्तारपूर्वक नीचे दी जाती है ॥

अब जानना चाहिये कि ८ मात्राके छन्दोंकी संख्या ३४ होती है तो सूचीकी रीतिसे एक दण्डाकार कोष्ठ खींचो और नीचेसे प्रारम्भ करके ऊपर तक १, २, ३, ५, ८, १३, २१ और ३४ अंक लिखो ॥

१	१३४															
	२१															
७	१३	२१	२६	२८	३१	३२	३३								१ गुरुके स्थान ।	
	८															
१५	५	८	१०	११	१२	१६	१८	१८	२०	२३	२४	२५	२७	२८	३०	२ गुरुके स्थान
	३															
१०	२	३	४	६	७	८	१४	१५	१७	२२						३ गुरुके स्थान ।
१	१															

अब ३४ से तीसरा अंक १३ है उसको कोष्ठको दाहिनी ओरको ७ कोष्ठकों तक बढ़ादो । फिर १३ से तीसरा अङ्क ५ है अत-

एव ५ को दाहिनी ओर १५ वें स्थान तक बढ़ादो, पुनः ५ से तीसरा अङ्क २ है इसको भी दाहिनी ओर १० स्थान तक बढ़ादो॥

अब पहिला बढ़ा हुआ कोष्ठ जो १३ की दाहिनी ओर है उसे इस प्रकार भरो कि १३ के ऊपर जो २१ है उसे छोड़दो. अब ऊपरके ३४ मेंसे १३ घटाओ शेष २१ रहे इस २१ को १३ के साहनेके कोष्ठमें स्थापित करो, इसीप्रकार आगेकी क्रिया करते चलो; जैसे,

३४ मेंसे ८ घटायें २६ रहे

३४ मेंसे ५ घटायें २९ रहे

३४ मेंसे ३ घटायें ३१ रहे

३४ मेंसे २ घटायें ३२ रहे

३४ मेंसे १ घटाया ३३ रहे

इन २६, २९ आदि ३३ तक अङ्कोंको २१ के आगे क्रमपूर्वक लिखलो अब दूसरे कोष्ठके भरनेकेलिये जो सूचीके अङ्क उसकी नीचे हैं अर्थात् ८, ५, ३, २, १ इनमेंसे ५ के ऊपर जो ८ है उसे छोड़ शेष ५, ३, २, १ को क्रमपूर्वक एक एक पहिले बढ़े हुए कोष्ठकी एक एक संख्यामेंसे घटा चलो जबतक कि सब स्थान भर न जायँ । यथा ।

१३ मेंसे ५ घटायें ८ रहे

१३ ... ३ ,, १० ,,

१३ ... २ ,, ११ ,,

१३ ... १ घटाया १२ ,,

अब १३ की आगे २१ है
 २१ मेंसे ५ घटायें १६ रहे
 २१.....३ " १८ "
 २१.....२ " १९ "
 २१.....१ घटाया २० "
 अब २१ की आगे २६ है

२६ मेंसे ५ घटायें २१ रहे, २१ ऊपर आचुका है इसलिये छोड़ दो

२६ मेंसे ३ " २३ "
 २६ मेंसे २ " २४ "
 २६ मेंसे १ घटाया २५ "

अब २६ की आगे २८ का अंक है

२८ मेंसे ५ घटायें २४ रहे, छोड़ दो
 २८.....३ " २६ " छोड़ दो
 २८.....२ " २७ "
 २८.....१ घटाया २८ "

अब २८ की आगे ३१ का अंक है

३१ मेंसे ५ घटायें २६ रहे, छोड़ दो
 ३१.....३ " २८ " छोड़ दो
 ३१.....२ " २९ " छोड़ दो
 ३१.....१ घटाया ३० "

दूसरा स्थान पूर्ण होगया । अब तीसरे कोष्ठको जो २ के आगे है उसे भी ऊपर कहीं हुई रीतिसे भर दो । २ के ऊपर जो ३ का अंक है उसे छोड़ दो ॥

५ मेंसे २ घटायें ३ रहे

५ मेंसे १ घटाया ४ रहे

५ की आगे ८ है

- ८ मैसे २ घटाये ६ रहे
 ८ मैसे १ घटाया ७ रहे
 १० मैसे २ घटाये ८ रहे, छोड़ दो
 १० मैसे १ घटाया ९ रहे
 ११ मैसे २ घटाये ९ रहे, छोड़ दो
 ११ मैसे १ घटाया १० रहे, छोड़ दो
 १२ मैसे २ घटाये १० रहे, छोड़ दो
 १२ ... १ घटाया ११ रहे, छोड़ दो
 १६ मैसे २ घटाये १४ रहे
 १६ ... १ घटाया १५ रहे
 १८ मैसे २ घटाये १६ रहे, छोड़ दो
 १८ ... १ घटाया १७ रहे
 १९ मैसे २ घटाये १७ रहे, छोड़ दो
 १९ ... १ घटाया १८ रहे, छोड़ दो
 २० मैसे २ घटाये १८ रहे, छोड़ दो
 २० ... १ घटाया १९ रहे, छोड़ दो
 २३ मैसे २ घटाये २१ रहे, छोड़ दो
 २३ ... १ घटाया २२ रहे

अब तीसरे कोष्ठके दसों स्थान भर गये ।

अन्तके कोष्ठके भरनेकी एक यह भी सुगम रीति है कि ऊपरके कोष्ठोंमें जो अंक न आये हों उन्हें क्रमपूर्वक बाईं ओरसे दाहिनी ओरको भर दो ।

इस पताकासे विदित हुआ कि ८ मात्राओंके छन्दोंमें

१ छन्द सर्वलघुका होगा अर्थात् ३४ वां भेद

७ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु और ६ लघु हैं अर्थात् १३,

२१, २६, २९, ३१, ३२ और ३३ वां भेद
 १५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें २ गुरु और ४ लघु हैं अर्थात् ५,
 ८, १०, ११, १२, १६, १८, १९, २०, २३;
 २४, २५, २७, २८ और ३० वां भेद
 १० छन्द ऐसे होंगे जिनमें ३ गुरु और २ लघु हैं अर्थात् २,
 ३, ४, ६, ७, ९, १४, १५, १७ और २२ वां भेद
 १ छन्द ऐसा होगा जिसमें ४ गुरु हैं अर्थात् पहिला भेद ॥
 इसी प्रकार और भी जानो ॥

६ मर्कटी

मात्राके प्रसारमें जिसके द्वारा जितने लघु और गुरु, सर्वकला
 और सब वर्णोंकी संख्या जानी जाती है उसे मर्कटी कहते हैं ॥

रीति

खड़ी पंक्तियां ७ कोष्ठकोंकी बनाओ और लम्बी अभीष्ट मा-
 त्राओं तककी बनाओ; इस प्रकारसे वनेहुए कोष्ठोंको भरनेकी
 यह रीति है कि पहिले कोष्ठमें एक, दो, तीन, चार आदि अंक
 लिखा और दूसरे कोष्ठमें सूचीके अङ्क लिखा । तीसरे कोष्ठमें
 शीर्षस्थ पहिले और दूसरे कोष्ठके अंकोंका गुणनफल लिखा ।
 चौथे कोष्ठमें पहिले शून्य फिर शून्यके आगे एक और एकके आगे
 दो लिखा और उसके आगेके कोष्ठकोंको इस रीतिसे भरो कि
 उस कोष्ठके पीछेके अंकको दूना करके उसीके शीर्षस्थ अंकमेंसे
 घटाकर लिखा । इसी प्रकार सब आगे बनाते जाओ । पांचवें
 कोष्ठमें चौथे कोष्ठके अंकोंको ही शून्यको त्यागके लिखा और

छठवें कोष्ठमें चौथे और पांचवें कोष्ठोंके अंकोंका योग लिखा और सातवें कोष्ठमें तीसरे कोष्ठका आधा लिखा, परन्तु पहिले कोष्ठमें शून्य ही लिखा ॥

विद्यार्थियोंके बोधार्थ एक मात्रासे लेकर दस मात्रा तककी मर्कटी नीचे लिखी जाती है ॥

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	कला
१	२	३	४	८	१३	२१	३४	५५	८६	संख्या
१	४	८	२०	४०	७८	१४७	२७२	४८५	८६०	सर्वकला
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	गुरु
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	४२०	लघु
१	३	७	१५	३०	५८	१०८	२०१	३६५	६५५	वर्ण
०	२	४	$\frac{१}{२}$	१०	२०	३८	$\frac{७३}{२}$	$१३६\frac{१}{२}$	$२४७\frac{१}{२}$	पिण्ड

इस मर्कटीसे प्रकाशित हुआ कि दस मात्राओंके सम्पूर्ण छन्दोंकी संख्या ८६ है, सर्वकला ८६० है, इनमेंसे २३५ गुरु मात्रा और ४२० लघु मात्रा हैं। ६५५ वर्ण हैं और सर्वकलाओंके आधि ४४५ पिण्ड हैं। इसी प्रकार और भी जानो ॥

इति मात्रापत्रारः ।

मात्रिक छन्दोंमें गुरु लघु बतानेकी दूसरी रीति ।

मात्रिक छन्दोंके चारों चरणोंकी सम्पूर्ण कलाओंमेंसे छन्दके सम्पूर्ण वर्ण घटाओ जो शेष बचे उतनी ही गुरु मात्रा जानो और गुरु मात्राकी संख्याको दूना करके छन्दकी सम्पूर्ण मात्राओंमेंसे घटाओ जो शेष बचे उतनी ही लघु मात्रा जानो । यथा—

ॐ । । ॐ । । ॐ । । । ॐ । । । । । ॐ ।

दोहा—कामिहिँ नारि पियारि जिमि, लोभिहिँ प्रिय जिमि दाम

ॐ ॐ ॐ । । ॐ । ॐ । । ॐ ॐ । । ॐ ।

ऐसे है कव लागिही, तुलसीके मन राम ॥

इस दोहेमें ३५ वर्ण हैं । अब ३५ को छन्दकी सम्पूर्ण ४८ मात्राओंमेंसे घटाया तो शेष १३ रहे, येही १३ मात्रा गुरु हैं और १३ को दूने २६ हुए, इस २६ को ४८ मेंसे घटाया तो शेष २२ रहे, येही २२ मात्रा लघु हुईं ॥

ॐ । । ॐ । ॐ । ॐ ॐ ॐ । ॐ । । । । । ॐ ॐ

चौ०—आकर चार लाख चौरासी, जाति जीव नभजलयलवासी ।

। ॐ ॐ । । । । । । ॐ ॐ । ॐ । ॐ । ॐ । । ॐ ॐ

सियाराममय सब जग जानी, करों प्रणाम जोरि जुग पानी।

इस चौपाईमें ४५ वर्ण हैं । अब ४५ को छन्दकी सम्पूर्ण ६४ मात्राओंमेंसे घटाया तो शेष १९ रहे, येही १९ मात्रा गुरु हैं और १९ को दूने ३८ हुए इस ३८ को ६४ मेंसे घटाया तो शेष २६ रहे येही २६ मात्रा लघु हुईं । इसी प्रकार और भी जानो ॥

अथ संख्यासूचकशब्दाः ।

काव्यमें जहाँ कहीं संख्या दर्शानिका काम पड़ता है वहाँ कविजन बहुधा संख्यासूचक शब्दोंका प्रयोग किया करते हैं । वे शब्द संक्षेपसे निम्नाङ्कित कोष्ठमें लिखे जाते हैं ॥

मात्रिक छन्दोंकी संख्या और नाम ।

वर्णवृत्तोंके सदृश मात्रिक छन्दोंकी संज्ञा किसी आचार्य्यने अपने ग्रन्थमें नहीं दी है, परन्तु इनको संज्ञाहीन रखना अनुचित जान सांकेतिक मंगलकारी शब्दोंसे परिचित किया है ॥

संख्या ।	संज्ञा ।	कुल भेद ।	जो भेद इस ग्रंथ में दिखे हैं ।	संख्या ।	संज्ञा ।	कुल भेद ।	जो भेद इस ग्रंथ में दिखे हैं ।
१	चान्द्र	१	} प्रस्तास से ही भेदोंकी जान ली ।	१०	महासंस्कारी	२५८४	१
२	पाक्षिक	२		१८	पौराणिक	४१८१	१
३	राम	३		१८	महापौराणिक	६७६५	३
४	वैदिक	५		२०	महादैशिक	१०८४६	२
५	याज्ञिक	८		२१	त्रैलोक	१७७११	२
६	रागी	१३		२२	महारौद्र	२८६५७	३
७	लौकिक	२१		२३	रौद्रार्क	४६३६८	२
८	वासव	३४		२४	अवतारी	७५०२५	५
९	आंक	५५		२५	महावतारी	१२१३८३	३
१०	दैशिक	८८		२६	महाभागवत	१८६४१८	६
११	रौद्र	१४४	२७	नाचत्रिक	३१७८११	२	
१२	आदित्य	२३३	२८	योगिक	५१४२२८	२	
१३	भागवत	३७७	२९	महायोगिक	८३५०४०	२	
१४	मानव	६१०	३०	महातैशिक	१३४६२६८	४	
१५	तैशिक	८८०	३१	अश्ववतारी	२१७८३०८	१	
१६	संस्कारी	१५८७	३२	लाक्षणिक	३५२४५७८	६	

उक्त भेद मात्रिक समके हैं मात्रिक अर्द्धसम और मात्रिक

विषयकी भी इसीप्रकार एक पदके दूसरे पदसे सम्बन्धकी कारण अनेकानेक भेद हो सकते हैं; जिनको प्राचीन महर्षियोंने केवल कौतुक और समयनाशक जानकर त्याग दिया है । इन सब भेदोंके कहनेको श्रीमत्विंगलाचार्य महाराजके अतिरिक्त इस संसारमें कोई समर्थ नहीं है । प्राचीन सत्कवियोंने जो मुख्य २ भेद कहे हैं केवल उनका ही जानलेना परम लाभदायक और संगलकारी है ॥

मान्त्रिकगण ।

(जानना चाहिये कि मान्त्रिक छन्दोंके गण पांच होते हैं । ये गण आर्याकी गणोंसे पृथक् हैं । इन प्रत्येक गणोंके उपभेद होते हैं, जैसे कि नीचे दर्शाये गये हैं ॥

नाम	लक्षण	उपभेदकी संख्या
टगण	६ मात्राका	१३
ठगण	५ मात्राका	८
डगण	४ मात्राका	५
ढगण	३ मात्राका	३
णगण	२ मात्राका	२

प्राचीन ग्रन्थोंमें कहीं कहीं मान्त्रिक छन्दोंका लक्षण उक्त गणोंके द्वारा भी कहा है, परन्तु आजकाल इसकी विशेष आवश्यकता न देखकर कविजन केवल संख्या अथवा संख्यासूचक शब्दोंसे ही काम निकाल लेते हैं, परन्तु पाठकोंके ज्ञानार्थ ये सब गण उदाहरण सहित नीचे लिखे जाते हैं ॥

गण	अनु- क्रम	रूप	संज्ञा	उदाहरण	गण	अनु- क्रम	रूप	संज्ञा	उदाहरण	
६ मात्रावाले (टगण)	१	ऽऽऽ	हर	गोविन्दा	५ मात्रावाले (टगण)	१	ऽऽऽ	इन्द्रासन	सुरारी	
	२	ऽऽऽऽ	शशी	वनवारी		२	ऽऽऽ	वीर	श्री पती	
	३	ऽऽऽऽऽ	सूर्य	रमापती		३	ऽऽऽऽ	चाप	जगपती	
	४	ऽऽऽऽऽऽ	शंक्र	लोकपती		४	ऽऽऽऽ	हीर	गोपाल	
	५	ऽऽऽऽऽऽऽ	शेष	जगतपती		५	ऽऽऽऽ	शेखर	हजनाथ	
	६	ऽऽऽऽऽऽऽऽ	अहि	दयासिंधु		६	ऽऽऽऽ	कुसुम	कपाकर	
	७	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	कमल	दीनबंधु		७	ऽऽऽऽ	अहिगण	पापहर	
	८	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	धाता	जगतनाथ		८	ऽऽऽऽऽ	पापगण	मनहरन	
	९	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	कलि	राधाकर		४ मात्रावाले (डगण)	१	ऽऽ	कर्ण	माधी
	१०	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	चन्द्र	सुरलीधर			२	ऽऽ	करतल	हरि जू
	११	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	ध्रुव	रमारमण			३	ऽऽ	पयोधर	सुकुन्द
	१२	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	धर्म	नन्दसुवन			४	ऽऽऽ	सुरारी	मोहन
१३	ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ	शाली	कमलनयन	५	ऽऽऽऽ		वसुचरण	गिरिधर		
								विप्र, द्विज		

गण	अनु- क्रम	रूप	संज्ञा	उदाहरण	गण	अनु- क्रम	रूप	संज्ञा	उदाहरण
३ मात्रावाले (डगण)	१	ऽऽ	रसवास,	हरी	१ मात्राका गण नहीं हैना	१		शंख, मेरु, गन्ध, काण्डल	५
	२	ऽऽऽ	पीन, नन्द,	श्याम					
	३	ऽऽऽऽ	बाल बलय	प्रमर					
२ मात्रावाले (डगण)	१	ऽ	हार, वीर,	श्री	१ मात्राका गण नहीं हैना				
	२	ऽऽ	नूपुर, कुहल सुमिय	हरि					

ये नाम विशेष प्रतीत होते हैं । इनके पर्यायवाची शब्दोंके प्रयोग करनेसे भ्रम हो जानेकी शङ्का रहती है । जहां तक ही काम पढ़ने पर इन्हींका प्रयोग करना उचित है ॥

उदाहरणार्थ इस ग्रन्थमें भी कहीं २ इनका प्रयोग किया है ।
जैसे— वसु छवि 'सुरारि'—सुरारि = १५ ।

'धाट' सह दस दीप—धाट = ११५ ।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे गुरुलघुविचारमात्रिकप्रत्ययमात्रिकगण-
तद्वर्गसंज्ञादिवर्णननाम प्रथमो मयूखः ॥ १ ॥



अथ मात्रिकछन्दांसि ।

तत्र

मात्रिकसमान्तर्गतसाधारणप्रकरणम् ।

जानना चाहिये कि एक, दो, तीन, चार, पांच वा छः मात्रिकोंके छन्द किसी आचार्यने अपने ग्रन्थमें क्रमपूर्वक नहीं लिखे, और न वे प्रचलित हैं । परन्तु उनके नाम और लक्षण उक्त कोष्ठोंसे ज्ञात हो सकते हैं । नीचे ७ मात्रिकोंके छन्दोंसे छन्दोंका वर्णन प्रारम्भ किया जाता है ॥

॥ लौकिक ॥ (७ मात्रिकोंके छन्द २१)

१ सुगती

लक्षण—

अश्व सुगती ।

टीका—इस सुगतीनामक छन्दके प्रत्येक चरणमें (अश्व) ७ मात्रा होती हैं ॥

उदाहरण—शिव शिव कही । जी सुख चही ॥

जो सुमति है । तौ सुगति है ॥

सूचना—इसे शुभगति भी कहते हैं इसके अन्तमें गुरु होता है ।

॥ वासव ॥ (८ मात्राओंके छन्द ३४)

१ छवि.

लक्षण—

वसु छवि मुरारि ।

टीका—इस छविनामक छन्दके प्रत्येक चरणमें (वसु) ८ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'मुरारि' अर्थात् लघु गुरु लघु होते हैं ॥

उ०— प्रभु हीं सुदीन । तुम ही प्रवीन ॥

जगु महुँ महेण । हरिये क्लेश ॥

सू०—मुरारि शब्दसे जगण अर्थात् लघु गुरु लघु का बोध होता है (उक्त छन्दकोष्ठकको देखो) इस छन्दकी संज्ञा कहीं २ मधुभार भी लिखी है । गुरु लघुका क्रम तीसरे पदमें नहीं मिलता इसी कारण यह मात्रिक छन्द है । यदि चारों पदमें गुरु लघुका क्रम एक ही जाय तो यह वर्णवृत्त हो जायगा ॥

॥ आङ्ग ॥ (९ मात्राओंके छन्द ५५)

१ गङ्ग

लक्षण—

वर गङ्ग भक्ती ।

टीका—इस गङ्गनामक छन्दके प्रत्येक चरणमें भक्ती अर्थात् ९ मात्रा होती हैं । गङ्गसे यह भी अभिप्राय है कि अन्तमें दो गुरु होते हैं ॥

उ०— रामा भजी रे । कामा तजी रे ॥

नित याहि कीज । सब छाड़ि दीज ॥

सू०—यह छन्द प्रस्तारकी रीतिसे नूतन रचा गया है ॥

॥ दैशिक ॥ (१० मात्राओंके छन्द ८६)

१ दीप

लक्षण—

धाट सह दस दीप ।

टीका—इस दीपनामक छन्दमें १० मात्रा होती हैं । धाट सह अर्थात् धाटके साथ, धाटसे यह अभिप्राय है कि अन्तमें ॥ १५ ॥ तीन लघु और एक गुरु और एक लघ होता है । (उक्तछन्द-कोष्ठकको देखो)

उ०— जय जयति जगवन्द । सुनिमनकुमुदचन्द ॥

चैलोक्य-अवनीप । दशरत्यकुलदीप ॥

॥ रीद्र ॥ (११ मात्राओंके छन्द १४४)

१ अहीर

लक्षण—

शिव कल सजौ अहीर ।

टी०—इस अहीरनामक छन्दमें (शिव) ११ मात्रा होती हैं 'सजौ' शब्द सार्थक है अर्थात् साथ 'ज' के, 'ज' से अभिप्राय जगण-का है । इस छन्दके अन्तमें लघु गुरु लघु होते हैं ॥

उ०— यहि विधि श्रीरघुनाथ । गहे भरत कर हाथ ॥

पूजत लोक अपार । गये राज दरवार ॥

सू०—इसे आभीर अथवा अभीर भी कहते हैं ॥

॥ आदित्य ॥ (१२ मात्राओंके छन्द २३३)

१ तोमर

लक्षण—

तोमर दुआदश पौन ।

टी०—इस तीमरज्जामक छन्दके प्रत्येक चरणमें १२ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'पौन' गुरु लघु होते हैं । (पौनकेलिये छन्द-कोष्ठक देखो) यथा तुलसीकृतरामायणे—

उ०— तव चले वाण कराल । फुंकरत जनु बहु व्याल ॥
कोप्यो समर श्रीराम । चल विशिख निशित निकाम ॥
२ लीला । ५ ।

लक्षण— रवि कल लीला मुरारि ।

टी०—इस लीलानामक छन्दके प्रत्येक चरणमें १२ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'मुरारि' अर्थात् लघु गुरु लघु होते हैं । यथा छन्दोऽर्णवे

उ०—अवधपुरी भा गभारु । दशरथगृह क्वि अगारु ॥
राजत जहँ विश्वरूप । लीलातनु धरि अनूप ॥
॥ भागवत ॥ (१३ मात्राओंके छन्द ३७७)

१ उल्लाला

लक्षण— उल्लाला वसु, गो करौ ।

टी०—इस उल्लालानामक छन्दके प्रत्येक चरणमें वसु ८ गो (इन्द्रिय) ५ के विश्रामसे १३ मात्रा होती हैं ॥ यथा भाषा-
छन्दोमञ्जर्याम्

उ०—सेवहु हरिसरसिजचरण । गुणगण गावहु प्रेम कर ॥
पावहु मनमें भक्ति को । और न इच्छा जानि यह ॥

सू०—इसे चन्द्रमणि भी कहते हैं ॥

॥ मानव ॥ (१४ मात्राओंकी छन्द ६१०)

१ कज्जल

लक्षण— कज्जल भौन मत्तापौन ।

टी०—इस कज्जलनामक छन्दकी प्रत्येक पदमें (भौन) १४ मात्रा होती हैं । पौनसे अभिप्राय यह है कि अन्तमें गुरु लघु होते हैं ॥ यथा छन्दःसर्वस्वे—

उ०—प्रभु सम श्रीरी देख लेव । तुम सम नाही और देव ॥
कस प्रभु कीज तोरि सेव । पाव न कोज तोर भेव ॥
२ सखी

लक्षण— कल भुवन सखी रच माया ।

टी०—इस सखीनामक छन्दकी प्रत्येक चरणमें (भुवन) १४ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'मां' अर्थात् मगण अथवा 'यां' अर्थात् यगण होता है । मगणसे तीन गुरु और यगणसे एक लघु और दो गुरुका बोध होता है ॥

उ०—सव घर घरकी ब्रजनारी । दधि-गोरस-वेचनहारी ॥
मिलि जुत्य-मतो सव कीन्हा । जमुनातटमारग लीन्हा ॥
३ हाकल

लक्षण— शिवदिसि निधी गो हाकला ।

टी०—इस हाकलनामक छन्दकी प्रत्येक पदमें निधि ८ और गो (इन्द्रिय) ५ मिलकर १४ मात्रा होती हैं । 'गो' से यह भी अभिप्राय है कि इस छन्दकी अन्तमें गुरु होता है ॥

उ०—रघुवीर राघव भजु मना । तव अवसि तेरो टँग बना ॥
अरपूर चितसों वन्दना । कै रैन दिन रघुनन्दना ॥

सू०—इसमें विशेषता यह है कि पहिले और दूसरे पादमें ११ अक्षर हों और तीसरे चौथमें १० हों । शिव ११ दिसि १०, इसको षाकलि भी कहते हैं ॥

४ सुलक्षण

ल०— मुनि मुनि पौन, सुलछन तौन ।

टी०—जिसके प्रत्येक पदमें मुनि मुनि १४ मात्रा इस नियमसे हों कि प्रत्येक ७ मात्राओंके अन्तमें पौन अर्थात् गुरु लघु हों, उसे सुलछन अथवा सुलक्षण छन्द कहते हैं । सात सात मात्राओं पर विराम होता है ॥

उ०—हरि हर देव नित उठ सेव । अस को जौन पावहि भेव ॥
मन मधि एक यह कर टेव । सब तजि रामनामै लेव ॥

सू०—सात मात्राओंके अन्तमें गुरु लघु इस क्रमसे हों कि प्रत्येक चार मात्राके पश्चात् एक गुरु और एक लघु पड़ता जाय ॥

५ मनमोहन

ल०— मनु मनमोहन धरहु बलय ।

टी०—इस मनमोहननामक छन्दके प्रत्येक चरणमें मनु १४ मात्रा होती हैं । अन्तमें बलय अर्थात् तीन लघु होते हैं । (बलय-केलिये छन्दकोष्ठक देखो) यथा भाषाछन्दोमञ्जर्याम् ॥

उ०—हर हरी नारायण परम । भल करी तुम राखी सरम ॥
तुमहिं निहारे खुले करम । तुमहिं भजे पावहीं धरम ॥

तैयिक ॥ (१५ मात्राओंके छन्द ६८०)

१ चौबोला

ल०— वसु मुनि लग चौबोला रंचौ ।

टी०—चौबोलानामक छन्दमें वसु ऽ मुनि ० मिलकर १५ मात्रा होती हैं । आठ और सात मात्रा पर विराम होता है । अन्त में 'लग' लघु गुरु होते हैं ॥

उ०—रघुवर तुमसौं विनती करौं । कौज सोई जाते तरौं ॥
चौगुन मेरे मन ना धरौं । पार दया करि भवकी करौ ॥

सू०—भिखारीदासजीने इसकी दुगुनेकी चौबोला मानकर १६ और १४ मात्राओं पर यति मानी है ॥

२ चौपई

ल०— तिथि कल पौन चौपई माँहिं ।

टी०—इस चौपईनामक छन्दके प्रत्येक चरणमें १५ मात्रा होती हैं । अन्तमें पौन अर्थात् गुरु लघु होते हैं ॥ यथा तुलसीकृतरा०—

उ०—राम रमापति तुम सम देव । नहिं प्रभु होत तुम्हारी सेव ॥
दीन दयानिधि भेद अमेव । मम दिशि देखो यह यश लेव ॥

सू०—इसकी जयकारी भी कहते हैं ॥

३ गुपाल

ल०— वसु मुनि कल धरि, सजहु गुपाल ।

टी०—यह वसु ऽ मुनि ० के विश्रामसे १५ मात्राको गुपाल छन्द है । 'सजहु' सार्थक है साथ 'ज' के = जगणे । अन्तमें लघु गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—मधुर मनोहर प्रिय जिमि प्रान । सुख सुख दर्पन कृपानिधान॥

आरतिहरण सरण जन हेतु । सुलभ सकल अचरकुलकेतु ॥

मू०—इसको भुजङ्गिनी भी कहते हैं ।

॥ संस्कारी ॥ (१६ मात्राओंके छन्द १५६०)

मात्रासमक

ल०— १ मत्त समक गंतल नौ वसुद्वे ।

२ सर वसु लघु विश्लोक सु पुनि व्हे ॥

३ सर वसु नव लघु रच चित्राको ।

४ नौ बारा वानवासिकाको ॥

टी०—मात्रासमकके प्रतिपादमें १६ मात्रा होती हैं । अन्तमें गुरु होता है । इसके चार भेद हैं जिसकी ६ वीं मात्रा लघु होती है उसे 'मत्तसमक,' जिसकी ५ वीं और ८ वीं मात्रा लघु होती हैं उसे 'विश्लोक' जिसकी ५ वीं, ८ वीं और ६ वीं मात्रा लघु होती हैं उसे 'चित्रा' और जिसकी ६ वीं और १२ वीं मात्रा लघु होती हैं उसे 'वानवासिका' कहते हैं ॥

यथा तुलसीकृतरामायणे मत्तसमक (६)

उ०—जे प्राकृत कवि परम सयाने । भाषा जिन हरिचरित बखाने॥

भये अहहिं जे हुद्रहैं आगे । प्रणवीं सबहिं कपट छल त्यागे॥

विश्लोक (५, ८,)

मुनि आगमन सुना जब राजा । मिलन गयउ लय विप्रसमाजा ।

करि दगडवत मुनिहिं सनमानी । निज आसन बइठारे आनी ॥

चित्रा (५, ८, ९,)

इतनहि कहि निज सदनै आई । देखत मणिगण धन बहुताई ।
सुरपतिभुवन सुपटतर नाहीं । जहँ ऋधि सिधि तन धरे कसाहीं॥

वानवासिका (९, १२,)

सौय लखन जिहँ विधि सुख लहहीं। सो रघुनाथ करहिं सुझ कहहीं
कहहिं पुरातन कथा कहानी । सुनहिं लखन सिय अति सुख मानी
सू०—ध्यान रहे कि एक छन्द दूसरेके साथ न मिलने पावे । जैसे
जिसकी केवल ९ वीं मात्रा चारों पदोंमें लघु हो, परन्तु
१२ वीं लघु न हो वही मत्तसमक हो सकता है । यदि ९वीं
और १२ वीं दोनों लघु हों तो वह वानवासिका छन्द
होगा । इसी प्रकार और भी जानो ॥

५ पदरि

ल०— वसु वसु कल पदरि लेहु साज ।

टी०—१६ मात्राका पदरि छन्द होता है 'साज' सार्थक है । अन्त-
में जगण अर्थात् लघु गुरु लघु होते हैं । विश्राम चार चार
मात्राके पञ्चात् होता है ॥

उ०—श्रीकृष्णचन्द अरविन्दनैन । धरि अधर वजावत मधुर वैन ॥
गण ग्वाल संग आगे सुधैन । वनतें ब्रज आवत मोद दैन ॥

खू०—श्रीमद्भट्ट हलायुधजीने प्रज्भटिकाका जो नियम दिया है
वह इस छन्दसे मिलता है, परन्तु संस्कृतछन्दोमञ्जरीसे वि-
रोध है । इस छन्दके अन्य नाम पदटिका, प्रज्वलय वा प्रज्व-
लिया हैं । भिखारीदासजीने इसीके दुगुनेको लीलावती-
नामक छन्द माना है ॥ पदटिका इससे मिलता है। मङ्गलान्तरे

६ अरिह

ल०— सोरह ज न लल यहाँ अरिह ।

टी०—इस छन्दके अन्तमें दो लघु अथवा एक यगण होता है ।
सोलह मात्रा होती हैं, परन्तु जगणका इसमें निषेध है ।
भिखारीदासजीने इसके अन्तमें भगण माना है ॥

उ०—से हरिनाम सुकुन्द मुरारी । नारायण भगवन्त खरारी ॥
राधावल्लभ कुञ्जविहारी । जानकिनाथ सदा सुखकारी ॥

७ डिल्ला

वसु वसु भन्ता डिल्ला जानहु ।

टी०—१६ मात्रा जिसमें भगणान्त हों उसे डिल्ला जानो, परन्तु
उक्त भेदोंसे पृथक् हो ।

उ०—रामनाम निसिवासर गावहु । जन्म लहे कर फल जग पावहु ॥
सीख हमारी जो हिय लावहु । जन्मसरणकी फन्द नसावहु ॥

८ उपचित्रा

ल०— वसु पर गो रस ज्यों उपचित्रा ।

टी०—आठ मात्राओंके उपरान्त एक गुरु और उसके पश्चात् ६
मात्रा जिसमें हों अन्तमें गुरु हो उसे उपचित्रा कहते हैं ॥

उ०—मोरी मुन चितदै रघुवीरा । करु दायो मोपै बलवीरा ॥

प्रभु जानहु हियकी तुम पीरा । अब मोहीं करिये निजतीरा ॥

सू०—इस छन्दमें जगण सब पदोंमें अथवा किसी एक वा अधिक
पदोंमें अवश्यमेव होता है ॥

६ पञ्भटिका

ल०— वसु गुरु रस जन द्वे पञ्भटिका ।

टी०—आठ मात्राकी उपरान्त एक गुरु और फिर ६ मात्रा हीं अन्तमें गुरु हो, परन्तु अन्तमें जगण न पड़े उसे पञ्भटिका छन्द कहते हैं ॥

उ०—सोरी सुन चितद्वै रघुवीरा । करु दाया सोपै बलवीरा ॥

प्रभु जानहु हीकी तुम पीरा । अब मोहीं करिये निज तीरा ॥

सू०—उपचित्रा और पञ्भटिकामें इतनाही भेद है कि उपचित्रामें जगण होता है, परन्तु पञ्भटिकामें उसका निषेध है । तीसरे पदको विचारकर देखो ॥

१० चौपाई

ल०— सौरह क्रम न 'ज त' न चौपाई ।

टी०—जिसके चारों चरणोंमें सिवाय इसके कि अन्तमें जगण अथवा तगण न पड़ें कोई और विशेष नियम न हो उसे चौपाई क्लृप्तक अथवा पादाक्लृप्तक कहते हैं । रूपचौपाई भी इसीको कहते हैं । अभिप्राय यह है कि इस छन्दकी अन्तमें गुरु लघु न हों । यथा तुलसीकृतरामायणे—

उ०—रामभजन विनु सुनहु खगिसा । मिटै न जीवन केर कलिसा ॥

हरि सेवकहिं न व्याप अविद्या । प्रभु प्रेरित तिहिं व्याप सुविद्या ॥

सू०—चौपाई कई प्रकारकी होती हैं । जिन चौपाइयोंमें अक्षरोंका नियम है वे सब वर्णवृत्तोंमें उदाहरण सहित मिलेंगी । ये सब छन्द बहुधा रामायणादि सद्ग्रन्थोंमें सूक्ष्म दृष्ट्या शो-

धनेसे मिलते हैं । पाठकोंके बोधार्थ उनमेंसे कई चौपाइयों-
के नाम यहां दिये जाते हैं, जैसे, विद्युन्माला, चम्पकमाला,
शुद्धविराट, मत्ता, प्रणव, अनुकूला, दीधक, भ्रमरविलसता,
स्वागता, तामरस, चन्द्रवर्त्म, कुसुमविचित्रा, मालती, मीदक,
नवमालिनी, कञ्जअवलि, प्रहरणकलिका, चक्र, अचलधृति
इत्यादि ॥

चौपाईके आधे अर्थात् दो चरणोंको अर्धाली कहते हैं । इस
छन्दके रचनेमें यह ध्यान रखना चाहिये कि लय न विगड़ने
पावे ॥

॥ महासंस्कारौ ॥ (१७ मात्राओंके छन्द २५८४)

१ राम

ल०— मनु राम गाये सुभक्ति सिद्धी ।

टी०—जिस छन्दमें ६ और ८ के विश्रामसे १७ मात्रा होती हैं,
और अन्तमें यगण होता है उसे राम छन्द कहते हैं । यह
छन्द प्रस्तारकी रीतिसे नया रचा गया है ॥

उ०—सुनिये हमारी, विनय मुरारी । दीजि हमारी, विपत्ति टारी॥
तुम धन्य स्वामी, प्रभू दयाला । अब बेगि तारो, सुहीं कृपाला

॥ पौराणिक ॥ (१८ मात्राओंके छन्द ४१८१)

१ राजीवगण

ल०— नौ नौ राजीवगण कल धारिये ।

टी०—नौ नौके विश्रामसे १८ मात्रा होती हैं ॥

उ०—दीनानाथ हरि बोला साधवा । चितमोहनकरन गोकुलमाधवा
तन सोहत सुभग चन्दन यादवा । मन भजो प्रीतम संकटवाधवा॥

सू०—इसको माली भी कहते हैं, तुकान्तमें गुरु लघुका कोई विशेष नियम नहीं है ॥

॥ महापौराणिक ॥ (१६ मात्राओंके छन्द ६७६५)

१ पीयूषवर्ष

ल०— दिसि निधी पीयूष, वरसत झरिलगा ।

टी०—१० और ६ के विश्रामसे १६ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'लग' लघु गुरु होते हैं ॥

उ०— सुमिर मन रघुवीर, सुख पैहै जहां ।

कुल्लनिसिमें लखा, चाहत ससि कहां ॥

यह सकल संसार, सपने तूल है ।

सांच मत जानै तु, देखत भूल है ॥

सू०—इसे आनन्दवर्धक भी कहते हैं ॥

२ सुमेरु

ल०— रवी कै लोकहू रचिये सुमेरु ।

टी०—१२ और ७ के विश्रामसे १६ मात्रा होती हैं । अन्तमें यगण होता है ॥

उ०— सियाको नाथको नित, सीस नावा ।

पदारथ चारहू इहिं, लोक पावा ॥

जनम यींहीं जु सारा, जात बीता ।

भजौरे सीत अवहूं, राम सीता ॥

सू०—किसी २ कविने इसको किसी चरणमें १६ और कीसी चरण में २० मात्रा मानी हैं । यह सर्व्वसम्मत नहीं है ॥

३. नरहरी

ल०— मनु सरन गहे सब देवा नरहरी ।

टी०—मनु १४ सर ५ के विश्रामसे १६ मात्रा होती हैं । अन्तमें
‘नग’ अर्थात् एक नगण और गुरु होता है ॥ यथा—

उ०— हरि सुनत भक्तकी वानी, दुख भरी ।

भूट प्रगटे खंभा फारी, तिहिँ घरी ॥

रिपु हन्यो दीन सुख भारी, दुख हरी ।

मन सदा भजौ चित लाई, नरहरी ॥

सू०—प्रस्तारकी रीतिसे यह छन्द नूतन रचा गया है ॥

॥ महादेशिक ॥ २० मात्राओंके छन्द १०६४६)

१ योग

ल०— द्वादश पुनि आठ सुकल, योग सुहायो ।

टी०—१२ और ८ के विश्रामसे २० मात्रा यगणान्त होती हैं ।
यह छन्द प्रस्तारकी रीतिसे नूतन रचा गया है ॥

उ०— यह जग भूठी हरिकी, नाम गहोरे ।

तरिही भवसिंधु परम, धाम लहारे ॥

काम तजौ धाम तजौ, बाम तजौरे ।

राम भजौ राम भजौ, राम भजौरे ॥

२ हंसगति

ल०— शिव सु अंक कल हंस, गती भन पिंगल ।

टी०—११ और ६ के विश्रामसे २० मात्रा होती हैं । इसके तु-
कान्तमें गुरु लघुका कोई विशेष नियम नहीं है ॥

उ०— जगत ईस नर भूप, सिया ढिग सोहत ।
 गल वैजन्तीमाल, सुजन मन मोहत ॥
 सुखमा चरनन चारु, जु निरखि पुरन्दर ।
 मगन नयन हो गये, प्रसुद कर सुन्दर ॥
 ॥ त्रैलोक ॥ (२१ मात्राओंके छन्द १७७११)
 १ स्रवङ्गम

ल०— गादि बसू दिसि, राम जगन्त स्रवंगमै ।

टी०—इस छन्दमें २१ मात्रा होती हैं । आदि वर्ण गुरु होता है ।
 अन्तमें एक जगण और एक गुरु होता है । ८ और १३ मा-
 त्राओं पर यति होती है ॥

उ०— ये जग नप्रवर, तहां विषयसुख तुच्छ है ।
 जन्म मरणको, आदि दुःख कर गुच्छ है ॥
 ताते हरि जन, संग सदा मन दीजिये ।
 राम कृष्ण गुण, ग्राम नाम रस भीजिये ॥
 २ चान्द्रायण

ल०—शिव दस जरा सुचन्द्र अयन कवि कीजिये ।

टी०—इस छन्दमें २१ मात्रा होती हैं । 'जरा' ११ मात्रा जगणान्त
 और १० मात्रा रगणान्त होती हैं । ११ और १० मात्रा पर
 विरति है ॥

उ०— हरि हर कृपानिधान, परमपद दीजिये ।
 प्रभुजू दयानिकेत, शरण रख लीजिये ॥
 नरवर विष्णु कृपाल, सबहिं सुख दीजिये ।
 अपनी दया विचारि, पाप सब मीजिये ॥

॥ महारौद्र ॥ (२२ मात्राओंके छन्द २८६५७)

१ रास

ल०—वसु वसु धारो, पुनि रस सारो, रास रचो ।

टी०—आठ आठ और छः के विश्रामसे इसमें २२ मात्रा होती हैं
'रस' शब्दका 'स' सार्थक है । अन्तमें सगण होता है । प्र-
स्तारकी रीतिसे यह छन्द नया रचा गया है ।

उ०— ईस भजौ जगदीस भजौ यह वान धरौ ।
सीख हमारी अति हितकारी कान धरौ ॥
काम तजौ धन धाम तजौ हरिभक्ति सजौ ।
राम भजौ बलराम भजौ श्रीकृष्ण भजौ ॥

२ राधिका

ल०— तेरा पै सज नव कला राधिका रानी ।

टी०—१३ और ९ के विश्रामसे २२ मात्राका राधिका छन्द सिद्ध
होता है । यह छन्द प्रस्तारकी रीतिसे नया रचा गया है ॥

उ०—सव सुधि बुधि गइ क्यों भूल, गई मति मारी ।
मायाको चरो भयो, भूलि असुसारी ॥
कटि जैहैं भवके फन्द, पाप नसि जाई ।
रे सदा भजौ श्रीकृष्ण, राधिकामाई ॥

३ विहारी

ल०— द्वै चारै छै आठ रचो रास विहारी ।

टी०—द्वै चारै = ८ + ६ + ८ के विश्रामसे २२ मात्राका विहारी
छन्द बनता है ॥ प्रस्तारकी रीतिसे यह छन्द नया रचा गया है ।

उ०—है यह जग भूठो हरिको नाम गहोरे ।
 यह तरिहै भवसिंधु परमधाम लहोरे ॥
 सब काम तजौ धाम तजौ बाम तजौरे ।
 श्रीराम भजौ राम भजौ राम भजौरे ॥

सू०—योग छन्दसे इस छन्दमें दो मात्रा अधिक होती हैं । तु-
 कान्तका कोई विशेष नियम नहीं ॥

॥ रौद्रार्क ॥ (२३ मात्राओंके छन्द ४६३६८)

१ उपमान

ल०— तेरह दस उपमान रच दै अन्तै कर्णा ।

टी०—१३ और १० मात्राके विश्रामसे उपमान छन्द सिद्ध होता
 है । अन्तमें 'कर्णा' दो गुरु होते हैं ॥

उ०—राम कृष्ण गोविन्द भज, ऐ मेरे मीता ।
 दीनवन्धु आनन्दघन, कहिकै तू जीता ॥
 अब बोलिलै हरिनामै, काल जात बीता ।
 हाथ जोड़ विनती करौं, नाहिं जात रीता ॥

२ हीर

ल०— आदि गुरु अन्तहिं रू तेइस कुरु हीरमें ।

टी०—इसमें २३ मात्रा होती हैं आदिवर्ण गुरु होता है और
 अन्तमें रगण होता है । तीन यमक होते हैं ॥

उ०—राम भजौ, कृष्ण भजौ, गोकुलके नाथहीं ।
 रात दिना, मान विना, नाइ नाइ मायहीं ॥

काम तजौ, धाम तजौ, वाम तजौ साथहीं ।
मित्त गहो, नित्त अहो, धर्महिंको पाथहीं ॥

॥ अवतागी ॥ (२४ मात्राओंके छन्द ७५०२५)

१ रोला

ल०— रोलाकी चौबीस, कला यति शंकर तेरा ।

टी०—११ और १३ के विश्रामसे इसमें २४ मात्रा होती हैं ।
किसी २ कविका मत है कि इसके अन्तमें दो गुरु चाहिये ।
परन्तु यह सर्वसम्मत नहीं है ॥

उ०— राम कृष्ण गोविन्द, भजे सुख होत घनेरो ।
इहां प्रमोद लहन्त, अन्त वैकुण्ठ वसेरो ॥
मृगतृष्णा सो विषै, तुच्छ अति बन्धन जीको ।
तातें छाड़ि कुसंग, गहो शरणो हरिहीको ॥

सू०—इसका दूसरा नाम काम्य भी है । जिस रोलाके चारों
चरणोंमें ११ वीं मात्रा लघु हो वह रोला 'काव्य' कहाता है ।
अप्याय, कुण्डलियामें इसीका प्रयोग होना चाहिये । किसी २ कवि-
ने 'काव्य' की यति ६, ८ और १० पर मानी है ॥

२ दिगपाल

ल०— सविता विराज दोई, दिगपालछन्द सोई ।

टी०—सविता (१२), बारा बारा के विश्रामसे २४ मात्राका
दिगपाल छन्द होता है ॥

उ०—हरि नाम एक सांचो, सब भूठ है पसारा ।
भाई न वाप कोई, तुव संग जानहारा ॥

रे मान् वात मेरी, मायाहिं त्यागि दीजि ।

सब काम छाँडि मीता, इक रामनाम लीजि ॥

सू०—रेखता इसी टङ्कका होता है । इसीके आधेको किसी र कविने सृष्टुगति माना है ॥

३ रूपमाला

ल०—रत्न दिसि कल रूपमाला, कीजिये सानन्द ।

टी०—१४ और १० के विश्रामसे २४ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'नन्द' गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—जाति है वनवादिही गल, बाँधिके बहु तन्व ।

धामहीं किन जपत कामद, रामनाम सुमन्व ॥

ज्ञानकी कर गूदरी दृढ़, तत्व तिलक वनाव ।

दास परमानूप सगुनस, रूपमाला गाव ॥

४ शोभन

ल०—चौबिस कला विद्या दिसा, यती सोभन साज ।

टी०—१४ और १० के विश्रामसे इसमें २४ मात्रा होती हैं । अन्तमें जगण होता है ॥

उ०—जीरिंकर सुनि पाँय पङ्कज, करी दण्डप्रणाम ।

पूजिवेकी कुसुम लावें, लही आयसु राम ॥

साथ सुन्दर बंधु लक्ष्मण, चले आनँदकन्द ।

देह दुति जिनि शक । दंजन, चाल वाल गयन्द ॥

५ लीला

ल०—सप्त कलै त्रय बार लिये गुन लीला सुखसों ।

टी०—७, ७, ७ और ३ मात्राकी विश्रामसे इसमें २४ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'सो' सगण होता है ॥

उ०—जिनके चरण, सुमुन्दर हैं कछु उपमा न, वनै ।

जिनके शरण, अजादिक हैं, इमि सब वेद, भनै ॥

जिनके ध्यान, मुनीश करै, नित उठि शेष, गनै ।

ऐसे प्रमुहिं, विचार भजौ, जो सब पाप, हनै ॥

॥ महावतारी ॥ (२५ मात्राओंके छन्द १२१३६३)

१ गगनानङ्ग

ल०— सोरहनौ कल धरि कविरच्चिय गगन अनंगहीं ।

टी०—१६ और ६ मात्राकी विश्रामसे इसमें २५ मात्रा होती हैं ।

'धरि' का 'रि' सार्थक है । अन्तमें रगण होता है । किसी २

गन्धकारने इसकी यति १२ और १३ पर मानी है ॥

उ०—माधव परम वेद निधि देवक, असुर हरन्त तू ।

पावन धरम सेतु कर पूरण, सजन गहन्त तू ॥

दानव हरण हरि सुजन सन्तन, काज करन्त तू ।

देखहु कस न नीत कर मुहिं कहँ, मान धरन्त तू ॥

सू०—इसमें विशेष नियम यह है कि प्रति पदमें ५ गुरु और १५

लघुसे अधिक वा कम गुरु लघु न हों ॥

२ मुक्तामणि

ल०—तेरह रवि कल कर्ण धरि रचिये मुक्तामणीको ।

टी०—१३ और १२ मात्राकी विश्रामसे इसमें २५ मात्रा होती हैं ।

अन्तमें 'कर्ण' दो गुरु होते हैं ॥

उ०—कुण्डल ललित कपोल पर, सुखवि देत हैं ऐसी ।
घनमें चपला दमकि अति, लगनीकी द्रुति जैसे ॥
चन्दन खौर विराज सुचि, मन लक्ष्मी अति राजै ।
सब आभा तिहुंलीकवी, सुखके आगे लाजै ॥

३ सुगीतिका

ल०—कल तिथि दिसा हूं धारि रच सुगीतिका सानन्द ।

टी०—१५ और १० के विश्रामसे इसमें २५ मात्रा होती हैं ।
आदिमें लघु और अन्तमें 'नन्द' गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—हजार कोटि जु हींय रसना, एक एक सुखय ।
ब्रह्मा अरब्धिन जो वसे रस, नानि मण्डि समय ॥
खरो रहै दिग दांस तनु धरि, देव परम पुनीत ।
कहै कछू अहिराज तव ब्रज, राज तव यश गीत ॥

सू०—'ह' दग्धाक्षर है परन्तु यहां देव नुतिमें प्रयोग किया गया है
इसलिये हकारका अथवा जगणका दोष नहीं है ॥
॥ महाभागवत ॥ (२६ मात्राओंके छन्द १८६४१८)

१ शङ्कर

ल०— सोला दोष कला यति कीजे, शंकरे सानन्द ।

टी०—१६ और १० के विरामसे इसमें २६ मात्रा होती हैं । अन्त
में गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—राम राम रघुवीर कृपाला, सन्तहीं अनुकूल ।
दीनानाथ दयानिधि दाता, अन्त पदके मूल ॥

रामचन्द्रपदमें नहिं दीनीं, चित्त-तेरी भूल ।
सुख-सम्पत्ति-धन-देह-धामकी, देखिकर मत भूल ॥

२ विष्णुपद

ल०— सोरह दस कल अन्त गहो भल, सबतें विष्णु पदै ।

टी०—१६ और १७ के विरामसे इसमें २६ मात्रा होती हैं । अन्त में गुरु होता है ॥ यथा—छन्दोऽर्थांवि ।

उ०—किमि प्रभु कहीं सहस सुरपतिसे, सिगरे दृष्टि परै ।

दास सेस सत सहस योग कह, अबको कहत डरै ॥

कछो लिख्यो चाहै अनदेखि, तू निजअोर तकै ।

है यह सहस हजार विष्णुपद, अहिमा लिखि न सकै ॥

३ कामरूप

ल०— निधि मुनिन दिसि धरि, काम रूपहिं,
साज गल युत मित्त ।

टी०—निधि ६ मुनि ७ और दिसि १० के विश्रामसे इसमें २६ मात्रा होती हैं अन्तमें गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—सित पछ सुदसमी, विजय तिथि सुर, वैद्य नखत प्रकास ।

कपि भालु दल्युत, चले रघुपति, निरखि समय सुभास ॥

तरु कुधर मुख नख, शस्त्र चित्त बुधि, वीर्य विक्रम प्रद ।

नभ भूमि जहँ तहँ, भरे वनचर, रामकृपा अरूढ़ ॥

४ भूलना (प्रथम)

ल० मुनिरामगुनि, वानयुतगल, भूलन प्रथम, मतिमान

टी०—हे मतिमान ! मुनि ७ × राम ३ + वाण ५ अर्थात् ७, ७, ७ और
५ मात्रा के विश्रामसे २६ मात्रा होती हैं । अन्तमें गुरु लघु
होते हैं ॥

उ०—हरि राम विभुः पावन परम, गोकुल वसत, मनमान ।
कृषि धाम सुर, मारन असुर, मूरति मयन, वलवान ॥
यदुवंश प्रभु, तारण तरण, क णायतन, गुनमान ।
भल जान कहँ, पछिताय फिर, क्यों रहत हो, अनजान ॥
५ गीतिका (माचिक)

ल० रत्न रवि कल धारि कै लग अन्त रचिये गीतिका ।
टी०—१४ और १२ के विश्रामसे २६ मात्रा होती हैं । अन्तमें लघु
गुरु होते हैं ॥

उ०— रहत जिनके प्रेम घेरे, धन्य ब्रजवासी सबै ।
ब्रह्म एक अनौह अविगति, घरनघर जिनके फवै ॥
धन्य श्रीवसुदेव देवकि, पुत्र करि जिन पाइयो ।
धन्य यशसति नन्द जिन पय, प्याय गोद खिलाइयो ॥
६ गीता

ल०— कृष्णारजुन संवाद गीता ग्वाल युत मनु भानु ।

टी०—मनु १४ भानु १२ के विश्रामसे इस छन्दमें २६ मात्रा होती
हैं । 'ग्वाल' अन्तमें गुरु लघु होते हैं । यथा छन्दाऽर्णवे—

उ०— मन वावरे अजहूँ समुक्ति, संसार भ्रम दरियाउ ।
बूहि तरनिका यह छोड़िकै, कहु नाहिँ और उपाउ ॥
लै संग भक्ति मलाह करि, आरूप सो लै लाउ ।

श्रीरामसीताचरितचरचा शुद्ध गीता गाउ ॥

॥ नाचचिक ॥ (२७ मात्राओंके छन्द ३१०८११)

१ सरसी

ल०—सोरा संभु यती गल कीजे, सरसी छन्द सुजान ।

टी०—१६ और ११ के विश्रामसे इसमें २७ मात्रा होती हैं । अन्तमें गुरु लघु धरा ॥

उ०—भोपर कृपा करहु अब स्वासी, अन्तरजामी आप ।

ऐसा ही मनमाहिँ विचारे, काटो मेरे पाप ॥

तुम विन आन दृष्टि नहिँ आवै, कीजे जाको जाप ॥

तुमहि वतावो ध्याऊँ जाको, जो जारै मम ताप ॥

२ शुभगीता

ल०—सुधन्यतिथिरविअर्जुनहिँ, श्रीकृष्णशुभगीताकही ।

टी०—१५ और १२ के विश्रामसे इसमें २७ मात्रा होती हैं । रवि सार्थक है 'र' से रगणका बोध होता है इसकी अन्तमें रगण होता है ॥

उ०—भजौ सदा हरिनाम साँचो, त्याग भूठे कामहीं ।

करौ सदा सत्संग सेवौ, खासि आठौ जामहीं ॥

दृथा न जन्म गँवाइये नर, देह पुनि नहिँ पाइये ।

चहौ भलो दुहुँलोकमें नित, रामसीता गाइये ॥

सू०—'सुधन्य' और 'भजौस' कल्याणार्थ हैं, इस कारण इनके रगणका दोष नहीं माना जाता ॥

॥ यौगिक ॥ (२८ मात्राओंके छन्द ५१४२२६)

१ सार

ल०—सोरह रवि कल अन्तै कर्णा, सार छन्द रच नीको ।

टी०—१६ और १२ मात्राके विश्रामसे इसमें २८ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'कर्णा' दो गुरु होते हैं ॥

उ०—उर अभिराम राम अरु लछमन, मधुर मनोहर जोरी वारों सकल विप्रकी शोभा, जो कछु कहों सु घोरी ॥

पीत चौतनी धरे सीस प्रै, पीतम्बर मन मानी ।

पीत यज्ञउपवीत विराजत, मनो वसन्ती वानो ॥

सू०—प्रभाती इसी ढंग पर होती है । इसे नरेन्द्र और दीवै भी कहते हैं । पदके आद्यक्षरके गुरु लघुके सम्बन्धसे इसमें १६ भेद होते हैं । महाराष्ट्रीय भाषाकी साकी भी कुछ २ इसी धज पर होती है । किसी २ कविने इसी छन्दको भगण, र-गण, नगण, नगण, जगण, जगण और यगणके प्रयोगसे रचकर वर्णवर्तीमें इसका नाम नरिन्द्र रक्खा है । यह अनुचित नहीं है क्योंकि प्रक्षारकी रीतिसे कई भेद प्रगट हो सकते हैं ।

२ हरिगीतिका

ल०—सोरह रवी लग अन्तदै रचि, लीजिये हरिगीतिका ।

टी०—१६ और १२ के विश्रामसे २८ मात्रा होती हैं । अन्तमें लघु गुरु होते हैं । यथा तुलसीकृतरामायणे—

उ०—ये दारिका परिचारिका करि, पालिबी करुणामयी ।

अपराध छमियो बोलि पठये, बहुत हों ढीठी दयी ॥

पुनि भानुकुलभूषण सकल सन, मान विधि समधी किये ।
कहि जात नहिं बिनती परस्पर, प्रेम परिपूरण हिये ॥

सू०-विशेष रोचकताकेलिये कविजन इसके अन्तमें बहुधा रगण
(५। ५) रखते हैं, परन्तु यह कोई विशेष नियम नहीं है ॥
इसके आदिमें तगण है परन्तु देवकाव्यके कारण उसका यहां
दोष नहीं है ।

॥ महायौगिक ॥ (२६ मात्राओंके छन्द ८३२०४०)

✓ १ चुलियाला

ल.—तेरह सोरह मत्त धरि, चुलियालारच छन्द जु लाचिता

टी०-१३ और १६ के विश्रामसे इस छन्दमें २६ मात्रा होती हैं।
'चुला' अन्तमें जगण और एक लघु होता है । दोहेके अन्त-
में एक जगण और एक लघु रखनेसे यह छन्द सिद्ध होता
है । कोई इसके दो और कोई चार पद मानते हैं । जो दो
पद मानते हैं वे दोहेके अन्तमें एक जगण और एक लघु
रखते हैं । जो चार पद मानते हैं, वे दोहेके अन्तमें एक
यगण रखते हैं ॥

पहिला

उ०-मेरी बिनती मानके, हरिजू देखो नक दयाकर ।
नाहीं तुम्हरी जात है, दुख हरबेकी टेक सदाकर ॥

दूसरा

हरि प्रभु माधव वीरवर, मनमोहन गोपति अविनासी ।
कर मुरलीधर धीर नर, वरदायक काटत भव-फाँसी ॥

जनविपदाहर राम प्रिय, मनभावन सन्तनघटवासी ।

अव मम और निहारि दुख, दारिद्र हरि कीजि सुखरासी ॥
सू०—५ मात्रा सोरठेके अन्तमें भी लगानसे यह छन्द सिद्ध होता है ॥

२ मरहटा

ल०— दस वसु शिव यति धर, अन्तग्वाल कर,
रचिय मरहटा छन्द ।

टी०—१०, ८ और ११ मात्राके विश्रामसे इसमें २६ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'ग्वाल' गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—इक दिन रघुनायक, सीयसहायक, रतिनायक अनुहारि ।

सुभ गादावरितट, विमल पञ्चवट, बैठे हुते मुरारि ॥

छवि देखत ही मन, मदन मध्यो तन, सूपनखा तिहिँ काल ।

अति सुन्दर तन कारि, ककु धीरज धरि, बोली बचन रसाल ॥

॥ महातैयिक ॥ (३० मात्राओंके छन्द १३४६२६६)

१ चवपैया

ल०— दिसि वसु रवि मत्तन, धरि प्रतिपदन,
सग अन्तहिँ चवपैया ।

टी०—१०, ८ और १२ के विश्रामसे इसमें ३० मात्रा होती हैं ।
अन्तमें 'सग' एक सगण और एक गुरु होता है ॥ यथा तुल-
सीकृतारामायणे—

उ०—भे प्रगट कृपाला, दीनदयाला, कौशिल्याहितकारी ।

हर्षित महतारी, सुनिमनहारी, अद्भुतरूप निहारी ॥

लोचन अभिरामा, तनु घनश्यामा, निज आयुध भुज चारी ।

भूपन वनसाला, नयन विशाला, शोभासिन्धु खरारी ॥

२ ताटङ्ग

ल०—सोरह रत्न कला प्रति पादहिं व्है ताटंके मो अन्तै ।

टी०—१६ और १४ के विश्रामसे इसमें ३० मात्रा होती हैं । अन्त-
में मगण होता है ॥

उ०—दीनदयाल कृपाल सुना हरि, दीनानाथा कंसारी ।

पूरण पावन दासउधारण, माधो यादा औतारी ॥

मुष्टिकमारण विपदाठारन, कुब्जा दासीको तारी ।

में अधभागी तुम जनपागी, तारी मेरी है बारी ॥

३ कुकुभ

ल०—सोरह रत्न कला प्रति पादै, कुकभा अन्तै दे कर्णा ।

टी०—१६ और १४ के विश्रामसे इसमें ३० मात्रा होती हैं । अन्त
'में' कर्णादे गुरु होते हैं ॥ यथा छन्दस्त्वस्त्रे—

उ०—गिरिधर मोहन वंसीधारी, राधापति हरि वलवीरा ।

ब्रजवासी सन्तनहितकारी, शूरा हलधर रणधीरा ॥

सुन्दर रामप्रताप सुरारी, यमुदाको पीयो छीरा ।

चक्रपाणि कह सुनौ विहारी, चितवनसे हर मम पीरा ॥

४ रुचिरा (सन्नेमागेर)

ल०—मत्त धरौ मनु और कला, जन गंत सुधारिर चौ रुचिरा ।

टी०—१४ और १६ के विश्रामसे इसमें ३० मात्रा होती हैं । 'जन-
गन्त' जगण न हे । अंतमें गुरु हे ।

उ०—या कलि सों नहिं काल कहूं, सहजै नर होवहि तार भला ।

निसि द्यौसी सत बैन गहे, हरिनाम रटै सब छोरि छला ॥

या जगमें द्रुक सार यही, नर जन्म लिये कर याहि फला ॥
 रामलला भजु रामलला, भजु रामलला भजु रामलला ॥
 सू०—दूसरे पदमें गुरु लघुका क्रम भङ्ग है इसी कारण यह सा-
 चिक छन्द है ॥

॥ अश्रावतारी ॥ (३१ मात्राओंके छन्द २१७८३०६)

१ वीग

ल०—वसु वसु तिथि सानन्द सर्वैया, यारो वीरि पँवारो गाव ।
 टी०—८, ८ और १५ के विश्रामसे इस 'मात्रिक सर्वैया' अथवा
 'वीर' छन्दमें ३१ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'नन्द' गुरु लघु
 होते हैं, आल्हा इसी ढङ्ग पर रचा जाता है ॥

उ०—सुमिरि भवानी जगदम्बाका, श्रीसारदके चरन मनाय ।
 आदि सरस्वति तुमका ध्यावौ, माता कण्ठ विराजौ आय ॥
 जोति बखानौं जगदम्बाके, जिनकी कला बरनि ना जाय ।
 शरद चन्द सम आनन राजै, अति छवि अङ्ग अङ्ग रहि छाया ॥
 ॥ लाक्षणिक ॥ (३२ मात्राओंके छन्द ३५२४५७८)

१ त्रिभङ्गी

ल०— दस वसु वसु सङ्गी, जन रस रङ्गी,
 छन्द त्रिभङ्गी, गन्त भलो ।

टी०—१०, ८, ८ और ६ के विश्रामसे ३२ मात्रा होती हैं 'जन'
 इसमें जगणका निषेध है । 'गन्त' अन्तमें गुरु होता है ॥

उ०—सुरकाजसँवारन, अधमउधारन, दैत्यविदारन, टेक धरे ।
 प्रगटे गोकुलमें, हरि छिनछिनमें, नन्दहियेमें, मोदभरे ॥

धिनताकधिनाधिन, ताकधिनाधिन, ताकधिनाधिन, ताकधिना ।
 नाचत जसुदाको, लखि मन छाको, तजत न ताको, एक छिना ॥
 सू०—किसी २ कविने इस छन्दके अन्तमें लघु वर्ण भी रक्खा है,
 परन्तु प्रायः श्रेष्ठ कवियोंने गुरु ही माना है, और यह रोचक
 भी होता है । इसमें तीन यमक होते हैं । वीर रसके वर्णनमें
 यमक सहित इसी छन्दको किसी २ कविने शुद्धध्वनि नामक
 छन्द माना है और इसमें जगणका निषेध नहीं किया है ॥
 अतिबलउदग्ग नृप साह अग्ग जव समर मग्ग चलि खग्ग करे ।
 कह कवि चिन्तामनि विकट कटक तहँ काटि काटिके धरनि भरे ॥
 रिपु हनत हल्यितन वमत रुधिर जनु गिरि गेर युत भरनि भरै ।
 खसि परत शैलसीं अहि उदण्ड जिमि खण्डित सुण्डाडण्ड परै ॥
 चौपार्श्वके अन्तमें एक चिभङ्गी रखकर कवियोंने हुल्लास छन्द
 माना है । चौपार्श्वके अन्त पदको सिंहावलोकित रीतिसे चिभङ्गी-
 के आदिमें रखते हैं । यथा छन्दससारे—

सौरह सौरह काल चरननकै ।

ऐसे पादाकुलक वरनकै ॥

आदि सु पादाकुलक वखानो ।

तापर छन्द चिभङ्गी ठानो ॥

ठानो तिरभङ्गी छन्द सुअङ्गी है वडुरङ्गी मनहिं हरे ।

चवसष्टि कला करि सो आगे धरि वसु चरनन कविता सुधरै ।

हुल्लास सुकन्दा आनँदकन्दा जस वर चन्दा रूप रजै ।

यों छन्द वखानै सब मनमानै जाके वरनत सुकवि सजै ॥

इसके अन्तके चारों चरणोंमें जगणका निषेध है ॥

२ पद्मावती

ल०—दस वसु मनुमत्तन, पै विरती जन,

दैं पद्मावति इक कर्णा ।

टी०—१०, ८ और मनु १४ के विश्रामसे इसमें ३२ मात्रा होती हैं । अन्तमें 'कर्णा' दो गुरु होते हैं, परन्तु 'जन' जगण नहीं होना चाहिये ॥

उ०—यद्यपि जगकर्ता, पालक हर्ता, परिपूरण वेदन गाये ।

प्रभु तदपि कृपाकरि, मानुषवपु धरि, यल पूछन हमसीं आये ॥

सुन सुरवरनायक, राक्षसघायक, रक्षहु मुनिजन यश लीजे ।

शुभ गोदावरितट, विशदं पंचवट, पर्णकुटी प्रभु तहँ कीजे ॥

सू०—इसीको कमलावती भी कहते हैं ॥

३ समानसवैया

ल०—सोरह सोरह मत्त धरहुजू, छन्द समान सवैया सोभत ।

टी०—१६, १६ के विश्रामसे ३२ मात्रा होती हैं । अन्तमें भगण होता है ॥ यथा भाषाछन्दोमंजर्याम्—

उ०—आँसू तीरथ न्हात रहत हैं, पलक मढ़ी सुस्मिरन आराधत ।

दर्श आसकी साला लीन्हे, मोह मानको मनतें बाधत ॥

तपवो करत ताप विरहानल, जपवो करत गुनन तन दाधत

सोवत नहिं सेवत वरुणीवन, रघुवरनैन योग नित साधत ॥

४ दण्डकला

ल०— दस वसु विद्यापै, बुध विरती दे,

अन्त सगन जन दंडकला ।

टी०—१०, ८ और १४ के विश्रामसे सगणान्त दण्डकला छन्द होता है । इसमें ३२ मात्रा होती हैं, 'जन' जगण इसमें न चाहिये । किसी किसीने इसके अन्तमें केवल गुरु ही माना है ॥

उ०—फूलफूलनि ल्यावै, हरिहिं सुनावै, है या लायक भोगनिकी ।
अरु सब गुन पूरी, खादनि रूरी, हरनि अनेकन रोगनिकी ॥
हंसि लिहिं कृपानिधि, लखि योगीविधि, निन्दहिं अपने योगनकी
नभते सुर चाहै, भागु सराहै, वारन दंडकलोगनकी ॥

५ दुर्मिल

ल०—दस वसु मनु मत्तन, पै विरतीजन,
सो कर्णा दुमिला कीजे ।

टी०—१०, ८ और १४ के विश्रामसे ३२ मात्रा होती हैं । 'जन' जगण नहीं चाहिये । 'सो कर्णा' अन्तमें एक सगण और दो गुरु होते हैं ।

उ०—जै जय रघुनन्दन, अमुरविहंडन, कुलसंडन यशकी धारी ।
जनमनसुखकारी, विपिनविहारी, नारि अहिल्यहिं सी तारी
शरणागत आयो, ताहि वचायो, राज विभीषणको दीनों ।
दसकन्धविदारी, पन्थसुधारी, काज सुरन जनको कीनों ॥

सू०—भिखारीदासजीने उदाहरणमें पहिले और दूसरे पदके अन्त में दो गुरु और तीसरे और चौथे पदके अन्तमें एक सगण रक्त्वा है । यह सर्वसम्मत नहीं है और छन्दः प्रथासे भी विरुद्ध है, श्रीमद्भट्ट हलायुधजीका इससे थोड़ा विरोध है ।

उन्होंने इस छन्दके अन्तमें गुरु लघुका कोई विशेष नियम नहीं रक्खा है ॥

६ खरारी

ल०—द्वै चारै छै आठ दसै मत्त सजाओ लै नाम खरारी ।

टी०—द्वै चारै = ८ + ६ + ८ + १० के विश्रामसे खरारी छन्द सिद्ध होता है। इसके अन्तमें गुरु लघुका कोई विशेष नियम नहीं है।

उ०—श्रीशङ्कर दिनरात जपें ध्यान लगाई, सब काम विहाई ।
खड्ग नाम जपौ मित्त सदा चित्त लगाई, चाहो जु भलाई ॥
सब पापनको जारौ भवसिंधु तरी रे, सिख मोरि गहौ रे ।
श्रीराम भजौ राम भजौ राम भजौ रे, श्रीराम भजौ रे ॥

सू०—प्रस्तारकी रीतिसे यह छन्द नया रचा गया है ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरेमात्रिकसमान्तर्गतसाधारण-
छन्दोवर्णननाम द्वितीयो मयूखः ॥ २ ॥



अथ

मात्रिकसमान्तर्गतदण्डकप्रकरणम् ।

विदित हो कि ३२ मात्राओंसे अधिक मात्रावाले छन्द मात्रिक दण्डक कहते हैं ॥

३० मात्राओंके छन्द

१ करखा

ल०—धरि मुनि तीसै, वसु भानु वसु अंक यति,
यों रचहु छन्द, करखा सुधारी ।

टी०—८, १२, ८ और ६ के विरामसे इसमें ३० मात्रा होती हैं ।
'यो' अन्तमें यगण होता है ।

उ०—नसो नरसिंह, बलवन्त नरसिंह प्रभु, सन्त हितकाज, अवतार
धारो । खम्भतें निकसि, भू हिरनकश्यप पटक, भूटक दै नखन-
सों उदर बिदारो ॥ ब्रह्मरुद्रादि, नाय सिर^{सि} जय जय कहत,
भक्त प्रह्लाद, को गोद लीनो । प्रीतिसों चाटि, दै राज सुख
साज सब, नरायनदास, को अभय दीनो ॥

२ हंसाल

ल०—बीसौ सत्रह यति धरि निरसंक रचौ,
सबै या छन्द हंसाल भायौ ।

टी०—२० और १७ मात्राके विश्रामसे ३७ मात्रा होती हैं । अन्त-
में 'यो' यगण होता है ॥

उ०—तो सो ही चतुर सुजान परवीन अति, परे जिन पींजरे मोह
 कून्ना । पाय उत्तम जनस लायके चपल मन, गाय गोविन्द-
 गुन जीत जून्ना ॥ आप ही आप अज्ञान नलिनी वैंधो, विना
 प्रभु भजे कइ वार मून्ना । दास सुन्दर कहै परमपद तो लहै,
 राम हरि राम हरि बोल मून्ना ॥

३ द्वितीय भूलना

ल०—सैंतिस यगंत यति, दोष दस दोष मुनि,
 जानि रचिये द्वितिय, झूलनाको ।

टी०—१०, १० १०, और ७ के विश्रामसे ३७ मात्रा हाती हैं ।
 अन्तमें यगण हाता है ॥

उ०—जैति हिमवालिका, असुरकुलधालिका, कालिकाऽमालिका
 सुरस हेतू । छमुख हेरस्वकी, अम्ब जगदम्बिके, प्राणप्रिय-
 वल्लभा वृषभकीतू ॥ सिद्धि औ ऋद्धि सुख, खान धनधान्यकी,
 दानि शुभगाङ्गना सुतनिकेतू । भुक्तिमुक्तीप्रदे, वाणि म-
 हारानी, प्रणत ईश्वरीकहँ शरणदे तू ॥

सू०—किसी २ कविने इसके दोही पद मानकर तीसरा भेद
 मान लिया है । यथा—

तीन दस भूलना अन्त मुनि भूल ना दोय पद तीसरो भेद भायो ।
 राम भजु वावरे राम भजु वावरे रामके नामको वेद गायो ॥

४० मात्राओंकी छन्द

१ मदनहर

ल०—दस वसु मनु यामा, गन्त ललामा,
आदि ललादै सुन्दर रचिये मदनहरै ।

टी०—१०, ८, १४, ८ की विश्रामसे ४० मात्रा होती हैं । 'आदि लला' आदिमें दो लघु होते हैं । 'गन्त' अन्तमें १ गुरु होता है ।

उ०—सखि लखि यदुराई, क्विअधिकार्ई, भागभलाई जान परै,
फल सुकृति करै । अति कान्तिसदन मुख, हातहिं सन्मुख.
दास हिये सुख भूरि भरै, दुख दूरि करै ॥ क्वि मोरपखनकी
पीतवसनकी, चारु भुजनकी चित्त अरै, सुधि बुधि विसरै ।
नवनीलकलेवर, सज्जल भुवनधर, वर इन्दीवरक्वि निदरै,
मदमदन हरै ॥

सू०—कहीं २ इस छन्दमें ३२ और ८ पर यति कही है उसे अशुद्ध जानना । इसका नाम मदनगृह भी है ।

२ उद्धत

ल०—दस दस दस दस कल, पुनि अन्त धरौ गल,
मन राखि अचंचल, साज उद्धत छन्द ।

टी०—१०, १०, १० और १० के विश्रामसे ४० मात्रा होती हैं ।
'गल' अन्तमें गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—विभु पूरन रघुवर, सुन्दर हरि नरवर, विभु परमधुरत्वर, राम

जू सुखसार । मम आशयपूरन, बहु दानवमारन, दीनन
जनतारन, कृष्णजू हर भार ॥ बहु दैत्यनिकन्दन, जनमनचख
अंजन, कलिमल सब गंजन, सन्तमनआधार । रविर्वसहिं
सखडन, दुखदारुनखखडन, अग जग नित वन्दन, वेगि दी-
जिय तार ॥

३ शुभग

ल०—दुइ नख धरहु मत्त, कह पिङ्गलजु सत्त,
यति दोष गुनि तत्त, शुभगौहिं रच मित्त ।

टी०—दुइ नख (२०) अर्थात् ४० मात्रा दस दसके विश्रामसे जाती
है । मित्तका 'त' सार्थक है । अन्तमें तगण होता है ॥

उ०—जब चलत दशरत्य, सुत राम समरत्य, बलजुत्य सिलहत्य,
सदसत्त गर्जन्त । वरसुखडफुङ्कार, धौसाहि धुङ्कार, सुनि
धनुषटङ्कार, हुङ्कार सासन्त ॥ रथचक्र धहरानि, धराधर-
हहरानि, वरवाजिपदरेणु, उठि सूर ठापन्त । सटपटत
लङ्केश, अटपटत दिग्गजरु, सटपटत चपि श्रेष, फणि कामठ-
कापन्त ॥

४ विजया

ल०—दिसन चहुँ छा रही किरति विजया मही दनुज-
कुल घालही जनन कुल पालही ।

टी०—दस दस मात्राओंकी चार यमकोंका विजया छन्द होता
है, इसमें अक्षरोंका नियम नहीं केवल मात्राओंका नियम है
अन्तमें रगण रखना कर्गमधुर होता है । यथा छन्दोऽर्णवे—

उ०—सितकमलवंश सी शीतकरचंद्रं सी विमल विधि हंस सी हीर-
वर हार सी । सत्य गुण सत्य सी सन्तरसवंश सी ज्ञान गौरत्व
सी सिद्धि विस्तार सी ॥ कुन्द सी कास सी भारतीवास सी
सुरतरुनिहार सी सुधारससार सी । गङ्गजलधार सी रजतकी
तार सी कीर्ति तव विजयकी शंभुआंगार सी ॥

सू०—इसके चारों पदोंमें वर्णसंख्या समान न रहे । यदि समान
हो तो यह वर्णदण्डकोंके भेदोंमेंसे एक भेद हो जायगा ॥

४६ मात्राओंके छन्द

१ हरिप्रिया

ल०—सूरज गुन दिसि सजाय, अन्तै गुरु चरण ध्याय,
चित्त दै हरिप्रियाहिं, कृष्ण कृष्ण गावो ।

टी०—१२, १२, १२ और १० मात्राओंके विश्रामसे ४६ मात्रा-
का हरिप्रिया छन्द होता है । इसके पदान्तमें गुरु होता है ।
हरिप्रियाकी 'रि' को गुरु मानो ॥

उ०—सोहने कृपानिधान, देवदेव रासचन्द्र, भूमिपुत्रिका समेत,
देवचित्त सोहैं । मानो सुरतरु समेत, कल्पवेलि छविनिकेत
शोभा शृङ्गार किधौं, रूप धरे सोहैं ॥ लक्ष्मीपत लक्ष्मीयुत
देवीयुत ईश किधौं, छायायुत परमईश, चारु वेष राखैं ।
वन्दौं जग मात तात, चरण युगल नीरजात, जाको सुरसिद्ध-
विद्य, मुनिजन अभिलाखैं ॥

सू०—भिखारीदासजीने इसका नाम चञ्चरी लिखा है ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरेमात्रिकसमान्तर्गतदण्डकवर्णननाम
तृतीयो मयूखः ॥ ३ ॥

अथ मात्रिकार्द्धसमप्रकरणम् ।

जिस मात्रिक छन्दकी पहिले और तीसरे अर्थात् विषम चरणों-
की और दूसरे और चौथे अर्थात् सम चरणोंकी लक्षण मिलते
हैं उसे मात्रिक अर्द्धसम कहते हैं ॥

मात्रिक अर्द्धसम छन्दोंकी संख्या जाननेकी यह रीति है कि
प्रथम चरणकी मात्राकी समसंख्याको द्वितीय चरणकी मात्रा-
की समसंख्यासे गुणा करो, जो गुणनफल आवे उसीको
उत्तर जानो । यथा—

विषमचरण	समचरण	कुलभेद	उदाहरण
३	२		
मात्रा १५	५		विषमचरण समचरण
समसंख्या ३ × २ = ६		१ला भेद १५	५
		२रा भेद १५	॥
		३रा भेद १५	५
		४था भेद १५	॥
		५वां भेद १५	५
		६वां भेद १५	॥

दूसरा उदाहरण

विषमचरण	समचरण	कुलभेद	उदाहरण
३	४		
मात्रा १५	५५		विषमचरण समचरण
समसंख्या ३ × ५ = १५		१ला भेद १५	५५
		२रा भेद १५	११५
		३रा भेद १५	१५१

४था भेद	१५	५११
५वां भेद	१५	१११
६वां भेद	५१	५५
७वां भेद	५१	११५
८वां भेद	५१	१५१
९वां भेद	५१	५११
१०वां भेद	५१	११११
११वां भेद	१११	५५
१२वां भेद	१११	११५
१३वां भेद	१११	१५१
१४वां भेद	१११	५११
१५वां भेद	१११	११११

इसी प्रकार और भी जानलो, परन्तु प्राचीन ग्रन्थकारोंने इसे केवल कौतुक और समयनाशक जानकर त्याग दिया है । यथार्थमें इससे कोई विशेष लाभ नहीं है । विद्यार्थियोंको मुख्य २ नियम ही जान लेना वस है ॥

अब इसकी आगे छन्दोंका वर्णन किया जाता है ।

चारों पद मिलकर ३८ मात्राओंके छन्द

१ वरवै

ल०—विषमनि रवि कल धरवै, सम मुनि साज ।

टी०—विषम अर्थात् पहिले और तीसरे पदोंमें (रवि) १२ मात्रा होती हैं और सम अर्थात् दूसरे और चौथे पदोंमें (मुनि) ७ मात्रा होती हैं । अन्तमें जगण होता है । यह वरवै छन्द है ॥

उ०— वाम अंग शिव शोभित, शिवा उदार ।
सरद सुवारिदमें जनु, तड़ितविहार ॥

सू०—इसी ध्रुव भी कहते हैं ॥

० सोहिनी

ल०— सुकल मोहनी वारा, सम मुनि लसे ।

टी०—सोहिनी छन्दके विषम पदमें १२ और सम पदमें ७ मात्रा होती हैं । अन्तमें सगण होता है ॥

उ०— शंभु भक्तजनचाता, भवदुख हरे ।
सनवांछितफलदाता, मुनि हिय धरे ॥

चारों पद मिलके ४८ मात्राओंके छन्द

१ दोहा

ल०— जा न विषम तेरा कला, सम शिव दोहा मूल ।

टी०—विषम चरणोंमें १३ और सम चरणोंमें (शिव) ११ मात्रा होती हैं । 'जान विषम' पहिले और तीसरे चरणोंमें जगण नहीं होना चाहिये । अन्तमें लघु होता है ॥

उ०— श्रीरघुवर राजिवनयन, रमारमण भगवान ।

धनुष बाण धारण किये, वसहु सु मम उर आन ॥

सू०—जो छन्द दो पंक्तियोंमें लिखे जाते हैं जैसे दोहा, सोरठा इत्यादि उनकी प्रत्येक पंक्तियोंको दल कहते हैं । दोहिकी रचनाके विषयमें एक मत यह भी है कि उसमें क्रमपूर्वक टगण, डगण, टगण, टगण, डगण और एक लघु पड़ जाय । विशेष ध्यान इस बात पर रहे कि विषम चरणके अन्तमें दो गुरु न पड़ें ॥

दोहा (चण्डालिनी)

ल०— जहां विषम चरननि परै, कहूं जगण जो आन ।
तजौ तहीं चंडालिनी, दोहा दुखकी खान ॥

टी०—जिस दोहेके पहिले अथवा तीसरे चरणमें जगण हो उसे चण्डालिनी कहते हैं । वह महादूषित है । 'जहांवि' और 'तजौत' ये जगण हैं । ऐसा दोहा व्याज्य है । पहिले और तीसरे चरणमें जगण हो अथवा केवल पहिलेहीमें वा तीसरेहीमें हो, तो भी दूषित है, विषम चरणोंमें कहीं भी जगण नहीं रखना चाहिये । परन्तु देव अथवा मंगलवाची शब्दोंमें इसका भी दोष नहीं माना जाता । मुख्य दोष तो नरकाव्यहीमें माना जाता है ॥

सू०—दोहेके अनेक भेद होते हैं, परन्तु यहां उनमेंसे मुख्य जो २३ हैं वेही दिये जाते हैं ॥

(कृप्यय)

भ्रमर १ सुभ्रमर २ शरभ ३ श्येन ४ मंडूक ५ बखानहु ।
मर्कट ६ करभ ७ सु और नरहिं ८ हंसहिं ९ परिमानहु ॥
गनहु गयन्द १० सु और पयोधर ११ बल १२ अवरेषहु ।
वानर १३ त्रिकल १४ प्रतच्छ कच्छपहु १५ मच्छ १६ विशिषहु ॥
शादूल १७ सुअहिवर १८ व्याल १९ जुतवर विडाल २० अरु खानर १ गनि
उद्दाम उदर २२ अरु सर्प २३ शुभ तेइस बिधि दोहा बरनि ॥

१ भ्रमर (२२ ग + ४ ल)

सीता सीतानाथको, गावौ आठौ जाम ।

इच्छा पूरी जो करै, औ देवै विश्राम ॥

२ भ्रातर (२१ ग + ६ ल)

साधो मेरे ही बसो, राखो मेरी लाज ।
कासी क्रोधी लम्पटी, जानि न छांडो काज ॥

३ शरभ (२० ग + ८ ल)

हरसे दानी कहुं नहीं, दीन्हें किते दान ।
कैसे को भापै लखो, वानी एकै जान ॥

४ श्येन (१९ ग + १० ल)

श्रीराधा श्रीनाथ प्रभु, तुमहींसो है काज ।
सेवीं तो पदकांजको, श्रीरी होवै काज ॥

५ संडूक (१८ ग + १२ ल)

मेरी औरै देखिये, करिके दाया साज ।
कासी मनमें हौं महा, सब विधि राखो लाज ॥

६ मर्कट (१७ ग + १४ ल)

ब्रजमें गोपनसंगमें, राधा देखि श्याम ।
भूली सुध बुध प्रेमसों, मोही मानहु काम ॥

७ करभ (१६ ग + १६ ल)

भये पशू तारे पशू, सुनी पशुनकी वात ।
मेरी पशुमति देखिकै, काहे मोहिं घिनात ॥

अथवा

और दीनके दारिद्रै, कैसे हरौ मरारि ।
दैं सर्वस हिज दीन लखि, दियो सुदामा ठारि ॥

सू०—'भयेप' जगण है परन्तु देवनुति है इसलिये अद्रूपित है ।
यदि पाठान्तर करके भयेके बदले भयहु करो तो अत्युत्तम है ॥

८ नर (१५ ग + १८ ल)

गोप गोपिका संगमें, रचितनुजातकतीर ।
देखे हरि तवते भई, आली बुद्धि अधीर ॥

९ हंस (१४ ग + २० ल)

सो सों औरौ है नहीं, अधकी खानि मुरारि ।
चरनसरन प्रभु दीजिये, यह भौनिधितें तारि ॥

१० गयन्द वा मदकल (१३ ग + २२ ल)

गोकुलपति गोकुलभवन, गोप गोपिगनराय ।
गोवर्द्धनको पाणि लै, ब्रजकी कीन्ह सहाय ॥

११ पयोधर (१२ ग + २४ ल)

छांड़ि घरै ब्रज बसहु अब, कलियुग आयो जान ।
भूल न श्रीगोविन्दको, भजहु दीनसुखदान ॥

१२ चल वा वल (११ ग + २६ ल)

भक्त सुखद है सहज प्रभु, अधहर नाम उदार ।
या कलिमें न आधार कहु, है सो मुहिं आधार ॥

१३ वानर (१० ग + २८ ल)

सुरतरु सम जग महँ लखौ, वांछित देत उदार ।
श्रीरघुबरको छोड़ अब, क्यों भटकै खल द्वार ॥

१४ त्रिकल (६ ग + ३० ल)

कमलवदन शोभासदन, कदनमदन मदहाल ।
रदनछंदन सुखमाकरै, मोती माल गुपाल ॥

१५ कच्छप ऽ ग + ३२ ल)

तन मन धन धरनी धरम, परम परस पाखण्ड ।
कलिसलहर गोविन्दकी, भजु पद छाड़िघमण्ड ॥

१६ मच्छ (७ ग + ३४ ल)

सुभग सलिल श्रीगङ्गतट, थिति कर अघहरतार ।
हरि भज तज जगपन्थ यह, लहिहै भवकी पार ॥

१७ शार्दूल (६ ग + ३६ ल)

को जग अधमी सुहिं सरिस, मन महुँ करहु विचार ।
भवजलनिधि यह उतरिकौ, लहिहौ हरिपदसार ॥

१८ अहिवर (५ ग + ३८ ल)

कानक वरण तन शृटुल अति, कुसुम सरिस दरसात ।
लखि हरिद्वारस छकि रहै, विसराई सब बात ॥

१९ व्याल (४ ग + ४० ल)

हस सन अधस न जग अहै, तुम सन प्रभु नहिं धीर ।
चरन सरन इहि उर गह्यो, हरहु सु हरि भवपीर ॥

२० विडाल (३ ग + ४२ ल)

विरद सुमिरि सुधि करत नित, हरि तुव चरन निहार ।
यह भवजलनिधितें तुरत, कब प्रभु करिहहु पार ॥

२१ श्रान (२ ग + ४४ ल)

तुव गुन अहिपति रटत नित, लहत न कहत न अन्त ।
जगजन तुव पद सरन गहि, किमि गुनि सकहिं अनन्त ॥

२२ उद्दर (१ ग + ४६ ल)

कलुषहरणा मनसुखकान धरनिभारहर परम ।

मम हित हरि सुरपुर तजिय, सुधि कर रख प्रभु शरम ॥

२३ सर्प (४८ लघु)

अरुणाचरणा कलिमलहरणा, तिन कर नित कर भजन ।

जिनहिँ नवत सुर मुनि सकल, कस न करहु नित यजन ॥

सू०—दोहेके उदाहरणमें जो दोहा लिखा है वह कच्छप है। दोहेकी रचनाकिलिये इस दोहेको भी स्मरण रखना चाहिये ॥

जा न विषम राखै 'सरन' अन्त सु सम है 'जात' ।

संकट तेरो शिव हरै, सुनि दोहा अवदात ॥

टी०—दोहेके विषम चरणोंमें कहीं जगगा न हो, परन्तु उनके अन्तमें सगगा रगगा अथवा नगगा अवश्य हो । सम चरणोंके अन्तमें जगगा अथवा तगगा हो परन्तु एकसे अधिक लघु रखना कर्णसधुर नहीं (देखो भेद २३ वां)

२ सोरठा ।

ल०—सम रस मुनि शिव शेष, दोहा उलटे सोरठा ।

टी०—सम अर्थात् दूसरे और चौथे चरणोंमें १३ और शेष चरणोंमें ११ मात्रा होती हैं। दोहेका उलटा सोरठा होता है ॥

उ०—भाख्यो जाकीं पीव, भेद न तासों नाखिये ।

जो वह मांगै जीव, तनमें नेकु न राखिये ॥

सू०—इसके सम चरणोंमें जगगाका निषेध है ॥

चारों पद मिलकर ५२ मात्राओंके छन्द ।

१ दोही

ल०—विषमनि पन्द्रा साजो कला, सम शिव दोही मूल ।

टी०—जिसके पहिले और तीसरे चरणमें १५ और दूसरे और चौथेमें ११ मात्रा हों अन्तमें लघु हो उसे दोही कहते हैं ।

उ०—विरद सुमिरि सुधि करत नितहीं, हरि तुव चरन निहार ।
यह भवजलनिधितें सुहिं तुरत, कव प्रभु करिहहु पार ॥

चारों पद मिलके ५४ मात्राओंके छन्द

१ हरिपद

ल०—विषम हरीपद कीजिय सोरह, सम शिव दै सानन्द ।

टी०—विषम अर्थात् पहिले और तीसरे पदोंमें १६ और सम अ-
र्थात् दूसरे और चौथे पदोंमें ११ मात्रा होती हैं । अन्तमें
'नन्द' गुरु लघु होते हैं ॥

उ०—रघुपति प्रभु तुम हौ जगमें नित, पालौ करके दास ।

परम धरम ज्ञाता परमानहु, येही मनकी आस ॥

चारों पद मिलके ५६ मात्राओंके छन्द

१ उल्लाल

ल०—विषमनि पन्द्रह धरिये कला, सम तेरा उल्लाल कर ।

टी०—पहिले और तीसरे पदमें १५ और दूसरे और चौथे पदमें
१३ मात्रा होती हैं । यथा छन्दोऽर्णवे—

उ०—कह कवित कहा विन रुचिर मति, मति सु कहा विनहीं विरति
कह विरतिउ लाल गुपालके, चरननि होय जु प्रीति अति ॥

चारों पद मिलकर ६० मात्राओंके छन्द

१ रुचिरा (द्वितीय)

ल०—विषम चरन कल धारहु सोला,

रुचिराविय सम मनु कर्णा ।

टी०—विषम चरणोंमें १६ और सम चरणोंमें १४ मात्रा होती हैं
अन्तमें दो गुरु होते हैं । रुचिराविय अर्थात् रुचिरा दूसरी ॥

उ०—हरि हर भगवत सुन्दर खाली, सबके घटकी तुम जानो ।
मेरे मनकी कीज पूरी, इतनी हरि मेरी मानो ॥
चारों पद मिलकर ६२ मात्राओंके छन्द

१ धत्ता

ल०—दीजे धत्ता इकतिस मत्ता द्वै नौ तेरा अन्तहिं नगना

टी०—विषम चरणोंमें १८ और सम चरणोंमें १३ मात्रा होती है
अन्तमें तीन लघु होते हैं । यह छन्द द्विपदी धत्ता कहता है
और दोही पंक्तियोंमें लिखा जाता है ॥

उ०—कृष्ण सुरारी कुञ्जविहारीकर, भञ्ज जनमनरञ्जनपदन ।

ध्यावो वनवारी जनदुःखहारी, जिहिं नित जप गञ्जनमदन ॥

२ धत्तानन्द

ल०—इकतिस मत्तानन्द, धत्तानन्द, शङ्कर मुनितेरह बलय ।

टी०—११, ७ और १३ के विश्रामसे धत्तानन्दकी प्रत्येक पंक्तिमें
३१ मात्रा होती है । अन्तमें तीन लघु होते हैं । यह भी
धत्ताके सदृश दोही पंक्तियोंमें लिखा जाता है ॥

उ०—जय कन्दिय कुलकांस, बलि विध्वंस, केशियवकदानवदरन
सो हरि दीनदयाल, भक्तकृपाल, कवि सुखदेव कृपाकरन ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे मात्रिकाईसमवर्णननाम

चतुर्थी मयूखः ॥ ४ ॥



अथ मात्रिकविषमप्रकरणम् ।

मात्रिक विषम छन्द उसे कहते हैं कि जिसके चारों चरणों-की मात्रा अथवा नियम भिन्न २ होते हैं, वा जिसके सम सम और विषम विषम पाद न मिलते हों, अथवा सम सम मिलते हों, परन्तु विषम विषम न मिलते हों । इसी प्रकार जिसके विषम विषम पद मिलते हों, परन्तु सम सम न मिलते हों अर्थात् जो छन्द मात्रिक सम अथवा मात्रिक अर्द्धसम न हो वही मात्रिक विषम है ॥

चार चरणोंसे अधिक चरण जिन छन्दोंमें हैं उनको गणना भी विषम छन्दोंमें है ॥

मात्रिक विषम छन्दोंकी संख्या जाननेकी यह रीति है कि प्रत्येक पादकी मात्राओंकी सम संख्याको आपसमें गुणाकरो जो गुणनफल आवे उसीको उत्तर जानो । यथा ।

प्रथम चरण द्वितीय चरण तृतीय चरण चतुर्थ चरण
 मात्रा २ ३ ४ ५
 समसंख्या २ × ३ × ४ × ५ = २४० कुलभेद
 दूसरा उदाहरण

प्रथम चरण द्वितीय चरण तृतीय चरण चतुर्थ चरण
 मात्रा २ २ २ ३
 समसंख्या २ × २ × २ × ३ = २४ कुलभेद
 तीसरा उदाहरण

प्रथम चरण द्वितीय चरण तृतीय चरण चतुर्थ चरण
 मात्रा २ २ ३ ४
 समसंख्या २ × २ × ३ × ४ = ६० कुल भेद

विद्यार्थियोंके बोधार्थ तीसरे उदाहरणका प्रसारद्वारा स्पष्टीकरण किया जाता है ॥

तीसरे उदाहरणके ६० भेदोंका कोष्ठ ।

भेद ।	पहिला चरण ।	दूसरा चरण ।	तीसरा चरण ।	चौथा चरण ।	भेद ।	पहिला चरण ।	दूसरा चरण ।	तीसरा चरण ।	चौथा चरण ।
१	५	५	१५	५५	२१	११	५	१५	५५
२	५	५	१५	११५	२२	११	५	१५	११५
३	५	५	१५	१५१	२३	११	५	१५	१५१
४	५	५	१५	५११	२४	११	५	१५	५११
५	५	५	१५	११११	२५	११	५	१५	११११
६	५	५	५१	५५	२६	११	५	५१	५५
७	५	५	५१	११५	२७	११	५	५१	११५
८	५	५	५१	१५१	२८	११	५	५१	१५१
९	५	५	५१	५११	२९	११	५	५१	५११
१०	५	५	५१	११११	३०	११	५	५१	११११
११	५	५	११११	५५	३१	११	५	११११	५५
१२	५	५	११११	११५	३२	११	५	११११	११५
१३	५	५	११११	१५१	३३	११	५	११११	१५१
१४	५	५	११११	५११	३४	११	५	११११	५११
१५	५	५	११११	११११	३५	११	५	११११	११११
१६	५	११	१५	५५	३६	११	११	१५	५५
१७	५	११	१५	११५	३७	११	११	१५	११५
१८	५	११	१५	१५१	३८	११	११	१५	१५१
१९	५	११	१५	५११	३९	११	११	१५	५११
२०	५	११	१५	११११	४०	११	११	१५	११११
२१	५	११	५१	५५	४१	११	११	५१	५५
२२	५	११	५१	११५	४२	११	११	५१	११५
२३	५	११	५१	१५१	४३	११	११	५१	१५१
२४	५	११	५१	५११	४४	११	११	५१	५११
२५	५	११	५१	११११	४५	११	११	५१	११११
२६	५	११	११११	५५	४६	११	११	११११	५५
२७	५	११	११११	११५	४७	११	११	११११	११५
२८	५	११	११११	१५१	४८	११	११	११११	१५१
२९	५	११	११११	५११	४९	११	११	११११	५११
३०	५	११	११११	११११	५०	११	११	११११	११११

ऐसे ही और भी जानो ।

इसी रीतिसि प्रसारद्वारा विषम कन्दोंके असंख्य भेद प्रगट

होते हैं । परन्तु प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक ही है, और यद्यार्थमें इससे कोई विशेष लाभ भी नहीं किन्तु वृथा समय नष्ट होता है । विद्यार्थियोंको मुख्य २ नियम ही समझलेना बस है, क्योंकि यदि हम इन सब भेदोंको निकालने बैठें तो सम्पूर्ण आयु व्यतीत होने पर भी पार नहीं पा सकेंगे । अब इसकी आगे छन्दोंका वर्णन किया जाता है ॥

चारों पद मिलके ५७ मात्राओंके छन्द

१ लक्ष्मी वा बुद्धि

ल०—आदौ धारौ मत्ता तीसै, दूजे पुरान नौ रुरो ।

दे बुद्धी लक्ष्मीनाथा, ग्रन्थै में करौं पूरो ॥

टी०—प्रथम दलमें ३० और दूसरे दलमें २७ मात्रा होती हैं ॥

उ०—गौरी वायें भागे सोहै, आछि सुरापगा माथे ।

देवा शोभै काटो माया, जाला निजै हाथे ॥

चारों पद मिलकर ६२ मात्राओंके छन्द

१ गायिनी

ल०—आदौ वारा मत्ता, दूजे द्वै नौ सजाय मोद लहो ।

तीजे भानू कीजे, चौथे वीसे जु गायिनी सुकवि कहो ॥

टी०—पहिले दलमें १२ + १८ और दूसरे दलमें १२ + २० मात्रा होती हैं । अन्तमें गुरु होता है । बीस बीस मात्राओंके पीछे एक जगण होता है । लक्षणसे ही उदाहरण समझलो । इसकी उलटेको सिंहनी कहते हैं ॥

सू०—बीस मात्राके उपरान्त चार लघु रहनेसे भी दोष नहीं है ॥

१ सिंहनी

ल — आदौ वारा मत्ता, कल धरि वीस जु सगन्त दूजे चरना ।
तीजे प्रथमै जैसे, सिंहनि दस बसु चतुर्थ पद धरना ॥

टी०— पहिले दलमें १२ + २० और दूसरे दलमें १२ + १८ मात्रा होती हैं । २० मात्राकी पीछे एक जगण रहता है । अन्तमें गुरु होता है । इसकी उलटेको गाहिनी कहते हैं । लक्षणसे ही उदाहरण समझलो ॥

सू०— इसमें और गाहिनीमें चार चार मात्राओंका एक २ समूह रहता है । आर्याप्रकरण देखनेपर यह शीघ्र समझमें आजायगा । इस छन्दमें २० मात्राकी उपरान्त चार लघु रहनेसे भी दोष नहीं है ॥

६ पद मिलकर १४४ मात्राओंकी छन्द

१ अमृतधुनि

ल०— अमृतधुनि दोहा प्रथम, चौत्रिस कल सानन्द ।
आदि अन्त पद एक धरि स्वच्छञ्चित रच छन्द ॥
स्वच्छञ्चित रच छन्द ध्वनि लखि पदद्वल धरि ।
साजज्जमक तिवार ज्झमक सुयोग कल धरि ॥
पदद्वरि सिर विद्वज्जन कर युद्धधुनि गुनि ।
चित्तत्थिर करि सुद्धि द्वरि कह यो अमृतधुनि ॥

टी०— अमृतधुनि अथवा अमृतध्वनिमें प्रथम एक दोहा रहता है प्रतिपदमें २४ मात्रा होती है । आदि अन्तमें जो शब्द हों

वे एकसे ही हों । इस प्रकार स्वच्छ चित्तसे छन्दकी रचना करे । परन्तु छन्दकी ध्वनिकी ओर ध्यान रखो 'अलिपद' भँवरेकी ६ पद होते हैं । इसीलिये वह षट्पद कहाता है, सो ६ पद रख करके जमक अर्थात् यमककी तीन वार भ-सकावकी साथ (याग काल) आठ आठ मात्रा सहित साजो । विद्वज्जनोंके पदारविन्दोंमें सिर धरकर युद्धकी प्रसंगकी विचार चित्तकी स्थिरकर और अच्छी बुद्धि धारण करके असृतध्वनि छन्दकी कहे । इस छन्दमें प्रायः वीररस वर्णन किया जाता है

उ०—प्रतिभट उदभट विकट जहँ लरत लच्छ परलच्छ ।

श्रीजगतिश नरेश तहँ अक्कच्छवि परतच्छ ॥

अक्कच्छवि परतच्छ च्छटनि विपच्छक्य करि ।

स्वच्छ च्छिति अति कित्ति त्थिर सुअमिच्छिभय हरि ॥

उज्झिज्झहरि समुज्झिज्झहरि विरुज्झिज्झटपट ।

कुप्पप्पगट सु रूप्पप्पगनि विलुप्पप्पतिभट ॥

२ कुण्डलिया

ल०—दोहा रोला जोरिकै, छै पद चौबिस मत्त ।

आदि अन्त पद एकसो, कर कुण्डलिया सत्त ॥

कर कुण्डलिया सत्त, मत्त पिंगल धरि ध्याना ।

कविजनवाणी सत्त, करै सबको कल्याना ॥

कह पिंगलको दास, नाथजू मोतन जोहा ।

छन्दप्रभाकर मांहिं, लसैं रोला अरु दोहा ॥

टी०—आदिमें एक दोहा उसके पश्चात् एक रोला छन्दकी जाड़-
कार ६ पद रक्खी । प्रति पदमें २४ मात्रा हों और आदि
अन्तका पद एकसा मिलता रहे । श्रीमत्पिङ्गलाचार्यके मत-
का ध्यानमें रखकर कुण्डलियाकी रचना करो । यह सत्य
माना कि कविजनोंकी वाणी कल्याणकारिणी होती है ।
पिंगलकादास (ग्रन्थकर्ता) कहता है कि श्रीमत्पिंगला-
चार्य महाराजने सुभ्रपर कृपादृष्टि की है कि जिसके प्रभावसे
इस छन्दःप्रभाकरसंज्ञक ग्रन्थमें दोहा रोला प्रभृति छन्द
विलसित हो रहे हैं ॥

उ०— मेरी भववाधा हरी, राधा नागरि सोय ।
जातनकी भाई परे, श्याम हरित दुति होय ॥
श्याम हरित दुति होय, कटै सव कलुष कलिसा ।
मितै चित्तकी भरम, रहै नहिं कछुक अँदेसा ॥
कह पठान सुलतान, काटु यमदुखकी वेरी ।
राधा वाधा हरहु, हहा विनती सुनु मेरी ॥

मू०—कोई २ कवियोंने दूसरे पदका तीसरेके साथ और चौथका
पांचवेके साथ सिंहावलोकन दर्शाया है, परन्तु यह बहुरमत
नहीं है और गिरिधरदासजीने, जिनकी कुण्डलिया प्रसिद्ध
है, केवल दूसरेका तीसरेके साथ ही सिंहावलोकन प्रदर्शित
किया है । जैसा कि लक्षण और उदाहरण दोनोंसे प्रगट
होता है ॥

६ पद मिलकर १४८ मात्राओंके छन्द

१ छप्पय

ल०—रोलाके पद चार, मत्त चौबीस धारिये ।
 उल्लालापद दोय, अन्त माहीं सु धारिये ॥
 कहुँ अट्टाइस होइँ, मत्त छब्विस कहुँ देखौ ।
 छप्पय के सब भेद, मीत इकहत्तर लेखौ ॥
 लघु गुरुके क्रमतेँ भये, बानी कवि मंगलकरन ।
 प्रगट कवितकी रीति भल, भानुभये पिंगलसरन ॥

टी०—इस छन्दके आदिमें रोलाके चार पद चौबीस २ मात्राओं-
 के रक्खो । तदुपरान्त उल्लालाके दो पद रक्खो (उल्लालामें
 कहीं २६ और कहीं २८ मात्रा होती हैं) हे मित्र ! लघु गुरु-
 के क्रमसे कविजनोंकी वाणी सङ्गल करनेकेहेतु इस छन्दके
 ७१ भेद होते हैं । भानु (कविका उपनाम) कविका कथन है
 कि श्रीमत्पिङ्गलाचार्य महाराजकी श्रम लेनेसे छन्दकी
 रीति भली भाँति विदित होती है ॥

विदित हो कि मैंने पहिले परार्द्ध अर्थात् वर्गभाग और पीछे
 पूर्वार्द्ध अर्थात् सात्रिक भाग रचा है परन्तु पूर्वार्द्ध और परार्द्ध
 में मैंने सिवाय इस पदके और कहीं अपना उपनाम 'भानु'
 नहीं रक्खा है । मेरा मुख्य प्रयोजन कुछ नाम बढ़ानेसे नहीं
 है, किन्तु देशहितसे है । यदि मेरे प्रिय देशवांधवोंको इसके

पठन पाठनसे लाभ पहुँचैगा तो मैं अपनेकी कृतकृत्य समझूँगा।
 सू०—जैसे दोहा विहारीजीके, चौपाई श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी-
 की, कुण्डलिया गिरधरदासजीकी और कवित्त पदमाकर-
 जीकी प्रसिद्द हैं उसी प्रकार छप्पय नाभादासजीके अत्यन्त
 ललित हैं ॥ छप्पयके जो ७१ भेद हैं वे ये हैं ॥



अजय विजय बल कर्ण वीर वेताल विहङ्कर ।
 सर्पाट हरि हर ब्रह्म इन्द्र चन्दन जु शुभङ्कर ॥
 प्रवान सिंह शार्दूल काष्क कोकिल खर कुंजर ।
 नदन मत्स्य ताटक श्रेय सारंग पयोधर ॥
 शुभ कमलकन्द वारण शलभ भवन अर्जगम सरसरस ।
 गण्डि समर सुसारस मेरु कडि मकर अली सिद्धि हि सरस ॥
 युधि सुकरतल और सु कमलाकार धवलवर ।
 मलय मुधुव गनि कनक कृष्ण रंजन मेधा भर ॥
 गिड गरुड भग्नि सूर्य्य पाल्य पुनि नवल मनोहर ।
 गगन रच्छ नर हीर भमर शंखर शुभ गौहर ॥
 जानिये कुसुम आकार पति दीप शङ्ख वसु शब्द मुनि ।
 छप्पय सुभेद शग्नि मुनि वरन गुरु लघु घट बट रीति मुनि ॥

श्लोक संख्या	नाम	गुरु	लघु	वर्ग	मात्रा	श्लोक संख्या	नाम	गुरु	लघु	वर्ग	मात्रा
१	प्रलय	७०	१२	८२	१५२	२७	सारस	२४	८४	११८	१५२
२	विजय	६८	१४	८२	१५२	२८	मेरु	२२	८६	११८	१५२
३	बल	६८	१६	८४	१५०	२९	मकर	२२	८८	१२०	१५२
४	हर्ष	६७	१८	८५	१५२	३०	भ्रमि	२१	९०	१२०	१५२
५	धीर	६६	२०	८६	१५२	३१	सिद्धि	२०	९२	१२०	१५२
६	वेताल	६५	२२	८७	१५२	३२	वृद्धि	२९	९४	१२०	१५२
७	विहंकर	६४	२४	८८	१५२	३३	करतल	२८	९६	१२०	१५२
८	मर्कट	६३	२६	८९	१५२	३४	कमलाकार	२७	९८	१२०	१५२
९	घरि	६२	२८	९०	१५२	३५	धवल	२६	१००	१२०	१५२
१०	घर	६१	३०	९१	१५२	३६	अन्वय	२५	१०२	१२०	१५२
११	त्रय	६०	३२	९२	१५२	३७	ध्रुव	२४	१०४	१२०	१५२
१२	इन्द्र	५९	३४	९३	१५२	३८	कनक	२३	१०६	१२०	१५२
१३	चन्द्र	५८	३६	९४	१५२	३९	कृष्ण	२२	१०८	१२०	१५२
१४	सुभंकर	५७	३८	९५	१५२	४०	रत्न	२१	११०	१२०	१५२
१५	श्वान	५६	४०	९६	१५२	४१	मेघा	२०	११२	१२०	१५२
१६	सिंह	५५	४२	९७	१५२	४२	गिद्ध	१९	११४	१२०	१५२
१७	यार्दूल	५४	४४	९८	१५२	४३	गवह	१८	११६	१२०	१५२
१८	कवच	५३	४६	९९	१५२	४४	शशि	१७	११८	१२०	१५२
१९	कीर्तिक	५२	४८	१००	१५२	४५	सूर	१६	१२०	१२०	१५२
२०	खर	५१	५०	१०१	१५२	४६	शुक्ल	१५	१२२	१२०	१५२
२१	कुंजर	५०	५२	१०२	१५२	४७	नवल	१४	१२४	१२०	१५२
२२	मदन	४९	५४	१०३	१५२	४८	मनोहर	१३	१२६	१२०	१५२
२३	मत्स्य	४८	५६	१०४	१५२	४९	गगन	१२	१२८	१२०	१५२
२४	ताटक	४७	५८	१०५	१५२	५०	रत्न	११	१३०	१२०	१५२
२५	शेष	४६	६०	१०६	१५२	५१	नर	१०	१३२	१२०	१५२
२६	सारंग	४५	६२	१०७	१५२	५२	हीर	९	१३४	१२०	१५२
२७	पयीधर	४४	६४	१०८	१५२	५३	भ्रमर	८	१३६	१२०	१५२
२८	कमल	४३	६६	१०९	१५२	५४	शेपर	७	१३८	१२०	१५२
२९	कन्द	४२	६८	११०	१५२	५५	कुसुमाकर	६	१४०	१२०	१५२

भेद संख्या	नाम	गुरु	लघु	वर्ण	मात्रा	भेद संख्या	नाम	गुरु	लघु	वर्ण	मात्रा
३०	वारण	४१	७०	१११	१५२	६६	पति	५	१४२	१४०	१५२
३१	शक्तभ	४०	७२	११०	१५२	६७	दीप	४	१४४	१४८	१५२
३२	भवन	३८	७४	११२	१५२	६८	शंख	३	१४६	१४८	१५२
३३	आजंगम	३८	७६	११४	१५०	६९	वसु	२	१४८	१५०	१५२
३४	सर	३७	७८	११५	१५०	७०	शब्द	१	१५०	१५१	१५२
३५	सरस	३६	८०	११६	१५०	७१	सुनि	०	१५२	१५२	१५२
३६	कमर	३५	८२	११७	१५०						

विदित हो कि ऊर्ध्वोक्त संख्या उस छप्पयकेलिये है कि जिसमें उल्लाला २८ मात्राका होता है । परन्तु जिसमें उल्लाला २६ मात्राका होता है उस छप्पयमें कुल १४८ मात्रा होती हैं । पहिला भेद ७० गुरु, ८ लघु, ७८ वर्ण और १४८ मात्राका होता है । एक एक गुरु घटाकर और दो दो लघु बढ़ाकर दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां इत्यदि भेद समझलो । ७१ वें भेदमें १४८ लघु आ जायंगे ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे मात्रिकविषमवर्णननाम

पञ्चमो मयूखः ॥ ५ ॥



अथ

मात्रिकाद्धिसमवाविषमान्तर्गतार्थ्याप्रकरणम्

विदित हो कि आर्या छन्दका प्रयोग विशेषकर संस्कृत और महाराष्ट्रीय भाषामें ही पाया जाता है । भाषामें इसका प्रयोग

बहुत काम है, परन्तु यहां विषयक्रमानुरोधसे सर्वसाधारण जनोंके बोधार्थ इसका संक्षिप्त रीतिसे सोदाहरण वर्णन किया जाता है।

आर्याके मुख्य भेद पांच हैं, जिनकी संज्ञा और मात्रा नीचे लिखी जाती हैं ॥

भेद की संख्या	नाम	मात्रा				योग	दूसरे नाम	अर्धसम वा विषम
		पहिले पाद में	दूसरे पाद में	तीसरे पाद में	चौथे पाद में			
१	आर्या	१२	१८	१२	१५	५७	गाहा	विषम
२	गीति	१२	१८	१२	१८	६०	उगाहा, उगाधा	अर्धसम
३	उपगीति	१२	१५	१२	१५	५४	गाहू	अर्धसम
४	उत्तीति	१२	१५	१२	१८	५७	विगाहा विगाधा	विषम
५	अर्यागीति	१२	२०	१२	२०	६४	इकंधक खंधा साहिनी	अर्धसम

(१) आर्याछन्दमें चार मात्राके समूहकी 'गण' कहते हैं । ऐसे चतुष्कलात्मक सात गण और एक गुरुके विन्याससे आर्याका पूर्वाह्न होता है ।

२ आर्यागण { प्रथम गण ५ ५ ४ मात्रा
द्वितीय गण १ १ ५ ४ मात्रा
तृतीय गण १ ५ १ ४ मात्रा
चतुर्थ गण ५ १ १ ४ मात्रा
पंचम गण १ १ १ ४ मात्रा } चतुर्भाजिक आर्या-
गणोंके ५ भेद होते हैं

(३) अर्याकी रचना करते समय इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिये कि आर्याके चतुष्कलात्मक सात गणोंमेंसे विषम

गणोंमें (अर्थात् पहिले, तीसरे, पांचवें और सातवेंमें) जगण न हो ॥

- (४) छठवें चतुष्कलात्मक समूह अर्थात् गणमें जगण ही अथवा चारों लघु हों ॥
- (५) आर्यादलमें जहां २७ मात्रा होती वहां छटवां गण एक लघु मात्राका ही मानलिया जाता है ॥

१ आर्या

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग

ल०— आदौ तीजे वारा, दूजे नौनौ कलानको जु धरो ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग

चौथे तिथि आर्यासो, विषमगणै ज न सुगंत करौ ।

टी०—जिसके पहिले और तीसरे चरणमें बारह बारह दूसरेमें अठारह, और चौथेमें (तिथि) १५ मात्रा हों उसे आर्या कहते हैं । इसके विषम गणोंमें (१, ३, ५ और ७ में) 'जन' जगण का निषेध है । और अन्तमें गुरु वर्ण होता है । यथा ।

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामा ।

व्यागी सारे कामा, पैही बैकुंठ विश्रामा ॥

२ गीति

१ २ ३ ४ ५ ६

ल०— भानु विषम गण ज न हो, नौनौ कल सम पदै ष-

७ ग

टज गीती ।

टी०—जिसके विषम पदोंमें १२ और सम पदोंमें १८ मात्रा हों उसे गीति कहते हैं । विषम गणोंमें जगण न हो । छठयेंमें जगण हो और अन्तमें गुरु हो । यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामा ।
त्यागौ सारे कामा, पैहौ अन्तै हरीजुको धामा ॥

३ उपगीती

१ २ ३ ४ ५ ६ख

ख०— भानु अयुक् गण ज न हो, योग रु मुनि समहिं

० ग

उपगीती ।

टी०—जिसके (अयुक्) विषम चरणोंमें १२ और सम चरणोंमें (योग ८+० मुनि) १५ मात्रा हों, परन्तु विषम गणोंमें 'जन' जगण न हो, अन्तमें गुरु हो उसे उपगीती कहते हैं ।

यथा—रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ रामा ।
छांडौ सारे कामा, पैहौ अन्तै सुविश्रामा ॥

४ उद्गीति

१ २ ३ ४ ५ ६ख

ख०— भानु विषम गण ज न हो, योग मुनि लखुविय

० ग १ २ ३ ४ ५

पदरीती । तूर्य चरण बसु दोषा, या विधि पण्डित

६ ० ग

रचौ जु उद्गीती ॥

टी०—जिसके विषम अर्थात् पहिले और तीसरे चरणोंमें बारह बारह मात्रा हों, दूसरे चरणमें (योग ८ + मुनि ७) १५ मात्रा और चौथे चरणमें (वसु ८ + दोषा १०) १८ मात्रा हों उसे उद्गीती कहते हैं विषमगणोंमें 'जन हो' जगण न हो, अन्तमें गुरु हो ॥ यथा—

राम भजहु मन लाई, तनमनधनके सहित मीता ।

रामहिं निसि दिन धावौ, राम भजै तबहिं जान जग जीता ॥

५ आर्यागीति ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७

ल०—भानु अयुक् गण जन हो, सप्तमें बीस धरसप्त आर्या

८

गीती

टी०—जिसके विषम चरणोंमें १२ और सम चरणोंमें २० मात्रा हों उसे आर्यागीति कहते हैं । विषम गणोंमें जगण न हो और अन्तमें गुरु हो । यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामाको ।

व्यागौ सारे कामा, पैही सांची सुनौ हरी धामाको ॥

आर्याके तीन भेद और भी हैं ।

१ पथ्या—जिस आर्यादलके प्रथम गणत्रयमें पादपूर्ण हो अर्थात् पादान्तमें यति पर पद पूर्ण हो ।

उ०—रामा सुनिये मेरी (यहां पादान्तमें यति पर पद पूर्ण है)

२ विपुला—जिस आर्यादलके प्रथम गणत्रयमें पाद अपूर्ण हो ॥

उ०—रामा कीनो सन्ना न मुनिनको पूजिके जु पादाब्जै ।

यहां प्रथम गणत्रयमें १२ मात्रा 'न्मा' तक पूर्ण हुईं, परन्तु पद पूर्ण नहीं हुआ 'न' दूसरे पादमें चला गया ।

३ चपला—जिस आर्यादलके प्रथम गणके अन्तमें गुरु हो, दूसरा गण जगण हो, तीसरा गण दो गुरुका हो, चौथा गण जगण हो, पांचवें गणका आदि गुरु हो, छठवां गण जगण हो, सातवां जगण न हो, अन्तमें गुरु हो, उसे चपला कहते हैं । परन्तु श्रीकेदारभट्टजी और श्रीगंगादासजीका मत है कि जिस आर्यामें दूसरा और चौथा गण जगण ही वही चपला है ।

यथा—रासा भजी सप्रसा, सुभक्ति पैही सुसुक्ति छ्र पैही ।

चपलाके तीन उपभेद हैं । जिस आर्याके प्रथमदलमें चपलाके लक्षण हों उसे मुखचपला, दूसरे दलमें चपलाके लक्षण हों उसे जघनचपला और जिसके दोनों दलोंमें चपलाके लक्षण हों उसे महाचपला कहते हैं । पथ्या, विपुला, मुखचपला, जघनचपला और महाचपला मिलकर १६ भेद होते हैं वे संक्षेपसे नीचे लिखे जाते हैं ।

१ पथ्या—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण होते हैं

२ आदिविपुला—आर्याके प्रथम पादके गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होते ॥

३ अन्त्यविपुला—आर्याके दूसरे दलके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होता ॥

४ उभयविपुला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होते ॥

५ पथ्यापूर्वासुखचपला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण होते हैं ॥

- ६ आदिविपुलामुखचपला—आर्याके प्रथम पादके गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होता ।
- ७ अन्त्यविपुलामुखचपला—आर्याके दूसरे दलके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होता ॥
- ८ उभयविपुलामुखचपला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण नहीं होते ॥
- ९ पध्यापूर्वाजघनचपला—आर्याके दूसरे दलके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण होता है ॥
- १० आदिविपुलाजघनचपला—आर्याके प्रथम पादके गणत्रयमें पाद अपूर्ण होता है ॥
- ११ अन्त्यविपुलाजघनचपला—आर्याके दूसरे दलके प्रथम गणत्रयमें पाद अपूर्ण होता है ॥
- १२ उभयविपुलाजघनचपला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद अपूर्ण होते हैं ॥
- १३ पध्यापूर्वामहाचपला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद पूर्ण होते हैं ॥
- १४ आदिविपुलामहाचपला—आर्याके प्रथम पादके गणत्रयमें पाद अपूर्ण होता है ॥
- १५ अन्त्यविपुलामहाचपला—आर्याके दूसरे दलके प्रथम गणत्रयमें पाद अपूर्ण होता है ॥
- १६ उभयविपुलामहाचपला—आर्याके दोनों दलोंके प्रथम गणत्रयमें पाद अपूर्ण होते हैं ॥
- सू०—'पाद' अथवा चरणसे छन्दके चतुर्थ भागका ग्रहण है । 'पद'

से विभक्ति सहित शब्दका ग्रहण है चाहे विभक्ति उसी शब्द-
में मिली हो या भिन्न हो । भाषामें 'पाद' के स्थानमें 'पद'
भी लिखते हैं, परन्तु जहां जिसका अभिप्राय ही वहां उसी-
का ग्रहण करना योग्य है ॥

इसी रीतिसे उक्त ५ मुख्य भेदोंमेंसे प्रत्येक भेदके सोलह २ भेद
होकर ८० भेद होते हैं, परन्तु महाकवि श्रीचन्द्रशेखरजीने लघु
गुरुके भेदसे प्रत्येक ५० मात्रिक आर्याके छब्बीस २ भेद माने हैं
वे भी संक्षेपसे नीचे दर्शाये जाते हैं ॥

गुरु	लघु	नाम	गुरु	लघु	नाम	गुरु	लघु	नाम	गुरु	लघु	नाम			
२७	३	लक्ष्मी	२१	१५	वैदेह्यो देवी	१५	२०	महा- माया	८	३८	वासिता	३	५१	सिंहो
२६	५	ऋद्धि	२०	१०	गौरी	१४	२८	क्षोर्त्ति	८	४१	शोभा	२	५३	इसी
२५	७	बुद्धि	१८	१८	धात्री	१३	३१	सिद्धा	७	४३	हरिणी			
२४	८	लज्जा	१८	२१	चूर्णा	१२	३३	मनो	६	४५	चक्री			
२३	११	विद्या	१७	२३	छाया	११	३५	रमा	५	४७	सारसी			
२२	१३	जमा	१६	२५	कांति	१०	३७	विश्वा	४	४८	कुररी			

विदित हो कि एक गुरुकी आर्या नहीं होती ॥

इस प्रकार आर्याओंके अनेक भेद हैं । परन्तु भाषाकाव्यके
रसिकोंकेलिये मुख्य २ भेदोंका जानलेना ही बस है ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे मात्रिकार्द्धसमविषमान्तर्गतार्या-
वर्णननाम षष्ठो मयूखः ॥ ६ ॥

अथ

वैतालीयप्रकरणम् ।



वैताली छन्द भी आर्याकि सदृश अपने ढंगका निराला ही होता है, और बहुत करके संस्कृतमें ही पाया जाता है। इसका प्रयोग भाषामें बहुत कम है, परन्तु हम छन्दक्रमानुरोधसे अपने पाठकोंको इस छन्दसे भी परिचित होनेके हेतु इसका समास वर्णन यहां करदेते हैं ॥

इस्की मात्रा वा इसके लक्षण नीचेकी उदाहरणोंमें दर्शाये गये हैं। इसमें विशेष नियम यह है कि विषम चरणोंमें दूसरी मात्रा तीसरी मात्रासे वा चौथी पांचवींसे न मिली हो अर्थात् उनके मिलनेसे गुरु वर्ण न होजाय। जैसे 'विशाल' शब्दमें 'वि' की एक मात्रा है और 'श' में दूसरी और तीसरी मात्रा मिली हैं, ऐसा न होना चाहिये। इसीप्रकार सम पादोंमें छठवीं मात्रा सातवींसे न मिली हो अर्थात् छठवीं और सातवीं मिलकर एक दीर्घाक्षर न हो और यह भी नियम है कि दूसरे और चौथे चरणके आदि में ६ लघु न हों पहिले और तीसरे पादमें चाहे हों चाहे न हों॥

१ वैताली ।

ल०-कलमनु धरि आदि तीसरे । औ सोला सम रे लगा सही
विषम छ उपरे ल गा धरो । वैताली बसुपै समे वही ॥

टी०-जिसके पहिले और तीसरे चरणोंमें (मनु) १४ और दूसरे और चौथे चरणोंमें सोलह २ मात्रा हों उसे वैताली कहते हैं। इसके विषम चरणोंमें ६ मात्राके उपरान्त 'रे लगा' एक



रगण और लघु गुरु होते हैं, और सम चरणोंमें आठ मात्रा के उपरान्त वही अर्थात् 'रलग' होते हैं ।

उ०—हर हर भज जाम आठहूँ । जंजालहिं तजिकै करौ यही ।

तनमनधन दे लगा सबै । हर धामहिं जइहौ सखा सही ॥

सू०—वैतालीके निम्नाङ्कित ६ भेद हैं ॥

१ उदीच्यवृत्ति

वैताली छन्दके विषम पादोंमें दूसरी और तीसरी मात्रा मिल कर एक गुरु वर्ण होनेसे 'उदीच्यवृत्ति' छन्द सिद्ध होता है ।

यथा—हरैहिं भज जाम आठहूँ । जंजालहिं तजिकै करौ यही ।

तनै मनै दे लगा सबै । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

२ प्राच्यवृत्ति

वैताली छन्दके सम पादोंमें चौथी और पांचवीं मात्राके एकचित्त होनेसे 'प्राच्यवृत्ति' छन्द बनता है । यथा—

हर हर भज जाम आठहूँ । तज सबै भरम रे करौ यही ।

तन सन धन दे लगा सबै । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

३ प्रवर्त्तक

वैताली छन्दके विषम पादोंमें दूसरी और तीसरी और सम पादोंमें चौथी और पांचवीं मात्राके एकचित्त होनेसे 'प्रवर्त्तक' छन्द बनता है । यथा—

हरैहिं भज जाम आठहूँ । तज सबै भरम रे करौ यही ।

तनै मनै दे लगा सबै । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

४ आपातलिका

वैताली छन्दके विषम चरणोंमें ६ और सम चरणोंमें आठ

मात्राओंके उपरान्त एक भगण और दो गुरु रखनेसे 'आपातलिका' छन्द बनता है । यथा—

हर हर भज रात दिना रे । जंजालहिं तज या जगमाहीं ।
तनमनधनसों जपिहौ जो । हर धाम मिलव-संशय नाहीं ॥

५ अपरान्तिका

जिसमें वैताली छन्दके सम चरणोंके सदृश चारों पाद हों और चौथी और पांचवीं मात्रा मिलकर एक दीर्घाक्षर हो उसे 'अपरान्तिका' कहते हैं । यथा—

शंभुको भजहु रे सबै घरी । तज सबै भरम रे हिये धरी ।
त्यागिये सबहिं भूठ जालही । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

६ चाकहासिनी

जिसमें वैतालीके विषम चरणोंके समान चारों पाद हों परन्तु दूसरी और तीसरी मात्रा मिलकर एक दीर्घाक्षर हो, उसे 'चाकहासिनी' कहते हैं ॥ यथा—

प्रभूहिं जप सर्व्व काल रे । तजौ सबै मोह जाल रे ॥
जपौ यही रे सबै घरी । हरी हरी रे हरी हरी ॥

सोरठा—पूरण पूरव-अर्द्ध, छन्दप्रभाकर जिमि भयो ।

तैसहिं उत्तर-अर्द्ध, सम्पूरण प्रभु ! कौजिये ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे मात्रिकसमाईसमान्तर्गतवैतालीयवर्णन-
नाम सप्तमो मयूखः ॥ ७ ॥

इति मात्रिकछन्दांसि



ओ३म्

अब छन्दःप्रभाकरका उत्तरार्ध लिखा जाता है ।

दीहा—श्रीगुरुपिङ्गलरायके, पदजुग हिय महँ आनि ।

छन्दप्रभाकरको कहौं, उत्तरार्ध मुखदानि ॥

सोरठा—विनय करौं कर जोरि, उत्तम दीजे बुद्धि मुहिँ ।

भति अति भीरी सोरि, तुम्हरो ही बल है सदा ॥

अथ ।

वर्णप्रत्ययप्रकरणम् ।

जिस प्रकार मात्रिक छन्दोंमें ६ प्रत्यय होते हैं उसी प्रकार वर्णवृत्तोंमें भी ६ प्रत्यय होते हैं अर्थात् प्रस्तार १, सूची २, पाताल ३, उद्दिष्ट ४, नष्ट ५, मेरु-६, खण्डमेरु ७, पताका ८ और मङ्कटी ९ ॥

१ वर्णप्रस्तार ।

जितने वर्णोंके जितने भेद होते हैं उनके रूपोंके दर्शानेको वर्णप्रस्तार कहते हैं । वर्णवृत्तोंमें गुरु मात्राका पहिला भेद वर्णोंकी संख्याके समान रखते हैं । जैसे एक वर्णके प्रस्तारका पहिला भेद यह (१) है ॥

जितने वर्णका प्रस्तार बढ़ाना हो उतने वर्णोंका पहिला भेद लिखो । फिर गुरुके तले लघु लिखो और शेष ज्योंका त्यों लिखो । फिर वाई'ओरके गुरुके नीचे लघु लिखकर शेष ज्योंका त्यों लिखो और जितनी न्यूनता रहे उतनी वाई'ओरको गुरुके रूपसे लिखो यह क्रिया अन्तका सर्व लघु भेद आतेतक करो ॥

विद्यार्थियोंके बोधार्थ एक वर्णसे लेकर चार वर्ण तकका प्रस्तार नीचे दिया जाता है ॥

एक वर्णका प्रस्तार		दो वर्णका प्रस्तार ।		तीनवर्ण का प्रस्तार		चार वर्णका प्रस्तार	
रूप	भेद	रूप	भेद	रूप	भेद	रूप	भेद
५	पहिला	५५	पहिला	५५५	पहिला	५५५५	पहिला
॥	दूसरा	१५	दूसरा	१५५	दूसरा	१५५५	दूसरा
		५१	तीसरा	५१५	तीसरा	५१५५	तीसरा
		॥	चौथा	११५	चौथा	११५५	चौथा
				५५१	पांचवां	५५१५	पांचवां
				१५१	छठवां	१५१५	छठवां
				५११	सातवां	५११५	सातवां
				१११	आठवां	१११५	आठवां
						५५५१	नवां
						१५५१	दसवां
						५१५१	ग्यारवां
						११५१	बारवां
						५५११	तेरवां
						१५११	चौदवां
						५१११	पंद्रवां
						११११	सोलवां

इस प्रस्तारके द्वारा प्रकाशित हुआ कि एक वर्णके दो भेद, दो वर्णोंके चार भेद, तीन वर्णोंके आठ भेद और चार वर्णोंके १६ भेद हो सकते हैं इससे अधिक नहीं हो सकते अर्थात् इतने वृत्तोंसे अधिक वृत्त नहीं बन सकते ॥

वर्णवृत्तोंकी संख्या जाननेका चक्र ।

वर्ण	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
संख्या	१	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६

यदि १३ वर्णोंके वृत्तोंकी संख्या जाननी हो तो १२ वर्णों-

की वृत्तोंकी संख्याको द्विगुणित करलो इसी प्रकार १४ वर्णोंकी वृत्तोंकी संख्याको जाननेके हेतु १३ वर्णोंकी संख्याको दूना करो। इसी प्रकार आगेकी क्रिया चलानेसे दूष्ट वर्णोंकी वृत्तोंकी संख्या प्रकाशित होती है। इसी संख्याको वर्णोद्दिष्टाङ्क वा वर्णसूचीके अङ्क कहते हैं ॥

२ वर्णसूची ।

जिसके द्वारा वर्णवृत्तोंकी संख्याकी शुद्धता और उनके भेदों में आदि अन्त लघु और आदि अन्तके गुरुकी संख्या जानी जाय उसे वर्ण-सूची कहते हैं ॥

रीति ।

जितने वर्णोंकी सूची देखनी हो उतने वर्णोंकी संख्या तक २, ४, ८ अर्थात् दूने दूने अङ्क लिखो। इस क्रियाके अन्तमें जो संख्या आवेगी वही संख्या वृत्तभेदकी है और अन्त्याङ्कसे वाई' औरके अङ्कके समान आदि लघु और अन्त लघु और उतने ही गुरु और अन्त गुरु हैं उससे भी वाई' औरको अर्थात् अन्त्याङ्कसे तीसरे कोष्ठमें जो अङ्क है उसके समान आद्यन्त लघु और आद्यन्त गुरुवाले वृत्त होते हैं ॥

उक्त नियमके स्पष्टीकरणार्थ चार वर्णोंतककी सूची लिखी जाती है। एक वर्णकी सूची नहीं होती ॥

१ वर्णोंकी सूची ।	आदिलघु अन्तलघु	४ सर्वसंख्या
	२	
	आदिगुरु अन्तगुरु	

	आद्यन्त लघु	आदिलघु अन्तलघु	
३ वर्णोंकी सूची	२	४	८ सर्वसंख्या
	आद्यन्त गुरु	आदिगुरु अन्तगुरु	

	आद्यन्त लघु	आदिलघु अन्तलघु	
४ वर्णोंकी सूची	४	८	१६ सर्वसंख्या
	आद्यन्त गुरु	आदिगुरु अन्तगुरु	

इस प्रकारसे प्रकाशित हुआ कि ४ वर्णोंके १६ ही वृत्त ही सकते हैं और इनमेंसे ८ ऐसे होंगे जिनके आदिमें लघु, और ८ ही ऐसे होंगे जिनके अन्तमें लघु है, और आठ ऐसे होंगे जिनके आदिमें गुरु, और ८ ही ऐसे होंगे जिनके अन्तमें गुरु है और ४ ऐसे होंगे जिनके आदि और अन्तमें लघु, और ४ ही ऐसे होंगे जिनके आदि और अन्तमें गुरु है, ऐसेही और भी जानलो । इसकी शुद्धता प्रस्तारसे देखलो ॥

३ वर्ण-पाताल ।

प्रत्येक वर्णवृत्तके भेद अर्थात् सम्पूर्ण संख्याका ज्ञान, लघ्वादि

लघुन्त, गुर्वादि, गुर्वन्त, सर्व गुरु, सर्व लघु, आदि वर्ण-पातालके द्वारा जाने जाते हैं ॥

रीति ।

जितने वर्णका पाताल बनाना हो उतनी ही ऊर्ध्व रेखा खींचो फिर पांच आड़ी रेखा खींचो इस रीतिसे कोष्ठ बनजानेपर प्रथम कोष्ठमें एक दो इत्यादि अङ्क लिखो फिर दूसरे कोष्ठमें वर्णसूचीके अङ्क लिखो और तीसरे कोष्ठमें सूचीके अङ्कोंका आधा लिखो और चौथे कोष्ठमें पहिले और तीसरे कोष्ठस्थ अङ्कोंका गुणनफल लिखो । इस नियमानुसार इष्ट वर्णोंका पाताल बनालो । उदा-हरणार्थ नीचेके चक्रमें ८ वर्ण तकका पाताल दियाजाता है ॥

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वर्णसंख्या
२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	सर्वसंख्या
१	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	लघुादिलघुवन्त, गु. गु०
१	४	१२	३२	८०	१८२	४४८	१०२४	२३०४	सर्वगुरु सर्वलघु

इस पातालके बनानेसे विदित हुआ कि ९ वर्णके सब वृत्त ५१२ हो सकते हैं और इन वृत्तोंमेंसे २५६ वृत्त ऐसे होंगे जिनके आदिमें लघु है २५६ ऐसे होंगे जिनके अन्तमें लघु है, २५६ ऐसे होंगे जिनके आदिमें गुरु है और २५६ ही ऐसे होंगे जिनके अन्तमें गुरु है । सब वृत्तोंमें मिलकर २३०४ गुरु और २३०४ ही लघु वर्ण होंगे । इसी प्रकार और भी जानो ॥

४ वर्णोद्दिष्ट ।

जिसके द्वारा अमुक वर्णप्रसारकी अमुक रूपका क्रमसंख्या विदित होती है उसे वर्ण-उद्दिष्ट कहते हैं ॥

रीति ।

वर्णके प्रस्तारका जो भेद लिखा हो अर्थात् पूछा हो तो उस लिखेहुए भेदके ऊपर १, २, ४ इत्यादि अर्थात् दूने दूने अङ्क लिखो फिर लघु मात्राके शिरस्थ अङ्कोंके योगमें एक युक्त करदो । यही प्रश्नका उत्तर होगा ॥

आगे एक वर्णसे लेकर चार वर्ण तकको उद्दिष्ट लिखि जाते हैं ।

१ वर्णका उद्दिष्ट		३ वर्णों का उद्दिष्ट	
१ ५	१ ला भेद	१ २ ४ ५ ५ ५	१ ला भेद
१ १	२ रा भेद	१ २ ४ १ ५ ५	२ रा भेद
२ वर्णों का उद्दिष्ट		१ २ ४ ५ १ ५	३ रा भेद
१ २ ५ ५	१ ला भेद	१ २ ४ १ १ ५	४ था भेद
१ २ १ ५	२ रा भेद	१ २ ४ ५ ५ १	५ वां भेद
१ २ ५ १	३ रा भेद	१ २ ४ १ ५ १	६ वां भेद
१ २ १ १	४ था भेद	१ २ ४ ५ १ १	७ वां भेद
		१ २ ४ १ १ १	८ वां भेद

यदि कोई पूछे कि चार वर्णके प्रस्तारका यह भेद १ ५ १ ५ कौनसा है तो इस भेदके ऊपर सूचीके अङ्क स्थापित करनेसे यह रूप हुआ—

१ २ ४ ८
१ ५ १ ५

४ वर्णों का उद्दिष्ट ।	
१ २ ४ ८ ५ ५ ५ ५	१ ला भेद
१ २ ४ ८ १ ५ ५ ५	२ रा भेद
१ २ ४ ८ ५ १ ५ ५	३ रा भेद
१ २ ४ ८ १ १ ५ ५	४ था भेद
१ २ ४ ८ ५ ५ १ ५	५ वां भेद
१ २ ४ ८ १ ५ १ ५	६ वां भेद
१ २ ४ ८ ५ १ १ ५	७ वां भेद
१ २ ४ ८ १ १ १ ५	८ वां भेद
१ २ ४ ८ ५ ५ ५ १	९ वां भेद
१ २ ४ ८ १ ५ ५ १	१० वां भेद
१ २ ४ ८ ५ १ ५ १	११ वां भेद
१ २ ४ ८ १ १ ५ ५	१२ वां भेद
१ २ ४ ८ ५ ५ १ १	१३ वां भेद
१ २ ४ ८ १ ५ १ १	१४ वां भेद
१ २ ४ ८ ५ १ १ १	१५ वां भेद
१ २ ४ ८ १ १ १ १	१६ वां भेद

अब लघु वर्णों के अङ्क १ और ४ के योग ५ में १ मिलाने से ६ होते हैं अतएव चार वर्णों के प्रस्तारका यह ऋठवां भेद है । स्मरण रहे कि जिस रूपमें कोई लघु न हो उसे पहिला भेद जानो ॥

५ वर्ण-नष्ट ।

जिसके द्वारा कितने ही वर्णों के प्रस्तार के अमुकसंख्यक भेदके रूपका ज्ञान होता है उसे वर्ण-नष्ट कहते हैं ॥

जितने वर्णों के प्रस्तारके जिस भेदका रूप निकालना ही उतने कल्पित वर्णों के समान लघु रूप लिखकर उनके शीर्ष पर वर्णोद्दिष्टाङ्क स्थापित करो फिर अन्तके उद्दिष्टाङ्कको द्विगुणित करके उसमेंसे पृच्छहुए रूपकी संख्या घटाओ, जो अङ्क शेष वचे वह जिन जिन उद्दिष्टाङ्कोंके योगसे बनाहो उनके नीचे की लघुमात्राको गुरु करदो ।

इतना करने पर जो रूप सिद्ध होगा वही पृच्छकके प्रश्नका उत्तर है । जैसे किसीने पूछा कि चार वर्णों के प्रस्तारके १३ वें भेदका रूप कैसा है ॥ अब उक्त नियमानुसार ४ लघु खींचकर उनके शीर्ष पर वर्णोद्दिष्टाङ्क स्था-

पित करनेसे विदित हुआ कि १ २ ४ ८ अन्य वर्णोद्दिष्टाङ्क ८ है अब इसको द्विगुणित करके १ १ १ १ पृच्छहुए भेदकी संख्या

१३ ऋण की तो ३ वचे यह १ + २ ही को योगसे वनसकता है
अतएव इनकी लघु मात्रा गुरु होगई और यह रूप (SSII)
सिद्ध हुआ । इसीको १३वां भेद जानो । ऐसी ही और भी समझलो ॥
यहां नीचे विद्यार्थियोंके बोधार्थ १ वर्णसे ४ वर्णतकका वर्णनष्ट
लिखा जाता है ॥

१ वर्णका नष्ट					४ वर्णोंका नष्ट					
१ दूने २										
१	५	शेष १			१	५	५	५	५	शेष १५
२	१	शेष ०			२	१	५	५	५	शेष १४
२ वर्णोंका नष्ट										
१ २ दूने ४										
१	५	५	शेष ३		३	५	१	५	५	शेष १३
२	१	५	शेष २		४	१	१	५	५	शेष १२
३	५	१	शेष १		५	५	५	१	५	शेष ११
४	१	१	शेष ०		६	१	५	१	५	शेष १०
३ वर्णोंका नष्ट										
१ २ ४ दूने ८										
१	५	५	५	शेष ७	७	५	१	१	५	शेष ८
२	१	५	५	शेष ६	८	१	१	१	५	शेष ७
३	५	१	५	शेष ५	९	५	५	५	१	शेष ६
४	१	१	५	शेष ४	१०	१	५	५	१	शेष ५
५	५	५	१	शेष ३	११	५	१	५	१	शेष ४
६	१	५	१	शेष २	१२	१	१	५	१	शेष ३
७	५	१	१	शेष १	१३	५	५	१	१	शेष २
८	१	१	१	शेष ०	१४	१	५	१	१	शेष १
					१५	५	१	१	१	शेष ०
					१६	१	१	१	१	

इसी प्रकार और भी जानो ॥

६ वर्ण-मेरु ।

जितने वर्णोंके सम्पूर्ण वृत्त होते हैं उनकी भेदोंके रूपोंमें जितने जितने गुरु और जितने जितने लघुकी जितने रूप होती हैं उनकी संख्या बता देनेको वर्णमेरु कहते हैं ॥

रीति ।

पहिले दो कोष्ठ लिखो फिर इनके नीचे ३, ४, ५ आदि कोष्ठ प्रश्नके अनुसार लिखो पश्चात् इन कोष्ठोंके आदि अन्तके कोष्ठोंमें एक एक लिखदो फिर दाहिनी ओरके और बाईं ओरके कोष्ठोंमें आदिसे अन्ततक क्रमपूर्वक २, ३, ४ आदि अङ्क लिखो शेष कोष्ठोंमें ऊपरके दो अङ्कोंका योग लिखदो । उदाहरणार्थ आठ वर्णोंतकका मेरु लिखा जाता है ॥

२	१	१	१ वर्णोंका रूप							
४	१	२	१	२ वर्णोंके रूप						
८	१	३	३	१	३ वर्णोंके रूप					
१६	१	४	६	४	१	४ वर्णोंके रूप				
३२	१	५	१०	१०	५	१	५ वर्णोंके रूप			
६४	१	६	१५	२०	१५	६	१	६ वर्णोंके रूप		
१२८	१	७	२१	३५	३५	२१	७	१	७ वर्णोंके रूप	
२५६	१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१	८ वर्णोंके रूप

SSSSSSS 1SSSSSSS 11SSSSSS 111SSSSS 1111SSSS 11111SSSS 111111SSSS 1111111SSSS 11111111SSSS 111111111SSSS

इस वर्णमेरुके बनानेसे प्रकाशित हुआ कि आठ वर्णोंके वृत्तोंमें एक भेद ऐसा है जिसमें सर्व गुरु हैं, ८ भेद ऐसे हैं जि-

नमें १ लघु और ७ गुरु हैं, २८ भेद ऐसे हैं जिनमें दो लघु और ६ गुरु हैं, ५६ भेद ऐसे हैं जिनमें ३ लघु और ५ गुरु हैं, ७० भेद ऐसे हैं जिनमें ४ लघु और ४ गुरु हैं, ५६ भेद ऐसे हैं जिनमें ५ लघु और ३ गुरु हैं, २८ भेद ऐसे हैं जिनमें ६ लघु और दो गुरु हैं, ८ भेद ऐसे हैं जिनमें ७ लघु और १ गुरु है और एक भेद ऐसा है जिसमें सर्व लघु हैं । इसी प्रकार औरोंमें भी जानलो ॥

वर्ण-एकावली मेरु ।

पहिले दो फिर तीन फिर चार आदि इच्छानुसार कोष्ठ बना-लो फिर आदि अंकके कोष्ठोंमें एक ही एक लिखदो फिर आदि कोष्ठके आगे और अन्त्य कोष्ठके पीछेके कोष्ठोंमें दो तीन इत्यादि लिखो और शेष कोष्ठोंमें शीर्षाङ्क जोड़के लिखो । इस क्रियाके अनुष्ठानसे वर्ण-एकावली मेरु बनता है ॥

उदाहरणार्थ नीचे ६ वर्णोंका एकावली मेरु लिखा जाता है॥

१	१						
१	२	१					
१	३	३	१				
१	४	६	४	१			
१	५	१०	१०	५	१		
१	६	१५	२०	१५	६	१	

इस मेरुके बनानेसे यह प्रकाशित हुआ कि ६ वर्णोंके सम्पूर्ण वृत्तोंमें एक वृत्त ऐसा है कि जिसमें सर्वलघु हैं, ६ वृत्त ऐसे हैं कि जिनमें १ गुरु और ५ लघु हैं, १५ वृत्त ऐसे हैं जिनमें

||||| ||||| ||||| ||||| ||||| ||||| ||||| |||||

२ गुरु और ४ लघु हैं, २० वृत्त ऐसे हैं जिनमें ३ गुरु और ३ लघु हैं, १५ वृत्त ऐसे हैं जिनमें ४ गुरु और २ लघु हैं, ६ वृत्त ऐसे हैं

जिनमें ५ गुरु और एक लघु है और एक वृत्त ऐसा है जिसमें सर्व गुरु है । इसी प्रकार और भी जानो ॥

७ वर्णखण्डमेरु ।

जिससे बिना मेरुके बनाये मेरुका काम निकले उसे वर्णखंड-मेरु कहते हैं ॥

रीति ।

जितने वर्णका खण्डमेरु बनाना हो उतने ही कोष्ठ खींचो और एक कोष्ठ और भी अधिक लिखो इन कोष्ठोंके भरनेकी यह रीति है कि पहिले कोष्ठमें एक एकका ही अंक लिखो, फिर दूसरे कोष्ठमें जितने वर्णका मेरु बनाना हो वहां तक १, २, ३ आदि क्रमसे लिखो । तत्पश्चात् उत्तरोत्तरके अंक उपान्यकी रीतिसे जोड़के सब कोष्ठोंको भरदो । इस क्रियाके कारनसे अन्तमें जो अंक आवेगा वही उत्तर होगा ॥

विद्यार्थियोंके बोधार्थ नीचे आठ वर्णों तकका खण्डमेरु लिखा जाता है ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	१	२	१	१	१	१	१	१
	२	३	४	५	६	७	८	
	३	६	१०	१५	२१	२८		
	४	१०	२०	३५	५६			
	५	१५	३५	७०				
	६	२१	५६					
	७	२८						
	८							

इसमें अन्त्यके अंक १, ८, २८, ५६, ७०, ५६, २८, ८ और १ आदि हैं इनसे वही प्रयोजन है जो पहिले मेरुमें लिखा है ।

एक रीति यह भी है कि जितने वर्णका मेरु बनाना हो उतने ही तिहरे कोष्ठ बनाओ और उनको इस रीतिसे भरो कि

स से नीचेके तीसरे कोष्ठमें १, २, ३ आदि अंक लिखो फिर दूसरे कोष्ठमें उत्क्रमसे अंक द्रष्ट वर्णकी संख्यासे लेकर लिखो । याव रहा तीसरा कोष्ठ, उसके भरनेकी यह रीति है कि तिर्य्यक्-गतिसे पहिले और दूसरे कोष्ठके अंकोंका गुणनफल निकालकर तीसरे कोष्ठके अंकका भाग दे जा लखि आवे उसे लिखो । इसी प्रकार शेष सब कोष्ठ भरो और पहिले कोष्ठके अंकोंको उत्तर मानो; जैसे आठ वर्णका मेरु नीचे लिखा जाता है ॥

१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१
	८	०	६	५	४	३	२	१
	१	२	३	४	५	६	७	८

प्रगट हो कि यदि एकका अंक पहिले कोष्ठकी वाईं ओर सर्वगुरुका और भी रखलियाजाय तो पूर्वोक्त मेरुका काम निकल आवे; जैसे—

$$\frac{१ \times ८}{१} = ८, \quad \frac{८ \times ७}{२} = २८, \quad \frac{२८ \times ६}{३} = ५६, \quad \frac{५६ \times ५}{४} = ७०$$

$$\frac{७० \times ४}{५} = ५६, \quad \frac{५६ \times ३}{६} = २८, \quad \frac{२८ \times २}{७} = ८ \text{ और } \frac{८ \times १}{८} = १$$

८ वर्णपताका ।

वर्णमेरुके द्वारा गुरु लघुके जो भेद प्रकाशित होते हैं उनके ठीक २ स्थान जाननेको वर्णपताका कहते हैं ॥

रीति ।

प्रथम एक खड़ी रेखा खींचो फिर वाईं ओरसे दाहिनी ओर को वर्णमेरुके कोष्ठके समान कोष्ठ बनाओ । इन कोष्ठोंको

इस रीतिसे भरो कि दण्डाकारके कोष्ठोंमें कल्पित वर्णकी सूचीके अंक लिखा फिर शीर्षाङ्कमेंसे तीसरे अंकको आदि लेकर एकके अङ्क तक घटाओ । प्रथम कोष्ठमें लिखते जाओ तो यह पताका पहिली बनेगी । फिर इस पताकाके अंकोंमेंसे सूचीके तीसरे अंकको आदि लि १ तक घटाओ इसी प्रकार संपूर्ण पताकाके कोष्ठ भर दो, परन्तु स्मरण रखो कि घटाते समय जो अङ्क पताकाके किसी और कोष्ठमें आगया है उसे फिर न लिखा । इसी रीतिसे नीचे एक वर्णसे लेकर पांच वर्णों तककी पताका लिखी जाती है ॥

१ वर्णकीपताका २ वर्णोंकीपताका ३ वर्णोंकीपताका

१	२
५	१

११	४	
१५	२	३
५५	१	

१११	८		
११५	४	६	७
१५५	२	३	५
५५५	१		

४ वर्णोंकीपताका

५ वर्णोंकीपताका

११११	१६					
१११५	८	१२	१४	१५		
११५५	४	६	७	१०	११	१३
१५५५	२	३	५	८		
५५५५	१					

१११११	३२									
११११५	१६	२४	२८	३०	३१					
१११५५	८	१२	१४	१५	१०	२२	२३	२६	२७	२८
११५५५	४	६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५
१५५५५	२	३	५	८	१०					
५५५५५	१									

अब पांच वर्णों की पताकासे यह जाना गया कि ५ वर्णों के वृत्तोंमें ३२ वां वृत्त ऐसा है जिसके पांचों वर्ण लघु हैं। १६, २४, २८, ३० और ३१ वें वृत्त ऐसे हैं जिनमें १ गुरु और ४ लघु हैं। ८, १२, १४, १५, २०, २२, २३, २६, २७ और २९ वें वृत्त ऐसे हैं जिनमें दो गुरु और ३ लघु हैं। ४, ६, ७, १०, ११, १३, १८, १९, २१ और २५ वें वृत्त ऐसे हैं जिनमें ३ गुरु और २ लघु हैं। २, ३, ५, ९ और १७ वें वृत्त ऐसे हैं जिनमें ४ गुरु और १ लघु है। १ अर्थात् पहिला वृत्त ऐसा है जिसमें पांचों गुरु हैं। ऐसे ही और भी जानो ॥

९ वर्णमर्कटी ।

वर्णवृत्तोंकी संख्या, गुर्वादि गुर्वन्त और लघ्वादि लघ्वन्त, सर्व वर्ण, गुरु लघु, सर्वकला और पिण्ड जिसके द्वारा जाने जाय उसे मर्कटी कहते हैं ॥

रीति ।

द्वष्ट वर्णके समान लम्बे कोष्ठ और ७ कोष्ठ नाभीकी ओर बनाला। लम्बे कोष्ठोंमेंसे पहिले कोष्ठमें वाद्वे' ओरसे एक दो आदि अंक लिखो, और दूसरे कोष्ठमें वर्णसूचीके अङ्क लिखो तीसरे कोष्ठमें दूसरे कोष्ठका आधा लिखा और चौथे कोष्ठमें पहिले और दूसरे कोष्ठोंके अङ्कोंका गुणनफल लिखो। पांचवें कोष्ठमें चौथे कोष्ठका आधा लिखा। छठवें कोष्ठमें चौथे और पांचवें कोष्ठोंके अङ्कोंका योग लिखा और सातवें कोष्ठमें छठवें कोष्ठका आधा लिखो ॥

उदाहरणार्थ ६ वर्णों तककी मर्कटी नीचे लिखी जाती है ।

१	२	३	४	५	६	वर्णसंख्या
२	४	८	१६	३२	६४	वृत्तोंकीसंख्या
१	२	४	८	१६	३२	गुर्वादि गुर्वन्त, लघुादि लघुन्त
२	८	२४	६४	१६०	३८४	सर्ववर्ण
१	४	१२	३२	८०	१८२	गुरुलघु
३	१२	३६	८६	२४०	५७६	सर्वकला
$\frac{१}{२}$	६	१८	४८	१२०	२८८	पिंड

इस मर्कटीके बनानेसे प्रकाशित हुआ कि ६ वर्णोंके वृत्तोंकी संख्या ६४ है । ३२ वृत्त ऐसे हैं जिनके आदिमें गुरु है ३२ ऐसे हैं जिनके अन्तमें गुरु है, ३२ ऐसे हैं जिनके आदिमें लघु है और ३२ ही ऐसे हैं जिनके अन्तमें लघु है । संपूर्ण वृत्तोंमें ३८४ वर्ण हैं । संपूर्ण वृत्तोंमें १८२ गुरु और १८२ ही लघु हैं । सर्वकला ५७६ और पिण्ड २८८ हैं । दो कलाओंका एक पिण्ड होता है ॥

इति वर्णप्रत्ययाः ।

अथ

वर्णगणप्रकरणम् ।

वर्णवृत्तोंमें गणोंका काम पड़ता है, अतएव यहां पर उनका वर्णन किया जाता है । तीन वर्णोंके समूहको गण कहते हैं । ये गण ८ हैं । इनके नाम और लक्षण नीचे लिखे जाते हैं ॥

सीरठा ।

आदि मध्य अवसान, 'यरता' में लघु जानिये ।

'भजसा' गुरु प्रमान, 'मन' तिहुं गुरु लघु मानिये ॥

जिस त्रिवर्णात्मक समुदायके आदिमें, मध्यमें और (अवसान) अन्तमें लघु वर्ण हो उसे यथाक्रमसे 'य र ता' यगण, रगण और तगण कहते हैं । वैभेही जिस त्रिवर्णात्मक समूहके आदिमें मध्यमें और अन्तमें गुरु वर्ण हो उसे यथाक्रमसे 'भ ज सा' भगण, जगण और सगण कहते हैं । परन्तु जिस त्रिवर्णात्मक समूहके तीनों वर्ण गुरु और लघु हों उसे यथाक्रमसे 'म न' भगण और नगण कहते हैं ॥

तीन वर्णोंका प्रसार निकालके उक्त वर्णोंका स्पष्टीकरण किया जाता है । वक्र रेखासे (ऽ) गुरु और सरल रेखासे (।) लघुका बोध होता है ॥

नाम	रेखारूप	वर्णरूप	लघुसंज्ञा	उदाहरण
भगण	ऽ ऽ ऽ	भागाना	म	माधीजू
यगण	। ऽ ऽ	यगाना	य	यचीरे
रगण	ऽ । ऽ	रागाना	र	रामकी
सगण	। । ऽ	सगाना	स	सुमिरौ
तगण	ऽ ऽ ।	तागाना	त	तूईश
जगण	। ऽ ।	जागाना	ज	जपैन
भगण	ऽ । ।	भागाना	भ	भावत
नगण	। । ।	नागाना	न	नवन

दोहा ।

‘स य र स त ज भ न ग ल’ सहित दश अक्षर इन सींहि ।
सर्वशास्त्र व्यापित लखी विश्व विष्णु सीं जींहि ॥

(भा०छं०सं०)

टी०—जैसे विश्व विष्णुसे व्यापित है वैसे ही सर्वशास्त्रपुराणादिक
इन्हीं दशाक्षरोंसे व्यापित हैं, इस दोहेमें आठ गणोंके पञ्चात्
ही ‘ग ल’ का प्रयोग किया है इससे यही प्रतिपादित होता है
कि वर्णवृत्तमें आदिसे लेकर तीन तीन अक्षरोंमें गण घटित
किये जायँ अन्तमें जो वर्ण शेष रहें वे गुरु अथवा लघु हों ।
यह शुद्ध प्राचीन प्रथा है । गुरु वा लघुको आदिमें वा कहीं
सध्यमें मनमाने सानकर गणोंका क्रम विगाड़ना वृत्तप्रथाके
अत्यन्त विरुद्ध है ॥

सधुसती वृत्त ।

‘स न भ य’ सुखदा । ‘ज र स त’ दुखदा ।

अशुभ न धरिये । नर जु वरनिये ॥

टी०—आठ गणोंमेंसे चार गण— मगण, नगण, भगण और यगण
सुखद और जगण, रगण, सगण और तगण दुखद हैं । नर
कवित्वके आदिमें अशुभ गणोंका प्रयोग श्रेष्ठ कविलोग अ-
पनी कवितामें नहीं करते ॥

काव्य रचनेमें कविजन हिगणका भी विचार अवश्य रखते हैं
उसकी व्याख्या नीचे की जाती है ॥

मगण नगण ये मित्र हैं, भगण यगण ये दास !

उदासीन ‘ज त’ जानिये, ‘र स’ रिपु करत विनास ॥

गण	संयोग	फलाफल
मगण नगण	मित्र + मित्र	सिद्धि
	मित्र + दास	जय
	मित्र + उदासीन	हानि
	मित्र + शत्रु	मित्रनाश
भगण रगण	दास + मित्र	सिद्धि
	दास + दास	हानि
	दास + उदासीन	पीडा
	दास + शत्रु	पराजय
जगण तगण	उदासीन + मित्र	अल्पफल
	उदासीन + दास	दुःख
	उदासीन + उदा०	अफल
	उदासीन + शत्रु	दुःख
रगण सगण	शत्रु + मित्र	शून्य
	शत्रु + दास	प्रियानाश
	शत्रु + उदासीन	शंका
	शत्रु + शत्रु	नाश

जानना चाहिये कि गणा-
गणका दोष केवल मात्रिक-
छन्दोंमें ही माना जाता है वर्ण-
वृत्तोंमें नहीं माना जाता क्योंकि
यदि वर्णवृत्तोंमें भी माना जाय
तो जिन जिन वृत्तोंके आदिमें
जगण, रगण, सगण वा तगण
हैं वे निर्दोष वनही नहीं स-
केंगे, परन्तु मात्रिक छन्दोंमें भी
मंगलवाची और देवतावाची
शब्दों और देवकथाओंके प्रसंग-
में गणागणका दोष नहीं माना
जाता ॥

वर्णवृत्तोंमें जिनके आदिमें जगण, तगण, रगण वा सगण आते
हैं वे जहां तक हो सके मंगलवाची शब्दोंसे ही भूषित किये
जावें । गणागणका विचार अथवा दोष विशेष करके नरकाव्यहीमें
है । देवकाव्यमें नहीं । इसकेलिये प्रमाण भी है ॥

(इन्द्रवच्चा)

दोषो गणानाम् शुभदेववाच्ये नस्यात्तथैवाक्षरवृत्तसंज्ञे ।
 साञ्जीत्यपद्ये तु विचारणीयो न्यासाद्गुरोश्चैव लघोरनित्यात् ॥
 (वृत्तदीपिकायां)

श्लोक ।

वृत्तरत्नाकरे-नायको वर्ण्यते यत्र, फलं तस्य समादिशत् ।
 अन्यथा तु क्लृप्ते काव्ये, कवेर्दीर्घावहं फलम् ॥
 देवता वर्ण्यते यत्र, क्वापि काव्ये कवीश्वरैः ।
 मित्रामित्रविचारो वा, न तत्र फलकल्पना ॥
 देवतावाचकाः शब्दा, ये च भद्रादिवाचकाः ।
 ते सर्वे नैव निन्द्यास्युर्लि,पितो गणतोऽपि वा ॥

किसी २ ग्रन्थकारका मत है कि गणके शुभाशुभका विचार
 ग्रन्थके आदिमें ही करना चाहिये परन्तु यह सर्वसम्मत नहीं है ॥

नरकाव्य रचते समय इस बातका अवश्य ध्यान रहे कि छन्द-
 के आदिमें कोई कुगण न पड़ने पावे कुगणके पड़नेसे छन्दकी
 रोचकता नष्ट हो जाती है, इसीलिये एक गणके दूसरे गणके सं-
 योगसे जो फलाफल होता है वह ऊपरके कोष्ठमें दर्शाया गया है ।
 प्रत्येक छन्दके चारों चरणोंमेंसे गणागणका विचार केवल पहिले
 चरणके प्रथम ६ अक्षरोंमें ही किया जाता है, शेष चरणोंमें इसकी
 विचारकी आवश्यकता नहीं है ॥

काव्यके करनेमें प्राचीन कविजन तिथि वार नक्षत्र इत्यादि-
 का कितना विचार रखते थे वह भी नीचे दर्शाया जाता है ॥

गण	स्वामी	फल	मास	पक्ष	तिथि	वार	नक्षत्र	वर्ण	वस्त्र	रंग	भूषण	कुल	माता	पिता	लोक
मगण	पृथ्वी	श्री	वैशाख	सित	३	रवि	मघा	चत्री	श्वेत	श्वेत	श्वेत	पाहन	सरस्वती	पिंगल	सत्य
नगण	दिवस	सुख	मार्ग.	सित	१२	बुध	मित्र	विप्र	सुवर्ण	चित्र	सुवर्ण	चत्री	सावित्री	ब्रह्मा	स्वर्ग
भगण	शशि	यश	श्रावण	सित	५	शुक्र	मूल	चत्री	पीत	पीत	सुवर्ण	इन्द्र	संगला	शुभ	श्रमरा०
यगण	जल	धनद	कार्तिक	सित	११	भौम	ज्येष्ठा	विप्र	श्वेत	श्याम	रुपा	समुद्र	धर्मी	समुद्र	पाताल
जगण	मातृ	शोक	चैत्र	ऊष्य	१२	शुक्र	जया	वैश्व	श्याम	श्याम	मणि	देल्य	भक्ता	कश्यप	सृष्ट्यु
रगण	अग्नि	जारक	ज्येष्ठ	ऊष्य	२	भौम	चित्रा	वैश्व	लाल	लाल	लाल	काल	जरा	सृष्ट्यु	संयमनी
सगण	वायु	स्वप्न	पौष	ऊष्य	४	शुक्र	शत०	शुद्ध	हरित	धूस्र	सुवर्ण	वायु	बुद्धि	पवन	ब्योम
तगण	ब्योम	शून्य	आषाढ	ऊष्य	१	बुध	स्वाति	शुद्ध	नील	श्वेत	लाल	पवन	दक्षिणा	यम	स्वर्ग

अब नीचे एक कोष्ठ दिया जाता है जिससे समवर्त्तोंकी संज्ञा और उनके सम्पूर्ण भेदोंकी संख्या जानी जा सकती है और इस ग्रन्थमें जो मुख्य २ और प्रचलित भेद दिये हैं उनकी संख्या भी उसीसे ज्ञात हो सकती है ॥

वर्ण	संज्ञा ।	सम्पूर्ण भेद	इस ग्रन्थ में जो मुख्य २ भेद लिखे हैं
१	उक्त्या	२	१
२	अनुक्त्या	४	४
३	मध्या	८	८
४	प्रतिष्ठा	१६	८
५	सुप्रतिष्ठा	३२	७
६	गायत्री	६४	८
७	उप्योक्त	१२८	१०
८	अनुष्टुप्	२५६	१४
९	वृद्धती	५१२	१०
१०	पंक्ती	१०२४	१६
११	त्रिष्टुप्	२०४८	१८
१२	जगती	४०९६	२०
१३	अतिजगती	८१९२	१५
१४	शक्ती	१६३८४	१२
१५	अतिशक्ती	३२७६८	१२
१६	अष्टिः	६५५३६	१०
१७	अत्यष्टिः	१३१०७२	६
१८	ष्टितिः	२६२१४४	८
१९	अतिष्टितिः	५२४२८८	५
२०	कतिः	१०४८५७६	२
२१	प्रकतिः	२०९७१५२	३
२२	आकृतिः	४१९४३०४	५
२३	विक्रतिः	८३८८६०८	६
२४	संस्कृतिः	१६७७७२१६	८
२५	अतिकृतिः	३३५५४४३२	९
२६	वलकृतिः	६७१०८८६४	२

२६ वर्णोंसे अधिक वर्णों जिस वृत्तमें हों उसे दण्डक कहते हैं उसकी भी संख्या इसी हिसाबसे दूनी २ करके निकालनी ॥

अब इसके आगे वर्णोंका वर्णन किया जाता है ॥

इति श्रीकन्दःप्रभाकरे वर्णप्रत्ययवर्णनाम अष्टमे मंत्रबुधः ॥ ८ ॥

अथ वर्णवृत्तानि
तत्र
वर्णसमान्तर्गतसाधारणवृत्तप्रकरणम्
उक्था
(एकाक्षरावृत्तिः २)

श्री (ग)

गो । श्री । धी । ही ॥ १ ॥

टीका—पृथ्वीमें मनुष्य जन्म पाना ही बडे पुण्यका फल है, उसमें भी लक्ष्मीयुक्त होना उससे भी बढ़कर है, लक्ष्मीयुक्त होकर बुद्धिमान् होना उससे भी बढ़कर है, और प्राप्त-बुद्धि होकर भी लज्जा शील सन्तोष इत्यादि सद्गुणोंका होना तो सबसे बढ़कर है । यह 'गो' अर्थात् एक गुरुका 'श्री' वृत्त है ॥

अल्युक्था

(द्व्यक्षरावृत्तिः ४)

स्त्री वा कामा (ग ग)

गङ्गा । धावो । कामा । पावो ॥ १ ॥

टी०—गंगाजीकी धावो क्योंकि उनकी ध्यानसे सब कामोंकी सिद्धि पावोगे । यह 'गङ्गा' अर्थात् दो गुरुका 'कामा' वृत्त है ॥
मही (ल ग)

लगी । मही । सगी । नही ॥ २ ॥

टी०—मैंने हृदयमें बहुत विचारपूर्वक देखा तो मुझे यही प्रतीत हुआ कि यह पृथ्वी किसीकी सगी नहीं है । यह 'लगी' अर्थात् एक लघु और एक गुरुका 'मही' वृत्त है ॥

सार (ग ल)

ग्वाल । धार । कृष्ण । सार ॥ ३ ॥

टी०—किसी एक कुपित ग्वाल प्रति एक सखीकी उक्ति—हेग्वाल!
 कृष्णकी अन्तःकरणमें धारण कर क्योंकि यही जगमें सार है।
 यह 'ग्वाल' अर्थात् एक गुरु और एक लघुका 'सार' वृत्त है।
 किसीर संस्कृतग्रंथमें इसकी संज्ञा 'शानु' भी पाई जातीहै ॥

मधु (ल ल)

लल । च न । मधु । जन ॥ ४ ॥

टी०—हे जनों ! मधुका लालच मत करो । यह 'लल' अर्थात्
 दो लघुका 'मधु' वृत्त है ॥

मध्या

(चाचरावृत्तिः ८)

दीहा—नारी औ शशि जानिये, प्रिया रमण पञ्चाल ।

पुनि सृगेन्द्र मन्दर कमल, म, य, र, स, त, ज, भ, न माल ॥

नारी (म)

साधोने । दी तारी । गोपोंकी । हैं नारी ॥ १ ॥

टी०—ये गोपोंकी स्त्रियां हैं ऐसा कह कर साधोने तारी बजाई ।

अथवा साधोने गोपोंकी स्त्रियोंकी तार दिया । यह 'मा'
 अर्थात् एक मगणका 'नारी' वृत्त है । इसे तारी वा ताली
 भी कहते हैं ॥

शशी (य)

यशोदा । हरीको । बतावै । शशीको ॥ २ ॥

टी०—श्रीयशोदाजी हरिकी शशी बताती हैं । यह 'य' अर्थात् एक यगणका 'शशी' वृत्त है ॥

प्रिया (र)

री प्रिया । मानं तू । मान ना । ठान-तू ॥ ३ ॥

टी०—कोई सखी राधिकाजीसे कहती है कि हे प्रिया ! तू मेरा वहना मान जा । व्यर्थ मानको मत धारण कर । अन्तका 'तू' पादपूर्णार्थ है । यह 'री' अर्थात् एक रगणका 'प्रिया' वृत्त है । इसे सृष्टी भी कहते हैं ॥

रमण (स)

सब तो । शरणा । गिरिजा । रमणा ॥ ४ ॥

टी०—हे गिरिजारमण ! हम सब तेरी शरण हैं । यह 'स' अर्थात् एक सगणका 'रमण' वृत्त है ॥

पञ्चाल (त)

तू छांड । पञ्चाल । ये सर्व्व । जंजाल ॥ ५ ॥

टी०—एक पंचालदेशनिवासिनी माता अपने प्रियपुत्रको उपदेश करती है कि हे पंचाल ! अर्थात् पंचालदेशनिवासी सुपुत्र तू इन सब जङ्गलोंको अर्थात् खाटे कामोंको त्याग दे । यह 'तू' अर्थात् एक तगणका 'पंचाल' वृत्त है ॥

मृगेन्द्र (ज)

जु खेल । नरेन्द्र । सिकार । मृगेन्द्र ॥ ६ ॥

टी०—नरश्रेष्ठ जो राम सो व्याघ्रका शिकार खेला करते थे । यह 'जु' अर्थात् एक जगणका 'मृगेन्द्र' वृत्त है ॥

मन्दर (भ)

भावंत । मन्दर । राजत । कन्दर ॥ ७ ॥

टी०—वही (मन्दर) पर्वत शोभायुक्त है जिसमें कन्दरा होती हैं। यह 'भा' अर्थात् एक भगणका 'मन्दर' वृत्त है ॥

कमल (न)

न वन । भजन । कमल । नयन ॥ ८ ॥

टी०—हे कमलनयन राम ! आपका भजन हम अजान जनों से नहीं बन पड़ता। यह 'न' अर्थात् एक नगणका 'कमल' वृत्त है। प्रतिष्ठा ।

(चतुरञ्जरावृत्तिः १६)

कन्या (म ग)

सांगै कन्या । माता धन्या । बोलयो कंसा । नासौं बंसा ॥१॥

टी०—बन्दीगृहस्थ देवकी जब सातवीं बार प्रसूता हुई तब कंस उसको निकट आया और उसी समय जन्मी हुई उसकी कन्या उसने उससे ले ली, उसी कन्याको देवकी माता जो धन्य है सांगती है। तब कंस कहता है कि मैं तेरे वंशका नाश करूंगा। यह 'सांगै' अर्थात् एक मगण और एक गुरुका 'कन्या' वृत्त है। इसे तीर्णा, तिन्ना आदि भी कहते हैं ॥

सती (न ग)

नगपती । वर सती । शिव कहौ । सुख लहौ ॥ २ ॥

टी०—कैलाशपति अथवा सतीपति जो शिव हैं उनको जपो और सुख प्राप्त करो। यह 'नग' अर्थात् एक नगण और एक गुरुका 'सती' वृत्त है। इसीको 'तरणिजा' भी कहते हैं ॥

धारि (र ल)

री ! लखौ न । जात कौन । वस्त्र हारि । मौन धारि ॥३॥

टी०—री ! देखती नहीं (मौन धारि) गुपचुप वस्त्र हरण किये कौन चला जाता है ? यह 'री ल' अर्थात् एक रगण और एक लघुका 'धारि' वृत्त है ॥

निसि (झ ल)

भूल तज । शूलि भज । सर्व दिशि । द्योसनिसि ॥४॥

टी०—भूल तज और सदासर्वत्र शिवका भजन कर । यह 'भूल' अर्थात् एक भगण और एक लघुका 'निसि' वृत्त है ॥

हरि (न ल)

न लखत । भवरत । भ्रम तज । हरि भज ॥५॥

टी०—संसारमें लिप्त रहनेके कारण तुम्हें कुछ सूझ नहीं पड़ता अब सब भ्रमको छोड़कर हरिका भजनकर । यह 'न ल' अर्थात् एक नगण और एक लघुका 'हरि' वृत्त है ॥

कला (भ ग)

भाग भरे । ग्वाल खरे । पूर्णकला । नन्दलला ॥६॥

टी०—भागके भरे तो यथार्थमें वे ग्वाल ही हैं । और कलाओंमें पूर्ण केवल नन्दलाल ही हैं । यह 'भाग' अर्थात् एक भगण और एक गुरुका 'कला' वृत्त है ॥

कृष्ण (त ल)

तू ला मन । गोपीधन । तृष्णै तज । कृष्णै भज ॥७॥

टी०—तू तृष्णाको छोड़के गोपियोंके सर्वस्व श्रीकृष्णको मन लगा

कर भज । यह 'तू ला' अर्थात् एक तगण और एक लघुका 'कृष्ण' वृत्त है ॥

क्रीड़ा (य ग)

युगै चारौ । हरी तारौ । करौ क्रीड़ा । रखौ ब्रीड़ा ॥८॥

टी०—द्वीपदीका वचन श्रीकृष्ण प्रति—हे श्रीकृष्ण परमात्मन् ! चारों युगमें आपही भक्तजनोंको तारते आये हैं अतएव इस कठिन प्रसंगमें कुछ ऐसी लीला कीजिये कि जिससे मेरी लाज रहे । यह 'युगै' अर्थात् एक तगण और एक गुरुका 'क्रीड़ा' वृत्त है । इसीको द्विगुणित और कहीं चतुर्गुणित करके भिखारीदासजीने 'शुद्धगा' वृत्त माना है ॥

धरा (त ग)

तू गाह री । क्यों ना अरी । जाने खरा । शैलै धरा ॥९॥

टी०—एक सखी किसी एक दूसरी सखीसे कहती है—कि हे सखी ! हरिका, जिन्होंने यथार्थमें गोवर्द्धन पर्वतको उठा लिया, गुण गान क्यों नहीं करती । यह 'तू गा' अर्थात् एक तगण और एक गुरुका 'धरा' वृत्त है ॥

सुप्रतिष्ठा ।

(पंचाचारावृत्तिः ३२)

पंक्ती (भ ग ग)

भाग गुनै को ? । नारि नराको ।

नाहिं लखंती । अक्षरपंक्ती ॥ १ ॥

टी०—स्त्री पुरुषोंकी भाग्यको (कौगुनै) कौन विचार अथवा जान

सकता है ? भालमें लिखीहुई अक्षरपंक्तियां किसीको भी नहीं दीख पड़तीं । यह 'भाग गु' अर्थात् एक भगण और दो गुरुका 'पंक्ती' वृत्त है । इस 'हँस' भी कहते हैं ॥

करता (न ल ग)

न लग मना । अधम जना । सिय भरता । जग करता ॥ २ ॥

टी०—सीतापति जगन्नायक श्रीराममें अधम जनोंका मन नहीं लगता है । यह 'न लग' अर्थात् एक नगण और एक लघु गुरुका 'करता' वृत्त है ॥

सम्मोहा (म ग ग)

मांगै गोपाला । वंसी री वाला ! ।

पेरै सो नेहा । छांडो सम्मोहा ॥ ३ ॥

टी०—श्रीकृष्णकी वंसीहरणकरनेहारी सखी प्रति किसी संखाकी उक्ति—री वाला ! गोपाल अपनी बाँसुरी मांगते हैं । वे तुम्हारा स्नेह देखते हैं, तुम अपना सम्मोह तजो अर्थात् तुम उन्हें केवल नन्दनन्दन ही न जानो, वे सचराचरेश हैं । यह 'मांगै गो' अर्थात् एक भगण और दो गुरुका 'सम्मोहा' वृत्त है ॥

यमक (न ल ल)

न ललचहु । सब तजहु । हरि भजहु । यम करहु ॥ ४ ॥

टी०—लोभ मत करो, सब संसारका त्याग करो, और संयम-नियम-सम्पन्न होकर श्रीहरिका भजन करो । यह 'न लल' अर्थात् एक नगण और दो लघुका 'यमक' वृत्त है ॥

हारी (त ग ग)

तू गंग मैया । कै पार नैया ।

सो शक्ति हारी । लागौ गुहारी ॥ ५ ॥

टी०—हे गंगामैया ! तू मेरी नौका भवसागरके पार कर, अब तो सुभसे तुझतक पुकार करनेकी भी शक्ति नहीं रही । मेरी गुहार लगौ अर्थात् मेरी प्रार्थना सुनी । यह 'तू गंग' अर्थात् एक तगण और दो गुरुका 'हारी' वृत्त है ॥

यशोदा (ज ग ग)

जगोगुपाला । सुभोर काला । कहै यशोदा । लहै प्रमोदा ॥६॥

टी०—प्रातःकाल यशोदाजी 'हे गुपाल जगो २' ऐसा कह २ कर सोदको प्राप्त होती हैं । यह 'जगो गु' अर्थात् एक जगण और दो गुरुका 'यशोदा' वृत्त है । यह वृत्त मैंने प्रस्तारकी रीतिसे नूतन रचकर श्रीमती यशोदाजीकी नामसे परिचित किया है ॥

नायक (सु ल ल)

सुलली चल । यमुनाथल । जहँ गायक । यदुनायक ॥७॥

टी०—कोई सखी श्रीराधिकाजीसे कहती है—हे सुलली ! यमुनातट पर चलो जहां श्रीकृष्ण गान कर रहे हैं । यह 'सुलली' अर्थात् एक सगण और दो लघुका 'नायक' वृत्त है ॥

गायत्री

(षडक्षरावृत्तिः ६४)

तनुमध्या (त य)

तू यों किमि आली । घूमै मतवाली ।

पूछै निसि मध्या । राधा तनु मध्या ॥१॥

टी०—एक गोपिकाको रात्रि समय भ्रमण करतेहुए देखकर सु-

मध्यमा राधिकाजी पूछती हैं हे आली ! तू इस कुसमय में
अर्थात् मध्य रात्रिमें मतवाली सी क्यों घरसे निकलकर
दूधर उधर घूमती है । यह 'तू यीं' अर्थात् तगण यगणका
'तनुमध्या' वृत्त है । तनुमध्यासे यह भी अभिप्राय है कि इसकी
प्रत्येक चरणकी मध्याक्षर (तनु) लघु होते हैं ॥ इसे चौरस
भी कहते हैं ॥

शशिवदना. (न य)

नय धरु एका । न भजु अनेका ।

गहु पन खासो । शशिवदना सो ॥ २ ॥

टी०—किसी एक श्रीकृष्णपदाब्जनिरत भक्तकी उक्ति—चन्द्रमुखी
वृषभानुनन्दिनीकी समान दृढ़प्रतिज्ञ होकर न्यायपूर्वक एक-
का ही भजन कर, अनेकोंका भजन मत कर । “सर्व्वं त्यक्त्वा
भजस्व मामितिभावः” । यह 'नय' अर्थात् नगण यगणका
'शशिवदना' वृत्त है । इसे चौबंसा, चण्डरसा और पादां-
कुलक आदि भी कहते हैं ॥

सोमराजी (य य)

ययू बाल देखो । सुरंगी सुभेखो ।

धरै याहि आजी । कहै सोमराजी ॥ ३ ॥

टी०—सुरंगी और सुडौल (ययू) मेध्याश्रवको जब चन्द्रावली
सदृश दोनों भाइयोंने वनमें भ्रमण करते देखा तब निश्चय
कर लिया कि आज हम इसे पकड़ेंगे । 'यह' ययू अर्थात् दो
यगणका 'सोमराजी' वृत्त है । इसे शंखनारी भी कहते हैं ॥

विमोहा (११)

रार काहे करो । धीर राधे ! धरो ।

देवि ! मोहा तजौ । कंज देहा सजौ ॥ ४ ॥

टी०—कुपित राधिका प्रति एक सखीकी उक्ति—हे राधे ! रार क्यों करती हो ? हे देवि ! (मोह) अज्ञानको छोड़ो और कमल सदृश निज देहको अलंकृत करो । यह 'रार' अर्थात् दो रगणका 'विमोहा' वृत्त है । इसे जोहा, विजोहा, विज्जोदा आदि भी कहते हैं ॥

विद्युल्लेखा (म म)

मैं माटी ना खाई । झूठे ग्वाला माई ।

मू बायो सा देखा । जोती विद्युल्लेखा ॥ ५ ॥

टी०—बालक श्रीकृष्णका वचन श्रीयशोदाजी प्रति—हे माता ! ये खालगण झूठे हैं । मैंने मिट्टी नहीं खाई । ऐसा कहकर माताका संशय दूर करनेकीहेतु निज मुंह खोलकर उसे बताया तब उसमें माताने विद्युत्पटल समान प्रकाश देखा । यह 'मैं सा' अर्थात् दो मगणका 'विद्युल्लेखा' वृत्त है । इसे शिषराज भी कहते हैं ।

मालती (ज ज)

जुदो करि मान । भजौ भगवान ।

प्रभू हिय धार । सुमालतिहार ॥ ६ ॥

टी०—किसी भक्तका उपदेश—मानको त्यागके भगवानका भजन करो और निज प्रेमका परिचय देनेके अर्थ सुन्दर २ मालती

पुष्पींकी माला प्रभुको पहिराओ । यह 'जुदो' अर्थात् दो जगणका 'मालती' वृत्त है ।

सू०—किसी छन्दोग्रन्थरचयिताने 'मालती' की तगण यगण वा जगण यगण घटित भी किया है । परन्तु बहुमतसे इसमें दो जगण ही पाये जाते हैं ॥

तिलका (स स)

ससि बाल खरो । शिव भाल धरो ।

अमरा हरखे । तिलका निरखे ॥ ७ ॥

टी०—शिवजीने यथार्थमें निज भालमें बालचन्द्रको धारण किया है । उनके ऐसे तिलकको देखकर सब देवगण हर्षित हुए । यह 'स सि' दो सगणका 'तिलका' वृत्त है । इसे डिल्ला, तिल्ला, तिल्लना आदि भी कहते हैं ॥

मन्थान (त त)

ताता धरो धीर । मैं देत हौं छीर ।

जानै न नादान । धान्यो जु मन्थान ॥ ८ ॥

टी०—दही विलोवनसमय श्रीकृष्णजीने माताके दुग्धपानकी इच्छा करके मथानीको पकड़ लिया, उस समय श्रीयशोदाजी कहती हैं कि बेटा धीर धरो मैं अभी दूध पिलाती हूँ ऐसा कहकर मनमें कहती हैं कि यह अज्ञान बालक कुछ जानता नहीं है इसने मेरी मथानीको व्यर्थ पकड़ लिया है । यह 'ताता' अर्थात् दो तगणका 'मन्थान' वृत्त है ॥

वसुमती (त स)

तासां परिहरो । जो है हितु खरो ।

शरी जड़मती । धारी वसुमती ॥ ९ ॥

टी०—मन्दोदरीका वचन राक्षसनाथ रावण प्रति—हे जड़मती ! जो सच्चा हितैषी है उससे कलह मतकर । यह वही हितैषी है जिसने जनोंके रक्षणार्थ पृथ्वी धारण की थी । यह 'तासां' अर्थात् तगण सगणका 'वसुमती' वृत्त है ॥

उष्णिक

(सप्ताक्षरावृत्तिः १२८)

कुमारललिता (ज स ग)

जु सोगहिं नसावै । प्रमोद उपजावै ।

अतीव सुकुमारी । कुमारललिता री ॥१॥

टी०—एक सखी दूसरी सखीसे कहती है—री सखी ! जो (सोग) शोकको नष्ट करती है, प्रमोदको उत्पन्न करती है और अतीव सुकुमार है वह कुमारललिता नामकी सखी है । यह 'जु' सोग, अर्थात् जगण सगण और एक गुरुका 'कुमारललिता' वृत्त है ॥

समानिका (र ज ग)

रोज गोपि औ हरी । रास मोदसों करी ।

ग्वाल-ती गँवारिका । धन्य ते समानिका ॥२॥

टी०—नित्यप्रति जिन गोपियोंके साथ श्रीहरी आनन्दपूर्वक रास-

क्रीडा किया करते हैं वे गँवार गूजरी हीनेपर भी धन्य हैं ।
उनके समान अन्य कौन है ? अर्थात् कोई नहीं ॥ यह 'रो
ज गो' अर्थात् रगण जगण और एक गुरुका 'समानिका'
वृत्त है । 'ग्वाल तीग' अर्थात् क्रमसे तीन वार गुरु लघु और
एक गुरुका 'समानिका' वृत्त है ।

मधुमती (न न ग)

न नगधर हरी । विसर नर घरी ।

लहत न मुकती । भजत मधुमती ॥३॥

टी०—है नर ! तू गोवर्द्धनधारी श्रीकृष्णचन्द्रको एक घड़ीभर
धी मत भूल । जो मनुष्य सदा स्त्रियोंको ही भजता है उसे
सुक्ति प्राप्त नहीं होती । यह 'न नग' अर्थात् दो नगण और
एक गुरुका 'मधुमती' वृत्त है ।

लीला (भ त ग)

भाँति गई रावरी । वीर नहीं भूपरी ।

राम सुन्यो चापरी । तोरत लीला करी ॥४॥

टी०—सीतास्वयम्बरान्तर्गत किसी सखीकी उक्ति—आपलोगोंकी
(भाँति) इज्जत गई । पृथ्वी पर कोई वीर नहीं रहा ऐस
जनकजीका वचन सुनतेही री सखी ! रामजीने लीला क-
रते २ चाप तोड़ डाला । यह 'भाँति ग' अर्थात् भगण तगण
और एक गुरुका 'लीला' वृत्त है ।

शिष्या (म म ग)

मा ! मांगों में दाना ना । काहे पूँछौ ग्वाला ना ।
मानों ना तेरी एरे । ग्वाला हँ शिष्यै तेरे ॥५॥

टी०—श्रीकृष्ण और यशोदाकी उक्तिप्रत्युक्ति—हे मा ! मैं दान-
तो मांगता ही नहीं, हे माता ! तू इन ग्वालोंसे ही क्यों नहीं
पूछती ? इतना सुनकर यशोदाजी कहती हैं 'अरे कृष्ण ! मैं
तेरी यह बात नहीं मानती क्योंकि ये तेरे ही तो शिष्य न हैं
अर्थात् ये तेरे ही हितकी कहेंगे' । यह 'मा मांगों' अर्थात् दो
सगण और एक गुरुका 'शिष्या' वृत्त है । इसे शीर्षरूपक भी
कहते हैं ।

सवासन (न ज ल)

न जु लख रामहिं । तजि सब कामहिं ।
कह जन तासन । अपजस वासन ॥६॥

टी०—जो सब कामोंको छोड़के श्रीरामजीको नहीं (देखता)
भजता उसे लोग अपयश (वासन) पात्र कहते हैं । यह 'न
जु ल' अर्थात् नगण जगण और एक लघुका 'सवासन' वृत्त
है । इसे सुवास भी कहते हैं ।

करहंस (न स ल)

निसि लखु गुपाल । ससिहिं मम बाल ।
लखत अरि कंस । नखत कर हंस ॥७॥

टी०—श्रीमती यशोदाजीका वचन बालक श्रीकृष्ण प्रति—हे गो-
पाल ! हे ममबाल ! रात्रि समय चन्द्रको देख ऐसी माताकी
प्रेमगर्भिता वाणी सुनकर कंसारि श्रीकृष्ण नक्षत्रोंके राजा

चन्द्रकी और देखने लगते हैं । यह 'निसि ल' अर्थात् नगण सगण और एक लघु का 'करहंस' वृत्त है । इसी करहन्त भी कहते हैं ॥

मदलेखा (म स ग)

मोसी गोपकिशोरी । पैहौ ना हरि जोरी ।

बोले श्याम सुभेखा । ना तेरो मदलेखा ॥ ८ ॥

टी०—एक रूपगर्विता गोपी और श्रीकृष्णकी उक्तिप्रत्युक्ति—हे हरी ! मेरे समान गोपकन्या तुम अपने योग्य कहीं और कादापि न पावोगे । इसी मुनकर गर्वप्रहारी श्याममुन्दरने कहा कि अरी गोपी ! तेरे (मदलेखा) गर्वका अन्तही नहीं है । यह 'मोसी गो' अर्थात् सगण सगण और एक गुरु का 'मदलेखा' वृत्त है । इसीको द्विगणित अर्थात् इसके दो पद-का एक पद करनेसे 'लोला' संज्ञका वृत्त बनता है ॥

हंसमाला (स र ग)

सुरगौके सहाई । जमुनातीर जाई ।

हरषे री गुपाला । लखिकै हंसमाला ॥९॥

टी०—गौत्राह्वण तथा देवोंके सहायक श्रीगोपालजी जमुनातीर पर जा वहां हंसोंकी श्रेणी देख कर हर्षित हुए । यह 'सुर गौ' अर्थात् सगण रगण और एक गुरुका 'हंसमाला' वृत्त है ।

भक्ती (त य ग)

तू योगहिमें फूलो । भक्ती प्रभुकी भूलो ।

कामा तजु रे कामा । रामा भजुं रे रामा ॥१०॥

टी०—एक भक्तकी उक्ति—अरे तू भक्तिको भूल कर योगहीमें क्यों फूला फिरता है ? सकल विकारोंके मूल कामको तज कर रामको भज । यह 'तू योग' अर्थात् तगण यगण और एक गुरुका 'भक्ति' वृत्त है । प्रस्तारकी रीतिसे यह वृत्त नूतल रचा गया है ॥

अनुष्टुप्

(अष्टाक्षरावृत्तिः २५६)

माणवक्रीडा (भ त ल ग)^१

भूतल गोविप्र सबै । रक्षनको जन्म जबै ।

लीन हरी शैल धरी । माणवक्रीडा जु करी ॥ १ ॥

टी०—श्रीहरीने जब गौब्राह्मणोंके रक्षणार्थ पृथ्वी पर लीला-देह धारण की थी उसी समय (माणवक्रीडा) बाल-लीला करतै २ (शैल) गोवर्द्धनसंज्ञक पर्वतको उठा लिया था । 'जु' पादपूर्वार्थ है। यह 'भ त ल ग' का 'माणवक्रीडा' वृत्त है ॥

प्रमाणिका (ज र ल ग)

जरा लगाय चित्तहीं । भजो जु नन्दनन्दहीं ।

प्रमाणिका हिये गहो । जु पार भौ लगा चहो ॥२॥

टी०—यदि संसारपार होना चाहते हो तो जरा चित्त लगा कर नन्दजीके नन्दनको भजो । इस हमारी उक्तिको प्रमाणिका जान कर हिये गहो अर्थात् निज हृदयपटल पर अंकित कर लो । इस वृत्तमें इस वृत्तकी व्युत्पत्ति भिन्न २ रीतिसे दो बार कही गई है । यथा:—

- (१) 'जरा लगा' अर्थात् जगण रगण और एक लघु गुरुका 'प्रमाणा' वृत्त है ॥
- (२) 'लगा चही' अर्थात् क्रमसे चार वार लघु गुरुका 'प्रमाणा' वृत्त है । इसे प्रमाणा और नगस्वरूपिणी भी कहते हैं ॥
- सू० । इस दूसरे नियमको प्रधान नियम मंत समझो, केवल यही समझो कि इस वृत्तमें इस प्रकारका एक दूसरा क्रम भी आपड़ता है । अन्य स्थानोंमें भी जहां २ इस रीतिसे दो दो व्युत्पत्तियां कही हैं वहां २ उन्हें भी ऐसा ही समझो ॥

लक्ष्मी (र र ग ल)

रार ग्वाला अरू ग्वाल । ठानहीं संग गोपाल ।
जाहि पावै नहीं सन्त । खल सो लक्ष्मीकन्त ॥ ३ ॥

टी०—गोपाल श्रीकृष्णके साथ गोपगोपियां रार करती हैं । देखिये इनके भाग्य कैसे हैं कि जिन्हें महत्प्रयत्न करने पर भी सन्त लोग नहीं पा सकते वही लक्ष्मीकान्त इनके साथ क्रीडा करते हैं । यह 'र र ग ल' का 'लक्ष्मी' वृत्त है ॥

विपुला (भ र ल ल)

भोर लला उठे जव । आइ गये सखा सब ।
देवि ! पुलाकि सूथल । जाँय कहो मधूदल ॥ ४ ॥

टी०—प्रातःकाल श्रीकृष्णके सोके उठते ही सब सखागण आगये और यशोदाजीसे कहते हैं कि हे देवि ! मधुसूदनको हमारे साथ (पुलाकि) वृत्तके नीचे क्रीडार्थ जानेकी आज्ञा दे । यह 'भ र ल ल' का 'विपुला' वृत्त है ॥

गजगती (न भ ल ग)

न भल गोपिकनसों । हसन लाल छलसों ।

कहहिं मातु ! युवती । असत ई गजगती ॥ ५ ॥

टी०—गोपियोंका उलहना सुन कर यशोदाजी श्रीकृष्णसे कहती हैं कि हे लाल ! गोपियोंके साथ छलप्रयुक्त प्रहसन करना अच्छा नहीं है । इसे सुन कर श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे माता ! ये सकल (गजगती) गजगामिनी गोपयुवतियां मिथ्याप्रलाप करती हैं । यह 'न भ ल ग' का 'गजगती' वृत्त है ॥

विद्युन्माला (म म ग ग)

मैं सांगो गोपीसों दाना । भागी बोली नाहीं काना ।

काशी सारी ता ही माला । भासी मोहीं विद्युन्माला ॥६॥

टी०—श्रीकृष्णजीका वचन किसी सखा प्रति—हे सखा ! मैंने एक गोपीसे दान सांगा तव वह बोली 'हे कान्हा ! मैं तुझे दान न दूंगी' ऐसा कह कर वह नीलाम्बरा ज्योंही भागी त्योंही उसके हृदयकी माला सजल मेघोंके मध्य तड़ित् समूहवत् सुभे भासित हुई । यह 'म म ग ग' का 'विद्युन्माला' वृत्त है ॥

मल्लिका (र ज ग ल)

रोज गौ लिये प्रभात । काननै गुपाल जात ।

ग्वाल चारि संग धारि । मल्लिका रचें सुधारि ॥७॥

टी०—रोज २ प्रभात समय गौओंकी लेकर ग्वालोंके साथ श्री-

कृष्ण वनकी जाया करते और वहां सहचारी गोपजन वनकी पुष्पोंकी माला बनाकर श्रीकृष्णको दे आनन्दपूर्वक समय व्यतीत किया करते । इस वृत्तके लक्षण भिन्न रीतिसे दो बार कहे गये हैं । यथा—

- (१) 'र ज ग ल' का 'सल्लिकावृत्त' है ।
 (२) 'श्वाल चारि' अर्थात् क्रमसे चार बार गुरु लघुका 'सल्लिका' वृत्त है । इसे सदनसल्लिका और समानी भी कहते हैं ॥
 तुङ्ग (न न ग ग)

न नग गहु विहारी । कहत अहि-पियारी ।

सुनि जिमि ह्य तुङ्गा । चढ़ झट नरपुङ्गा ॥ ८ ॥

टी०—कालीदहमें कूदने पर नागपत्नीका वचन श्रीकृष्ण प्रति—
 हे विहारी ! तू इस सोतेहुए सर्प अर्थात् मेरे पतिको मत पकड़ । इतना सुनते ही नरश्रेष्ठ श्रीहरी उस पर बड़े घोड़े की समान शीघ्र ही चढ़ बैठे । यह 'न न ग ग' का 'तुङ्ग' वृत्त है । इसे तुरङ्गम, तुङ्गा आदि भी कहते हैं ॥

पद्म (न स न ग)

निसि लग न नैनरी । दिन कछु न चैन री ।

कत्र पहुंचि सद्मरी । लखहुं पदपद्म री ॥९॥

टी०—श्रीजानकीजी अशोक पुष्पवाटिकामें अपनी सखी चिन्तासे कहती हैं—हे सखी ! हरि विन न तो मुझे रात को नींद लगती न दिनमें कुछ चैन पड़ती है । न जानें कव श्रीरघुकुलमणिके भवनमें पहुँच कर उनके चरणारविन्दोंके दर्शन होंगे । यह 'न स ल ग' का 'पद्म' वृत्त है ।

वितान (स भ ग ग)

सुभ गंगा जल तेरो । सुखदाता जनकेरो ।

नसिकै भौ-दुख नाना । जसको तान विताना ॥१०॥

टी०—एक भक्तका वचन—हे गंगा तेरा जल महापवित्र है और भक्तजनोंको आनन्द देनेवाला है और उनकी भवजनित नाना क्लेशोंकी संहार करके संसारमें उनकी यशका मंडप तानता है अर्थात् यशको विस्तृत करता है । यह 'स भ ग ग' अर्थात् सगण भगण और दो गुरुका 'वितान' वृत्त है ॥

सू०—प्रमाणी और समानीकी सम्मेलसे वितानके कई भेद होते हैं उनमेंसे उदाहरणार्थ कुछ नीचे लिखे जाते हैं । यथा-

रूप	नाम	उदाहरण
SS ॥ SS ॥	रामा	रामा भजु रामा भजु ।
SS 1S 1S 1S	नराचिका	तोरी लगै नराचिका ।
SI 1S ॥ SS	चित्रपदा	चित्रपदारथ पैये ।

इनकी लक्षण और उदाहरण अलग भी दिये हैं ॥

रामा (त य ल ल)

तू यों ललचावे मत । होवै मत भौमें रत ।

कामा तजु कामा तजु । रामा भजु रामा भजु ॥११॥

टी०—तू इतना क्यों ललचाता है भवमें रत मत हो व्यर्थ कामों-का त्याग करके रामको भज । यह 'त य ल ल' का 'रामा' वृत्त है । वितानके भेदोंमेंसे यह एक भेद है ॥

नराचिका (त र ल ग)

तोरी लगै नराचिका । मोरी कटै भवाधिका ।

मारीच यों दियो चली । ह्वै कांचनौ मृगा छली ॥१२॥

टी०—मारीचने मनमें कहा, कि हे राम ! तेरा (नराचिका) बाण मुझे लगनेसे मेरे संसारी आधिव्याध्यादि क्लेश नष्ट हो जायगे (यों) ऐसा निश्चय कर वह कपटवेशधारी सुवर्णमृग बना और निशाचरनाथ रावणकी प्रेरणानुकूल प्रस्थित हुआ । 'उभय भ्रांति जान्यसि निज सरना । तव ताक्यसि रघुनायका सरना इति भावः' । यह 'त र ल ग' का 'नराचिका' वृत्त है । यह वितानके भेदोंमेंसे एक भेद है ॥

चित्रपदा (भ भ ग ग)

भू भगगो अघ सारो । जन्म जबै हरि धारो ।

सोइ हरी नित गैये । चित्रपदारथ पैये ॥ १३॥

टी०—जिस हरिके पृथ्वी पर जन्म लेनेसे पृथ्वीतलका सकल पाप नष्ट हो गया । सोई हरि निरन्तर गाने के योग्य है क्योंकि उसके भजनप्रभावसे (चित्र पदारथ) अर्थ चतुष्टय प्राप्त हो सकते हैं । यह 'भ भ ग ग' का 'चित्रपदा' वृत्त है । यह वितानके भेदोंमेंसे एक भेद है ॥

श्लोक ।

ल०—जामें पंचल षड्गुरू, ला सप्तौ सम पादको ।

श्लोक अनुष्टुपै सोई, नेम ना जहँ आनको ॥१४॥

टी०—जिसके चारों पदोंमें पांचवां वर्ण लघु और छठवां वर्ण दी-

वर्ष हो और सप्त पादोंमें सातवां वर्ण भी लघु हो, इनके अतिरिक्त अन्य वर्णोंकेलिये कोई नियम न हो, उसे 'श्लोक' कहते हैं । यथा तुलसीकृतरामायणे—

वर्णानामर्थसंधानां, रसानां छन्दसामपि ।

संगलानां च कर्त्तारौ, वन्दे वाणीविनायकी ॥

वर्ण वृत्तोंमें यह वृत्त अपने ढंगका निराला ही है । इसके चारों पदोंके गुरुलघुओंका क्रम कभी मिलता है कभी नहीं मिलता । वर्णवृत्तोंमें इसकी गणना इस लिये है कि इसमें विशेष नियम आठ अक्षरोंका ही है इससे घट बढ़ नहीं हो सकते । भिखारीदासजी ने इसकी गणना मुक्तकछन्दोंमें की है। वर्णवृत्तोंमें यह प्रतिश्रव है जिसे फ़ारसी में मुस्तन्ना और अङ्ग्रेजीमें Exception कहते हैं -॥

वृहती

(नवाक्षरावृत्तिः ५१२)

सणिसध्य (भ म स)

भास सु पूजा कारज जू । प्रात गर्ई सीता सरजू ।
कण्ठमणी मध्ये सु जला । टूट परी खोजैं अबला ॥१॥

टी.—एक समय श्रीमती सीताजी सहचरियोंके सहवर्त्तमान प्रातःकाल (भास) सूर्य्य नारायणकी पूजाके अर्थ सरयूघाट पर गईं । इष्ट कार्यसे निवृत्त हो घर आनेके समय किसी कारण सीताजीके कण्ठकी मणी निर्मल जलमें टूट के गिर पड़ी । उसे उनके साथकी सहचरीगण खोजती हैं । यह 'भ म स' का 'मणिसध्य' वृत्त है । इसे मणिवन्ध भी कहते हैं ॥

भुजगशिशुमुता (न न म)

न नमहं भुज ! मैं तोको । किमि कट लिख ना मोको ।
ताजि तव पितु ना कोई । भुजगशिशुमुता रोई ॥२॥

टी०—इन्द्रजीतकी काटी हुई भुजाको देख कर सुलोचना कहती है कि हे भुजा ! जबतक तू अपने काट जानेका हाल (सोको) सुझे लिख कर न बतावेगी तबतक मैं तुझे न नमूंगी इतना सुन कर भुजा ने लिखा कि तेरे पिताके अतिरिक्त सुझे काटनेहारा अन्य कोई नहीं है । यह पढ़तेही (भुजगशिशुमुता) नागकी अल्पवयस्क कन्या सुलोचना विलाप करने लगी । यह 'न न म' का 'भुजगशिशुमुता' वृत्त है । इसे युक्ता भी कहते हैं ॥

महालक्ष्मी (र र र)

रात्रिद्योसौ रहै कामिनी । पीवकी जो मनोगामिनी ।
भाषती बोल बेरे अमी । जानिये सो महालक्ष्मी ॥३॥

टी०—जो कामिनी (रात्रिद्योसौ) रात दिन निजपतिकी मनोगामिनी रहती है और सदा अमृतमयी वाणी बोलती है उसे महालक्ष्मी ही जानिये । 'यस्य भार्या शुचिर्दत्ता भर्तार-मनुगामिनी । नित्यं अधुरभाषी च सा रमा न रमा रसेति भावः' यह 'रात्रि' अर्थात् तीन रगण का 'महालक्ष्मी' वृत्त है ॥

हलमुखी (र न स)

रानि ! सीख न धर हरी । बार सौ बरजत अरी ।
होहिंगे हम सब सुखी । जो तजै वह हलमुखी ॥४॥

टी०—किसी कुरूप गीपीकी अकृत्रिम प्रीति देख कर श्रीकृष्ण उससे आदानप्रदान रखते हैं। प्राकृत सखागणोंने भक्तवत्सल श्रीपतीके इस गूढ़ तत्वको न जान कर उक्त गोपीसे स्नेह रखनेके लिये श्रीकृष्णको निषिध किया। जब मधुसूदनने न माना तब श्रीयशोदाजीसे जा कर कहते हैं कि हे रानी! हमने श्रीकृष्णसे सौ बार कहा परन्तु वह हमारी सीख नहीं मानता। यदि वह (हलमुखी) उक्त कुरूप गीपीका साथ छोड़ देगा तो हम सब लोग सुखी होंगे। यह 'र न स' का 'हलमुखी' वृत्त है। इसे हरमुखी भी कहते हैं। इसे भिखारीदासजीने साचिक छन्द माना है ॥

भुजङ्गसंगता (स ज र)

सज री करै अवेर क्यों । चल श्याम वंसि टेर ज्यों ।
तटमें भुजङ्गसंगता । रच रास मोद संगता ॥५॥

टी०—किसी सखीकी उक्ति एक सखी प्रति—री सखी ! विलम्ब क्यों करती है ? देख तो (भुजङ्गसंगता) कालीसंयुता यमुनाके तट पर श्रीकृष्ण आनन्दपूर्वक रास रच रहे हैं। ऐसे समय पर तुझे उचित है कि आभूषित हो कर वंसीकी टेर सुनते ही वहाँ पर उपस्थित होवे और रासव्रीडाकी भागिनी होवे। यह 'स ज र' का 'भुजङ्गसंगता' वृत्त है ॥

भद्रिका (र न र)

रानि ! शोकत हरी गली । नित्य पेखि सिगरी अली ।
सत्य मान यह सात री । भद्रिका न यह बात री ॥६॥

टी०—श्रीकृष्णाका उलहना श्रीयशोदाजी प्रति—हे रानी ! तुम्हारा हरी नित्य प्रति सब सखियोंकी गलीमें देख रोका करता है । हे माता ! मेरे इस कहनेकी सत्य ही मानो कि यह वात (भद्रिका) कल्याणकारिणी नहीं है । यह 'र न र' का 'भद्रिका' वृत्त है ॥

सारंगिक (न य स)

नयसुखदाता भजुरे । मद अरु मोहा तजुरे ।
नहिं हितु सारंगिक सों । नरहरि सीतावरसों ॥७॥

टी०—किसी एक भक्तकी उक्ति—रे ! मदमोहादि सकल हानिजनक विकारोंकी त्याग करके (नयसुखदाता) न्याय-जन्य-सुखके दाता (सारंगिक) शारंगपाणी नर-देहधारी सीतावर रासचन्द्रकी भज क्योंकि उनकी समान एकनिष्ठ भक्तोंकी (हितु) हितैषी अन्य कोई नहीं है । यह 'न य स' का 'सारंगिक' वृत्त है । इसी श्रीयुत भिखारीदासजीने सात्रिक छन्द माना है ॥

पाईता (स भ स)

सो भासै भूठ जगत है । सांचो एकै भगवत है ।
बुद्धी जाकी अस जगती । पाई ताने रुचिर गती ॥८॥

टी०—एक अनुभवी भक्तका वचन—जहां तक मैंने देखा सुभे तो जगत असत्य ही प्रतीत हुआ और सत्य केवल भगवत ही जान पड़ा । ऐसी ही जिसकी बुद्धि निर्मल है अर्थात् ऐसी ही जिसकी प्रतीति है उसीने यथार्थमें (रुचिर) सुन्दर गति पाई है । यह 'स भ स' का 'पाईता' वृत्त है ॥

रतिपद (न न स)

न निसि घर ताजि घरी । कवहुँ जग कुलनरी ।
धरति पद परधरा । सुमति-युत सतिवरा ॥९॥

टी०—इस जगमें जो (कुलनरी) कुलीन स्त्रियां हैं वे कदापि रातको अपना घर छोड़ कर (घरी) घड़ीभरकेलिये भी दूसरेके घर पांव नहीं देतीं । यथार्थमें सुमतिसम्पन्न तथा सति-श्रेष्ठ वेही हैं । यह 'न न स' का 'रतिपद' वृत्त है । इसे कामला भी कहते हैं ॥

विम्ब (न स य)

न सियवर राम जैसे । बहु यदपि भूप वैसे ।
इक इकन वार वारी । कह अधर विम्बवारी ॥१०॥

टी०—मिथिलापुरीकी विम्बाधरोष्ठी स्त्रियां एक दूसरीसे कहती हैं—हे सखी ! यद्यपि यहां एकसे एक बड़े भूप हैं तथापि रियाके योग्य रामजीके अतिरिक्त अन्य वर नहीं ज्ञात होता । यह 'न स य'का 'विम्ब' वृत्त है । इसे विम्बा भी कहते हैं ॥

पंक्ति:

(दशाक्षरावृत्ति: १०२४)

चम्पकमाला (भ स स ग)

भूमि सगी काहूकर नहीं । कृष्ण सगा सांचो जगमाहीं ।
ताहि रिझैये ज्यों ब्रजवाला । डारि गरेमें चम्पकमाला ॥१॥

टी०—यह भूमि किसीकी सगी नहीं है । इस जगमें कृष्ण ही सच्चे हितैषी हैं । ब्रजवालाओंके समान इन्हें चम्पकादि पुष्पों-

की माला पहिरा २ कर प्रसन्न करना चाहिये । यह 'भयसग'
का 'चम्पकमाला' वृत्त है । इसे रूपवती, रुक्मवती आदि
भी कहते हैं ॥

मनोरमा (न र ज ग)

नर जु गोपवेश श्यामहीं । भजत नित्य छांड़ि कामहीं ।
सहित राधिका मनोरमा । लहत मुक्ति पाप हों छमा ॥२॥

टी०—जो लोग कामादि मनोविकारोंको छोड़के राधिका (म-
नोरमा) सुन्दरीके साथ गोपवेश श्यामकी नित्य भजते हैं
उनके पाप क्षमा होके उन्हें मुक्ति मिलती है । यह 'न र ज ग'
का 'मनोरमा' वृत्त है ।

उपस्थिता (त ज ज ग)

तीजी जगपावन कंसको । दै मुक्ति पठावत धामको ।
वाकी लखि रानि उपस्थिता । दै ज्ञान करीं सुखसाजिता ॥३॥

टी०—जब जगपावन श्रीकृष्णने कंसको तृतीय मुक्ति देकर निज
धामको प्रेरित किया तब उसके पंचत्वको प्राप्त होनेपर उ-
सकी रानियोंको शवके निकट उपस्थित देख कर श्रीहरीने
उन्हें ज्ञान प्रदान कर सुखी किया । यह 'त ज ज ग' का 'उ-
पस्थिता' वृत्त है ॥

त्वरितगति (न ज न ग)

निज नग खोजत हरजू । पय सित लक्ष्मिवरजू ।
त्वरित गती हरिहरकी । प्रभु यशते मति टरकी ॥४॥

टी०—कोई विद्वान् किसी दानशीलकी स्तुतिमें कहता है—हे

प्रभु ! आपकी यशसे संपूर्ण विश्व शुभ ही शुभ हीजानिके कारण महादेवजी अपने श्वेत कौलासाचलको खोजते फिरते हैं; वैसे ही विष्णु भी अपने चीर समुद्रकी खोजमें भ्रमण कर रहे हैं; श्रीरोंकी कौन चलावे । आपकी उज्वल कौर्त्तिसे हरिहरकी भी सति भ्रमित होगई है और यही उनकी त्वरितगति अर्थात् शीघ्रगतिका कारण है । यह 'न ज न ग'का त्वरित-गति' वृत्त है । इसे असृतगति भी कहते हैं ।

पणव (म न य ग)

सानौ योग कथित तें मोरा । जीतोगे अरजुनजू कोरा ।
योगेशा कर बचनै मानी । प्रस्थाना पणवहिं दै हानी ॥५॥

टी०—श्रीकृष्णजीका वचन श्रीअर्जुनजी प्रति—हे अर्जुनजी ! आप मेरे कहेहुए योगको स्वीकृत करें, आप (कोरा) कौरवोंको निश्चयपूर्वक जीतेंगे । इस प्रकारकी योगेश्वर श्रीकृष्णकी प्रोत्साहनयुक्त वाणी मान कर अर्जुनजी पणवादि रणवाद्य बजवा कर युद्धकेलिये प्रस्थित हुए । यह 'म न य ग' का 'पणव' वृत्त है ॥

हंसी (म भ न ग)

मैं भीनी गोकुलपति हरी । तोरे नेहा किमि परिहरी ?
साधो ! मोसों बहु विधि खरी । बोली हंसी तव दुख भरी ॥६॥

टी०—ऊधोजी श्रीकृष्णजीसे हंसीसंज्ञक गोपीका सन्देश कथन करते हैं—हे साधव ! मुझसे हंसीने कहा है कि श्रीकृष्णजी से कहना 'हे गोकुलपती ! हे हरी ! मैं (तोरे नेहा भीनी)

तुम्हारे स्त्रीहमें पग गई हूँ, तुमने मुझे क्यों त्याग दिया' । हे साधो ! इस प्रकार आपके वियोगजन्य दुःखसे दुःखी हंसी मुझसे बहुत समय तक निजहारपर खड़े २ वार्तालाप करती रही । यह 'म भ न ग'का 'हंसी' वृत्त है ॥

शुद्धविराट् (म स ज ग)

मैं साजो गिरि पूजनो अली । खायो जाय मुरारि औ हली ।
रोक्यो धाइ दुहून पूतको । देख्यो शुद्ध विराटरूपको ॥७॥

टी०—श्रीयशोदाजी किसी सखीसे कहती हैं— हे अली ! मैंने गोवर्द्धनके पूजनार्थ बहुत पक्वान्न बनाये थे सो कृष्ण बलराम ने जा कर खा लिये । दोनों पुत्रोंको दौड़ कर रोकनेकेलिये जब मैं पाकागारमें गई तब मैंने वहां परमेश्वरके शुद्धविराटरूपको देखा । बालक नहीं देखे इति शेषः । यह 'म स ज ग' का 'शुद्धविराट्' वृत्त है ॥

सारवती (भ भ म ग)

भाभि भगी रँग डारि कहाँ । यों हरि पूछत जाइ तहाँ ।
धाइ धरी वह गोपलली । सारवती फगुवाइ भली ॥८॥

टी०—फाल्गुन मासमें कोई नागरी ब्रजवाला श्रीकृष्णचन्द्र पर केशररंग डाल कर भग गई । उसीके पीछे 'भाभि भगी रँग डारि कहाँ' ऐसा पूछते २ जिस स्थानमें उक्त ब्रजवाला लुकी थी आप भी जा पहुंचे । वहां उस (सारवती) गोपकुमारीको दौड़के पकड़ लिया और भली भांति फगुवाया । यह 'भ भ म ग' का 'सारवती' वृत्त है । इसे ह्वाकली भी कहते हैं ।

संयुत (स ज ज ग)

सजि जोगको शिवकारनै । तप पार्वती किय काननै ।
सति भक्तिसंयुत पाइकै । किय व्याह शंकर आइकै ॥९॥

टी०—जोग साधन करके जब पार्वतीने शिवजीके प्रीत्यर्थ वनमें तपश्चर्या की तब सतीकी भक्तिसंयुत देख कर शिवजीने उनका पाणियहण किया । यह 'स ज ज ग'का 'संयुत' वृत्त है॥

वासा (त य भ ग)

तू यों भग वासातें सरला । टेढ़े धनुतें ज्यों तीर चला ।
ये हैं दुख नानाकी जननी।ऐसी हम गाथातें अकनी॥१०॥

टी०—तू स्त्रियोंसे ऐसा सरल भग कि जैसे वक्र धनुषसे तीर भागता है, क्योंकि पुराणादिकोंसे हम ऐसा (अकनी) सुनते हैं कि ये स्त्रियां नानाप्रकारके दुःखोंकी उत्पन्न करनेहारि हैं । यह 'त य भ ग' का 'वासा' वृत्त है । इसे मुखमा भी कहते हैं

मत्ता (स भ स ग)

मो भासैं गोकुल तिय रामा । ध्यावैं माधो तजि सब कामा ।
मत्ता हूँके हरिरस सानी । धावैं बंसी सुनत सयानी ॥११॥

टी०—मुझे गोकुलकी स्त्रियां ही सुन्दर प्रतीत होती हैं । देखो ये सब कामोंकी छोड़ माधवका ध्यान किया करती हैं । ध्यान करते २ हरिभक्तिरसमें इतनी मग्न होजाती हैं कि ये सुन्दर गोपियां बंसी सुनते ही मत्त हो कर हरि मिलनार्थ उठ भागती हैं । यह 'म भ स ग' का 'मत्ता' वृत्त है ॥

मयूरसारिणी (र ज र ग)

रोज राग अन्यको हि भावै । वातचीत पीव ना सुहावै ।
हे मयूर सारिणी कुत्रामा । त्यागिये न लेहु भूलिनामा ॥१२॥

टी०—जो स्त्री नित्यप्रति अन्यपुरुषके अनुरागमें ही रहती है और जिसे निज पतिको वचन नहीं भाता उसे (मयूरसारिणी) दुष्ट एवं कुत्सिता स्त्री जानिये । ऐसी स्त्रीका त्याग ही करना समुचित है । उसका नाम भूलके भी न लेना चाहिये । यह 'र ज र ग' का 'मयूरसारिणी' वृत्त है ।

कीर्त्ति (स स स ग)

ससिसौंगुनिये मुख राधा । सखि ! सांचहि आवत बाधा
ससि है सकलंक खरो री । अकलंकित कीर्त्तिकिशोरी ॥१३॥

टी०—हे सखी ! यदि राधाके सुखको चन्द्र समान समझिये तो (सांचहिं) यद्यार्थमें सत्यताको भी वृद्धा लगता है । अरी ! यह वात निर्विवाद है कि चन्द्र कलङ्कित है परन्तु (कीर्त्तिकिशोरी) राधिका निष्कलङ्क है । यह 'स स स ग' का 'कीर्त्ति' वृत्त है । यह वृत्त प्रस्तारकी रीतिसे नया रचा गया है ।

दीपकमाला (भ स ज ग)

भामज गोकन्या सखी बरी । देखत ही मोरे धनू दरी ।
मंडपके नीचे अरी अली । दीपकमाला सी लसै लली ॥१४॥

टी०—जब श्रीरामचन्द्रजीने चापकी दो खण्ड कर डाले तब वहांकी सखियां आपसमें कहती हैं अरी । अली ! मण्डपमें दीपावली सट्टण जो (गोकन्या) भूमिसुता श्रीजानकीजी शोभा-

यमान हो रही हैं उन्हें (भामज) सूर्यवंशी श्रीरामचन्द्रजीने व्याह लिया क्योंकि मेरे देखते ही देखते उन्होंने (धनु दरी) धनुषको दला अर्थात् उसकी दो खण्ड कर दिये । यह 'भ म ज ग' का 'दीपकमाला' वृत्त है ॥

कामदा (र य ज ग)

रायजू ! गयो मो लला कहां । रोय यों कहेँ नन्दजू तहां ।
हाय देवकी दीन आपदा । नेन ओटकै मूर्त्ति कामदा ॥ १५ ॥

टी०—मथुरासे नन्दजीकी पलटआनेपर यशोदाजी पूछती हैं—

हे रायजू ! मेरा (लला) कन्हैयालाल कहां है ? तव नन्द-
जी रो कर कहते हैं हाय ! आज हमें देवकीने यह आपदा
दी और हमारी कामनाओंको पूर्ण करनेहारी कृष्णकी मूर्त्ति
को हमसे विलग कर दिया । यह 'र य ज ग' का 'कामदा'
वृत्त है । आदि गुरुके स्थानमें दो लघु रखनेसे 'शुद्धकामदा'
वृत्त होता है ॥

वाला (र र र ग)

रोरि रंगा दियो कौन वाला । मैं न जानौं कहेँ नन्दलाला ।
श्यामकीसात बोलीरिसाई । गोपि कोई करी है ढिठाई ॥ १६ ॥

टी०—श्रीयशोदाजीकी उक्ति श्रीकृष्ण प्रति—हे वाल तुझे रोरीसे
किसने रंग दिया है । इतना सुन कर श्रीकृष्णजी कहते हैं हे
साता ! मैं नहीं जानता, तव यशोदाजी रिसाय कर कहने
लगीं, हो न हो यह ढिठाई निःसंशय किसी गोपीने की है।
यह 'र र र ग' का 'वाला' वृत्त है ॥

चिष्टुप्

(एकदशाक्षरा वृत्तिः २०४८)

सुमुखी (न ज ज ल ग)

निज जल गोपि बचाय गली। इत उत देखत जात चली।
हरिन मिले मन होय दुखी। फिरि फिरि हेरि रही सुमुखी॥१॥

टी०—श्रीकृष्णदर्शनानुरागिणी गोपीका वर्णन—कोई सखी अपना पानो गलीसे बचाके लिये चली जाती है किसीके स्पर्शसे जल भ्रष्ट न होने पावे इस वहानेसे इधर उधर श्रीकृष्णको देखती जाती है । इसी प्रकार वह सुवदना श्रीकृष्णके न दिखनेके कारण मनमें दुःखी होकर फिरर कर देखती रही। यह 'न ज ज ल ग' का 'सुमुखी' वृत्त है ॥

इन्द्रवच्चा (त त ज ग ग)

ताता जशो गोकुलनाथ गावो। भारी सवै पापनको नसावो।
सांची प्रभू काटहिं जन्मवेरी। है इन्द्रवच्चा यह सीख मेरी॥२॥

टी०—असार संसारासक्त पुरुषोंको विरक्तोपदेश—हे तात ! मोहनिद्रामें क्या सो रहे हो जगो और गोकुलनाथ श्रीकृष्णका गुणानुवाद गावो और उसीके द्वारा सकल प्रचण्ड पापोंको नष्ट करो । इस भजनके प्रभावसे प्रभु सत्य ही तुम्हारे (जन्मवेरी) आवागमनके बखड़ेको काट देंगे । हे लोगो ! इस मेरी शिक्षाको इन्द्रवच्चके समान सुदृढ़ जानो । यह 'त त ज ग ग' का 'इन्द्रवच्चा' वृत्त है ॥

उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग)

जुती जर्गी गोकुलनाथ लागी । फिरी निशा खोजति प्रेमपागी ।
कहैं सकीं नाजबदुःख सोसी । उपेन्द्र ! वज्रादपि दारुणोसि ॥३॥

टी०—जो गोपियां श्रीकृष्णकेलिये जगती रहीं और उनके प्रेम-
वश उन्हें रातभर खोजती रहीं वे जब वियोग-जन्य दुःख न
सह सकीं तब कहने लगीं हे (उपेन्द्र) कृष्ण ! तू वज्रसे भी
कठोर है । यह 'ज त ज ग ग' का 'उपेन्द्रवज्रा' वृत्त है ।
दारुणोसिका अन्त 'सि' संस्कृतप्रणालीसे गुरु मानना चा-
हिये । पादान्तस्थं विकल्पेनेति, देखो छन्दःशास्त्रका सूत्र १०
अध्याय १ 'गन्ते' ॥

सू०—विद्यार्थियोंकी जानना चाहिये कि इन्द्रवज्रा और उपेन्द्र-
वज्राके संमेलसे सोलह वृत्त बनते हैं । इनके रूप और नाम
उदाहरण सहित नीचे लिखे जाते हैं । इनसे गुरुकी जगह
इन्द्रवज्रा और लघुकी जगह उपेन्द्रवज्रा समझना चाहिये ।
कीर्त्तिसे लेकर सिद्धि तक इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्राके १४
भेद हैं । इन्हें उपजाति भी कहते हैं ।

प्रस्तार ।

संख्या	रूप	नाम	संख्या	रूप	नाम
१	५५५५	इन्द्रवज्रा	८	५५५१	बाला
२	१५५५	कीर्त्ति	१०	१५५१	आंदा
३	५१५५	वाणी	११	५१५१	भद्रा
४	११५५	माला	१२	११५१	प्रेमा
५	५५१५	शाला	१३	५५११	रामा
६	१५१५	इंसी	१४	१५११	रिद्धि
७	५११५	साया	१५	६१११	सिद्धि
८	१११५	जाया	१६	११११	उपेन्द्रवज्रा

कीर्त्ति । ५५५

मुकुन्द राधा रमणै उचारो । श्रीराम कृष्णा भजिवो सँवारो ॥
गोपाल गोविन्दहिते पसारो । छै है जबै सिक्षु भवै उवारो ॥
सू०—इस पद्यके प्रथम पदके आदिमें लघु और शेष तीन पदोंके
आदिमें गुरु वर्ण हैं ॥

वाणी ५ । ५५

श्रीराम कृष्णा भज तैं अनन्दा । अनेक बाधा पलमें निकन्दा ॥
संसार-सिंधू तर है अमन्दा । होवै कवीं ना यमराजफन्दा ॥
सू०—इसकी दूसरी पंक्तिके आदिका वर्ण लघु है और शेष गुरु हैं ।

माला । ५५

कुटुम्बमाला अति हैं जँजाला । न राख मोहा अस ते उजाला ।
फन्दा परी तो हिय है विशाला । यातें सदा ही भजले गुपाला ॥
सू०—इसके पहिले और दूसरे पदके आदिके वर्ण लघु हैं और
शेष गुरु हैं ॥

शाला ५५ । ५

पीवो करो प्रेमरसै ब्रजशा । गायो करो नाम सदा दिनेशा ॥
गुविन्द गोपाल भलो सुवेशा । ध्यावो करै जाहि नितै सुरेशा ॥
सू०—इसकी तृतीय पंक्तिके आदिका वर्ण लघु है और शेष गुरु हैं ।

हंसी । ५ । ५

मुरारि कंसारि मुकुन्द श्यामै । गायो करै प्रेमहि प्रेम जामै ।
यही उपाये तरहै सकामै । पैरै भली भांति हि दिव्य धामै ॥
सू०—इसके विषम पदोंके आदिमें लघु और सम पदोंके आदि-
में गुरु वर्ण हैं ॥

साया ५ । । ५

राधा रमा गौरि गिरा सु सीता । इके विचारे नित नीत गीता ॥
कटे अपारे अघओघ भीता । ह्वै है सदा मोह भला सुवीता ॥
सू०—इसके दूसरे और तीसरे चरणोंके आदि वर्ण लघु हैं ॥

जाया । । । ५

भजौ भजौ रासहिं राम भाई । वृथा अवै वैस सु जात धाई ।
करौ करौ साधन साधुताई । वाधी उपाधी जगकी जु छाई ॥
सू०—इसके अन्त्य पदके आदिका वर्ण गुरु है ॥

वाला ५ ५ ५ ।

राखी सदा शंभु हिये अखगडा । वाधी सवै शूर तन जु दण्डा ॥
धारो विभूती तन अक्षमगडा । नसैं सवैई अघओघ चण्डा ॥
सू०—इसके अन्त पदके आदिका वर्ण लघु है ॥

आद्रा । ५ ५ ।

करौ कवौं ना गरवै रु कोहा । दोऊ विनासी हनि लोभ मोहा ।
राखी अदंभी मन प्रेमपोहा । हरीहरी भाष करौ सु दोहा ॥
सू०—इसके पहिले और चौथे पदके आदिमें लघु वर्ण हैं ॥

भद्रा ५ । ५ ।

साधो भलो योगनपै वढ़ाओ । खडे रह्यो क्यों न त्वचै पचाओ ॥
टीके सु छापे वहुते लगाओ । वृथा सवै जा हरिको न गाओ ॥
सू०—इसके सम चरणोंके आदिमें लघु और विषम चरणोंके
आदिमें दीर्घ वर्ण हैं ।

प्रेसा । । ५ ।

पुराण गावैं नितही अठारे । श्रुती सवै ही हँसके उचारे ॥
एकै जगज्जोति भले प्रकारे । कहूँ न पावो तिहिको जु पारे ॥
सू०—इसके तृतीय पदके आदिका वर्ण गुरु है ॥

रामा ऽ ऽ । ।

रामै भजौ मित्त सु प्रेमधारी । दैहैं जु तेरे सब दुःख टारी ।
सुनिमं याही जब सत्य धारो । सु धाम अन्ते हरिके सिधारो ॥
सू०—इसके तीसरे और चौथे पदके आदिके वर्ण लघु हैं ॥

रिद्धि । ऽ । ।

गुपाल कान्हा घनशाम वेई । गोविन्द नारायण राम जीई ॥
अनन्त नामै तिनके जगेई । भजैं तिन्हेंते सब ही तरेई ॥
सू०—इसके दूसरे पदका आदिवर्ण गुरु है ॥

सिद्धि वा बुद्धि ऽ । । ।

कुक्षी उवारो गणिका सुंतारी । अजामिलै तार दियो सुरारी ।
कियो जिन्होंने बहू पाप भारी । तरे भवैई शरथै तिहारी ॥
सू०—इसके पहिले पदके आदिका वर्ण गुरु है ॥

जर्दीत चतुर्दश पर्योकी रचना करतै समय विशिष ध्यान
इस बात पर रखना उचित है कि प्रत्येक पद्यके आदिमें तगण
वा जगण रहे ॥

वातोर्मी (म भ त ग ग)

मो भांती गो गहि धीरा धरो जू ।

नीके कौरौ सह युद्धै करो जू ।

पाओगे अर्जुन ! या रीति मुक्ती ।

वातोर्मी सों समझो आत्म युक्ती ॥ ४ ॥

टी०—श्रीकृष्णका वचन अर्जुनप्रति—हैं अर्जुन! मेरे सदृश (गो गहि)
इन्द्रियनिग्रह करके धैर्य धारण कर और कौरवोंके साथ
भली प्रकार संग्राम कर । इसी कर्मके विधानसे तुझे मुक्ति

प्राप्त होगी । यदि हिंसाका विचार करता है तौ युक्तिसे स-
सक्त कि यह आत्मा (वातोर्मी) पवनतरंगके समान है,
अर्थात् अचय है । यह 'म भ त ग ग' का 'वातोर्मी' वृत्त है ॥
रथोद्धता (र न र ल ग)

शान्तिरी लगत रामको पता । हाय ना कहहि नारि आरता ।
धन्य जो लहत भागशुद्धता । धूरि हू अतिशुची रथोद्धता ५
टी०— "धिग जीवन रघुवीर विहीना" ऐसा कहतीहुई आर्त्त-
स्त्रियां दशरथपट्टरानीसे निवेदन करती हैं—हे रानी ! राम
किस मार्गसे चलेगये सो हमें ठीक र खोज नहीं लगा ।
उनके (रथोद्धता) रथकी गतिसे उड़ीहुई पवित्र धूलि ही,
(भागशुद्धता) भाग्यकी भलाईसे जिन लोगोंको मिलती
होगी वे निःसंशय धन्य हैं धन्य हैं । यह 'र न र ल ग' का
'रथोद्धता' वृत्त है ॥

सुभद्रिका (न न र ल ग)

न नर लगन कृष्ण सों लगै ।

कवहुँ न अघ तोहि सों भगै ॥

सुन मम बतियां सु भद्रिका ।

भज हरि बलि औ सुभद्रिका ॥ ६ ॥

टी०—हे नर ! जबतक तू कृष्णको न भजिगा तबतक पापोंसे क-
दापि मुक्त न होगी । पाप तुझे घेरे ही रहेंगे । मेरी कल्याण-
दात्री वातीको श्रद्धापूर्वक सुन और सुभद्रायुत बलिभद्र
भैव्याके साथ श्रीहरिका भजन कर । यह 'न न र ल ग' का

‘सुभद्रिका’ वृत्त है । इस वृत्तका नाम किसी २ आधुनिक छन्दोग्रन्थप्रणेताओंने विगाड़ कर ‘ससुद्रिका’ लिख मारा है ।

शालिनी (स त त ग ग)

माता तू गंगा मुहीं दै सुबुद्धी ।

नासौ सोरी मूलहीतें कुबुद्धी ॥

आठों जाया तोहिं मैं नित्य गाऊं ।

जाते शान्तीशालिनी मुक्ति पाऊं ॥ ७ ॥

टी०—हे माता ! हे गंगा ! तू मेरी कुबुद्धिको समूल नष्ट करके सुश्रे सुबुद्धि दे, कि जिसके प्रभावसे मैं नित्य आठों यास तेरा ही नाम गा कर (शान्तिशालिनी) शान्तिपूरित सुक्तिकी प्राप्त होऊं । यह ‘स त त ग ग’ का ‘शालिनी’ वृत्त है ।

अनुकूला (भ त न ग ग)

भीति न गंगा जग तुव दायी ।

सेवत तोहीं मन वच काया ॥

नासहु वेगी मम भवशूला ।

हौं तुम माता जनअनुकूला ॥ ८ ॥

टी०—हे गंगा ! तुम्हारी सेवा मन वचन और कायासे जो प्राणी करता है उसे इस जगतमें तुम्हारी कृपासे कोई डर नहीं रहता । हे माता ! तुम (जन-अनुकूला) भक्तों पर कृपा करनेहारी हो मेरी भव-बाधाको शीघ्र काट दो । यह ‘भ त न ग ग’ का ‘अनुकूला’ वृत्त है । इसे मौक्तिकमाला भी कहते हैं ॥

दोधक (भ स स ग ग) :

भागुन गो दुहि दे नँदलाल ।
पाणि गहे कहतीं ब्रजबाला ॥
दोध करै सब आरत बानी ।
या मिसि लै घर जायँ सयानी ॥ ९ ॥

टी०—गोपियां श्रीकृष्णका हाथ पकड़ कर कहती हैं कि हे नन्द-लाल ! हमारी गौओंको दुहि दे । देख ! सब (दोध) बछड़े आर्त्तध्वनि कर रहे हैं अर्थात् बँवाय रहे हैं । ऐसा कहकर वार प्रतिदिन चतुर सखियां श्रीकृष्णको गोदोहनके व्याजसे अपने घर लेजाया करतीं । यह 'भागुन' अर्थात् तीन भगण और 'गोदु' अर्थात् दो गुरुका 'दोधक' वृत्त है । इसे बन्धु भी कहते हैं ॥

भ्रमरविलसिता (म भ न ल ग)

मैं भौने लोगन नहिं डरिहों ।
साधोको दै मन नहिं फिरिहों ॥
फूलै बल्ली भ्रमर विलसिता ।
पावै शोभा अलि सह अमिता ॥१०॥

टी०—कोई सखी श्रीकृष्णके अनुरागमें इतनी मग्न हो गई है कि लोगलाजभयहीन हो कर कहती है कि मैं घरके लोगींको न डरूंगी । श्रीसाधवजीको अपना मन देकर उसे पीछे न हटाऊंगी । देखो ! बल्ली भ्रमरके विलासार्थ ही वि-

वासित होती है और भ्रमरसे ही अमित शोभाको प्राप्त होती है । यह 'भ भ न ल ग' का 'भ्रमरविलसिता' वृत्त है ॥

स्वागता (र न भ ग ग)

रानि ! भोगि गहि नाथ कन्हारै ।

साथ गोपजन आवत धाई ॥

स्वागतार्थ सुनि आतुर माता ।

धाइ देखि मुद सुन्दर गाता ॥ ११ ॥

टी०—कालियाको नाथ कर आतेहुए श्रीकृष्णको देख किसी ग्वाल ने जा कर नन्दमहाराजीसे कहा—हे रानी ! (भोगी) सर्प को पकड़ उसे नाथ कर गोपसमूहकी साथ कन्हैयाजी दौड़ते आ रहे हैं । यह दूतमुखागर सुनते ही श्रीमती यशोदाजी स्वागत पूछनेके निमित्त द्वार पर आईं, और श्रीकृष्णके सुन्दर गीतको देख मुदित हुईं । यह 'र न भ ग ग' का 'स्वागता' वृत्त है ॥

विलासिनी (ज र ज ग ग)

जरा जगो गुपालको भजो रे ।

जरा जबै धरै कहां करो रे ॥

लगाइ पञ्च गौहिको हरी पै ।

न चित्त दे कबौ विलासिनी पै ॥१२ ॥

टी०—जनोंप्रति विरक्तोपदेश—सांसारिक पदार्थोंमें आसक्ति यही एक घोर निद्रा है । हे मनुष्यों ! इस निद्रामें सग्न मत होओ । अरे ! जरा जगो और श्रीगोपालको भजन करो क्योंकि जब

(जरा) दृष्टापकाल तुम्हें ग्रसित कारलेवेगा तव तुमसे कुछ न बनपड़ेगा । अतएव यावज्जरा दूर है तावत् कर्मेन्द्रियोंका विषय जो (विलासिनी) सुन्दर स्त्री उसपर चित्त न लगाते हुए पंचज्ञानेन्द्रिय और (हि) अन्तःकरणको प्रभू पै लगाओ अर्थात् पंचज्ञानेन्द्रियोंकी सहायता ले कर अन्तःकरणसे परमे-श्वरका भजन करो । इस वृत्तके लक्षण भिन्न २ रीतिसे दो बार कहे गये हैं यथा—‘ज र ज ग ग’ का ‘विलासिनी’ वृत्त है ‘लगाइ पंचगो’ अर्थात् क्रमसे पांच बार लघु गुरु और अन्तमें एक गुरुका यह ‘विलासिनी’ वृत्त है ॥

सायक (स भ त ल ग)

सुभ तौलों गुन तैं रावन ! रे ।

जवलों सायक रामा न धरे ॥

सुनि यों अंगदकी वाणि शठा ।

कह मैं त्यागहुं ना युद्धहठा ॥ १३ ॥

टी०—अङ्गदका वचन रावण प्रति—रे रावण ! तू तभी लग अ-पनी कुशल जान जब लग श्रीरामचन्द्रजीने हाथमें शरासन और (सायक) बाण नहीं लिये हैं । इस प्रकारकी अंगद-की वाणी सुनकर उस शठने कहा कि मैं युद्धका हठ कदापि न छोड़ूंगा । यह ‘स भ त ल ग’ का ‘सायक’ वृत्त है ॥

हरिणी (जू ज ज ल ग)

जु राम लगा मन नित्य भजैं ।

निकाम रहैं सब काम तजैं ॥

वसै तिनके हियमें सुखदा ।

मनोहरिणी छवि राम सदा ॥ १४ ॥

टी०—जा लाग श्रीरामचन्द्रजीमें मन लगा कर उनका भजन नित्य करते हैं और सकल कामोंका छोड़ निष्काम रहते हैं, उनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीकी (मनोहरिणी) सुन्दर छवि सदा आनन्दपूर्वक वास करती है । यह 'जु राम लगा' अर्थात् तीन जगण और एक लघु गुरुका 'हरिणी' वृत्त है ॥

मोठनक (त ज ज ल ग)

तू जो जल गोपलली भरि कै ।

दीनो हरिको बिनती करि कै ॥

तेरी लखि कै बिरती मनकी ।

एरी भगती मनमो टनकी ॥ १५ ॥

टी०—हे सखी ! जिस समयसे तूने प्याससे पीड़ित श्रीकृष्णजीका जल भर कर बिनयपूर्वक पीनेका दिया उसी समयसे तेरी मनावृत्ति देख कर मेरे मनमें हरिभक्तिका संचार होगया अर्थात् हरिभक्ति समा गई । यह 'त ज ज ल ग' का 'मोठनक' वृत्त है ॥

श्येनिका (र ज र ल ग)

रे जरा लगाव चेत कै नरा ।

इन्द्रि ग्वालगोपिनाथमें खरा ॥

आयके गहै जबै करौ कहा ।

कालश्येनिका प्रचण्ड जो महा ॥ १६ ॥

टी०—भक्तोपदेश—रे जनों ! ग्वाल और गोपियोंकी नाथ जी श्रीकृष्ण उनमें चेत करके पंचेन्द्रियोंकी लगा देा नहीं तो जीव रूपी हंसकी जव काल रूपी श्येनिका (जो एक प्रकारका बाज पक्षी है) जो महाप्रचण्ड है आके ग्रसित करेगी तव तुम क्या कर सकोगे अर्थात् कुछ नहीं । इस वृत्तकी उत्पत्ति भिन्न २ रीतिसे दो बार कही गई है यथा—

- (१) 'र ज र ल ग' का यह 'श्येनिका' वृत्त है ।
 (२) 'इन्द्रि ग्वाल गो' अर्थात् क्रमसे पांच बार गुरु लघु और एक गुरुका 'श्येनिका' वृत्त । इसे श्येनी भी कहते हैं ॥

भुजङ्गी (य य य ल य)

यचौ अन्तमें गान के शङ्करा ।

सतीनाथ सों नानुकम्पाकरा ॥

करेंगे कृपा शीघ्र गङ्गाधरा ।

भुजङ्गी कपाली त्रिशूलधरा ॥ १७ ॥

टी०—पहिले शङ्करजीकी गानद्वारा प्रसन्न करे पश्चात् जो याचना करनी हो सो करो । ऐसा करनेसे सतीनाथ कृपाकर गंगाधर भुजंगभूषण कपाल और त्रिशूलकी धारण करनेहारि महेशजी शीघ्र ही कृपा करेंगे उन सा दयावन्त दूसरा कोई नहीं है । यह 'यचौ अन्तमें गान' अर्थात् चार यगणमेंसे अन्तिस यगणमें गुरु न रखनेसे यह वृत्त सिद्ध होता है । अर्थात् तीन यगण और एक लघु गुरुका यह 'भुजङ्गी' वृत्त है ॥

वृत्ता (न न स ग ग)

ननिसि करन कछु री काजा ।

निकसहु वधु ! तजिके लाजा ॥

यसुमातिसुत अति है मत्ता ।

वरजत अलि कहि यों वृत्ता ॥ १८ ॥

टी०—कोई एक सखीके रात्रि समय भ्रमणार्थ बुलानेपर दूसरी सखी कहती है कि अरी सखी ! मेरी सास मुझसे कहा करती है—हे वधू ! तू रातको निर्लज्ज हो किसी कामकेलिये बाहर मत जाया कर क्योंकि यशोदानन्दन अतीव मत्त हो कर भ्रमण किया करता है । हे अली ! यह वृत्तान्त कह र कर मेरी सास सुभो बाहर जानेकेलिये निषेध किया करती है । यह 'न निसि करन' वा 'ननसकर्ण' अर्थात् नगण, नगण सगण और देा गुरुका 'वृत्ता'वृत्त है ॥ देा गुरुका कर्ण कहते हैं । इस वृत्तको वृत्ता भी कहते हैं ॥

दमनक (न न न ल ग)

न तिन लगत कबहुं घरी ।

भल जु भजन विनाहिं हरी ॥

हृदय जवन भवन करी ।

अघनसघनदमनकरी ॥ १९ ॥

टी०—जिनके हृदयमें (अघनसघनदमनकरी) पाप समूहोंके नाशकर्ता ईश्वरने वास किया है उनको ईश्वर के भजन

बिना एक घड़ीभर भी अस्त्रा नहीं लगता । यह 'न तिन लग'
अर्थात् तीन नगण और एक लघु गुरुका 'दमनक' वृत्त है ॥

जगती

(द्वादशाक्षरावृत्तिः ४०६६)

वंशस्थविलम् (ज त ज र)

जु ती जुरावै निज पीव पावती ।

भली गती पीतम चित्त भावती ॥

प्रथा जु वंशस्थ विलंघि धावती ।

नसाय तीनों कुलकों लजावती ॥ १ ॥

टी०—जा स्त्री स्वपतिको (जुरावै) आनन्द देती है वह निज-
पतिप्रिया हो कर (भली) उत्तम गतिको प्राप्त होती है ।
और जो स्त्री (वंशस्थप्रथा) वंशपरंपरागत चालको उल्लङ्घित
कारके चलती है वह तीनों कुलको लज्जित कराके नष्ट क-
रती है । यह 'ज त ज र' का 'वंशस्थविल' वृत्त है ॥

तीटक (स स स स)

ससिसों सखियाँ बिनती करतीं ।

'टुक मन्द न हो पग तो परतीं ॥

हरिके पदअङ्कनि ढूँढ़न दे ।

छिन तो टुक लाय निहारन दे' ॥ २ ॥

टी०—रासक्रीड़ा करते २ श्रीकृष्णजीसे वंचित होजाने पर उनके
शोधार्थ भ्रमण करतीहुईं' सखियां चन्द्रको मन्द देख वि-

हल ही कर चन्द्रसे विनती करती हैं कि हे चन्द्र ! आज तो जरा मन्द मत हो हम सब तेरे पांव पड़ती हैं । हरिके पदाङ्गोंको टूटने दे । जग भर तो टक लगा कर अर्थात् एक दृष्टिसे उन्हें देखलेने दे । यह 'स स स.स' का 'तोटक' वृत्त है ॥

स्रग्विणी (र र र र)

रार री राधिका श्यामसों क्यों करै ।

सीख मो मानले मान काहे धरै ॥

चित्तमें सुन्दरी क्रोध ना आनिये ।

स्रग्विणी मूर्त्तिको कृष्णकी धारिये ॥ ३ ॥

टी०—एक सखी श्रीमती राधिकाजीसे कहती है—अरी राधिका! श्रीकृष्णसे रार क्यों करती है और व्यर्थ मानको क्यों धारण करती है ? हे सुन्दरी ! निज हृदयमें कुपित न हो कर मेरी शिचाका स्वीकार कर और निज चित्तमें श्रीकृष्णकी (स्रग्विणी) माला पहिरीहुई मूर्त्तिको धारण कर । यह 'र र र र' का 'स्रग्विणी' वृत्त है । इसे लक्ष्मीधर, शृङ्गारिणी, लक्ष्मीधरा और कामिनीमोहन भी कहते हैं ॥

भुजङ्गप्रयात (य य य य)

यचौं मैं प्रभूतें यही हाथ जोरी ।

फिरै आपुतें ना कवौं बुद्धि मोरी ॥

भुजङ्गप्रयातोपमा चित्त जाको ।

जुरै ना कदा भूलि कै सङ्ग ताको ॥ ४ ॥

टी०—मैं सर्वशक्तिमान् परमेश्वरसे हाथ जोड़ कर यही मांगता हूँ कि आपसे मेरी बुद्धि कभी भी न फिरे अर्थात् मैं आपसे कभी भी पराङ्मुख न होऊँ । और जिसका चित्त सर्पकी गतिकी सदृश कुटिल हो उसकी संगति मुझे भूलकी भी प्राप्त न हो । यह 'यचौ' अर्थात् चार यगणका 'भुजङ्गप्रयात' वृत्त है । इसकी डेवढेकी अर्थात् छः यगणवालीको त्रीड़ाचक्र और दुगुनेको 'सहाभुजङ्गप्रयात' कहते हैं ॥

इन्द्रवंशा (त त ज र)

ताता ! जरा देखु विचारि कै मनै ।

को मार को देत सुखै दुखै जनै ॥

संग्राम भारी कर आजु वानसों ।

रे इन्द्रवंशा ! लर कौरवानसों ॥ ५ ॥

टी०—श्रीकृष्ण अर्जुनसे कहते हैं—हे तात ! जरा विचारदृष्टिसे देख कि कौन किसे मारता है और कौन किसको सुख दुःखादि देता है । हे इन्द्रवंश ! हे अर्जुन ! आज तू इन वाणीं द्वारा कौरवोंसे तुमल युद्ध कर । यह 'त त ज र' का 'इन्द्रवंशा' वृत्त है ॥

जलोद्धतिगति (ज स ज स)

जु साजिं सुपली हरीहिं सिरमें ।

धसे जु वसुदेव रैन जलमें ॥

प्रभूचरणको लुआ जमुनमें ।

जलोद्धतिगती हरी छिनकमें ॥ ६ ॥

टी०—जब रात्रिकी वसुदेवजी सुपत्नीमें श्रीकृष्णाजीकी रख यमुना मेंसे नन्दजीके यहां ले चले तब श्रीकृष्णाजीके चरण कूनेकेअर्थ यमुनाजी वहीँ उनके वढ़ते ही वसुदेवजी बूढ़ने लगे उसी समय श्रीकृष्णाजीने यमुनाजीको निजचरणोंका स्पर्श कराके जगमात्रमें (जलोद्धतिगति) उनके जलवृद्धिकी गति हरण कर ली । यह 'ज स ज स' का 'जलोद्धतिगति' वृत्त है ॥

चन्द्रवर्त्म (र न भ स)

रे न भा सिवललाटशशि समा ।

जानि त्यागहु धतूर हियतमा ॥

सिन्धु रैन नलिनी कहु मुहिं रे ।

चन्द्रवर्त्म लख अन्ध कि तुहिं रे ॥७॥

टी०—किसी समय महादेवजीने धतूर पुष्पको उठा कर अपने माथे पर रख लिया । तत्रस्थ उक्त पुष्पको दर्प संयुत देख कर कवि कहता है—रे धतूर ! जो चन्द्र शिवजीके ललाट-पटलपर शोभायमान है उसकी समान तेरी (भा) दीप्ति नहीं है ऐसा समझ के (हियतमा) निजाहङ्कारको तज । रे अंध! भला सत्य तो कह कि रजनी निज मोदार्थ नित्य चन्द्रका मार्ग देखा करती है वा तेरा ? सिन्धु निजवृद्ध्यर्थ चन्द्रका मार्ग देखा करता है वा तेरा ? कुमुदिनी निजविकाशार्थ चन्द्रका मार्ग देखा करती है कि तेरा ? इत्यादि । यह 'र न भ स' का 'चन्द्रवर्त्म' वृत्त है ॥

तामरस (न ज ज य)

निज जयहेतु करौं रघुवीरा ।

तव नुति मोरि हरौ भवपीरा ॥

मम मन-तामरसै प्रभु धामा ।

करहु सदा विभु पूरणकामा ॥ ८ ॥

टी०—हे रघुवीर ! मैं अपने विजयके हेतु आपकी (नुति) स्तुति करता हूँ । (हे विभु) हे निग्रहानुग्रहसमर्थ ! हे पूर्णकाम ! मेरी भव-पीरा हरण करके मेरे (मन-तामरस) मनः कमल में सदा (निजधाम) वास कीजिये । यह 'न ज ज य' का 'तामरस' वृत्त है ॥

वैश्वदेवी (म म य य)

सो माया या है स्त्री खगेश ! अनूपा ।

पै ना सोहै भक्ती जु है नारिरूपा ॥

यातें छाँडौ ज्ञाना नरा ! छिष्ट भारी ।

साधो भक्ती रे वैश्वदेवी सुधारी ॥ ९ ॥

टी०—कागभुशुण्डजीका वचन गरुड़जी प्रति— हे खगेश ! श्री-रासचन्द्रजी कहते हैं कि यह मेरी माया अनुपम स्त्री है । इस स्त्रीरूपिणी मेरी भक्तिके अतिरिक्त इस संसारमें यह सबको मोहती है । अतएव नगरूपी ज्ञानकी प्राप्ति का कठिन मार्ग छोड़ कर (वैश्वदेवी) सर्व देवसम्बन्धिनी मेरी भक्तिकी साधना करनी समुचित है अर्थात् भक्तिका साधन कर । यह 'म म य य' का 'वैश्वदेवी' वृत्त है ॥

प्रमिताचरा (स ज स स)
 साजि सो सुपेय घट मोद भरे ।
 चलि आव शौरि ! सखि सङ्ग धरे ॥
 कहिहौं सुधीर हँसि कै तुमको ।
 प्रमिताक्षरा जु पय दे हमको ॥ १० ॥

टी०—सखियोंके भ्रूणको आते देख एक सखा श्रीकृष्णसे कहता है—हे शौरि ! वह जो सुपेय पयघटको धारण कियेहुए सखियोंके साथ (प्रमिताचरा) बहुत कम बोलतीहुई चली आ रही है सो यदि तुम्हारी वाक्पटुतासे तुमको और हम सबोंको हँस कर अर्थात् विनोदपर भाषण करके दूध देवे तो मैं तुमको (सुधीर) पूरा पण्डित समझूंगा । यह 'स ज स स' का 'प्रमिताचरा' वृत्त है ॥

सू०—कहीं २ इसकी व्युत्पत्तिमें दो नगण एक भगण और एक रगण पाया जाता है ॥

सुन्दरी (न भ भ र)
 नभ भरी विधु भास न आगरी ।
 मुखप्रभा बहु भूषित नागरी ॥
 भज न जो सखि बालमुकुन्दरी ।
 जश न सोहत यद्यपि सुन्दरी ॥ ११ ॥

टी०—किसी सखीकी उक्ति अन्य सखीप्रति—आकाशमें जो चन्द्र की प्रभा फैली है उससे भी अधिकतर जिस स्त्रीके मुखकी प्रभा हो, जो सर्व अलङ्कारोंसे भूषित हो और चतुर भी हो,

परन्तु हे सखी ! यदि वह श्यामसुन्दर वृन्दावनविहारी श्री-
कृष्णचन्द्र आनन्दकान्दका भजन न करती हो तो यद्यपि वह
सुन्दर है तथापि जगमें शोभाको कदापि प्राप्त नहीं होती ।
यह 'न भ भ र' का 'सुन्दरी' वृत्त है । इसीको द्रुतविलम्बित
कहते हैं ॥

मन्दाकिनी (न न र र)

न नर ! रहत सेय मन्दाकिनी ।

अघनिकर जु भेक-भूअङ्गिनी ॥

कृत जहँ सियराम वासा फनी ।

जगत सु महिमा लसै जो घनी ॥ १२ ॥

टी०—हे नर ! पापसमूहरूपी भेकोंकी नाशकर्त्री सर्परूपिणी
मन्दाकिनीकी सेवा करनेसे पाप नहीं रहते । यह मन्दा-
किनी वही है कि जहां सीता और (फनी) लक्ष्मणजीके
साथ श्रीरामचन्द्रजीने वास किया था । संसारमें इनकी (म-
न्दाकिनी) महिमा बहुत है । यह 'न न र र' का 'मन्दा-
किनी' वृत्त है । इसे चंचलाक्षिका भी कहते हैं ॥ वृत्तरत्ना-
कररचयिताके मतसे प्रसुद्धितवदना और मल्लिनाथजीके मत-
से इसीको कोर्ड २ प्रभा भी कहते हैं ॥

कुसुमविचित्रा (न य न य)

नयन ! यही तें तुम बदनामा ।

हरि छवि देखौ किन वसु जामा ॥

अनुज समेता जनकदुलारी ।

कुसुम विचित्राकर फुलवारी ॥ १३ ॥

टी०—रे नयन ! हरिकी उस शोभाको जो अनुज और सीताजी सहित विचित्र कुसुमोंकी फुलवारीमें थी ध्यानदृष्टिसे क्यों नहीं देखा करते ? नहीं देखते हो इसी कारण तुम्हारा नाम 'नयन' अर्थात् न्यायशून्य पड़ा है। यह 'न य न य' का 'कुसुमविचित्रा' वृत्त है ॥

जलधरमाला (म भ स म)

मो भासै मोहन हमको दै योगा ।

ठानो ऊधो उन कुवजा सों भोगा ॥

साँचो ग्वालागनकर नेहा देखी ।

प्रेमाभक्ती जलधरमाला लेखी ॥ १४ ॥

टी०—श्रीकृष्णजीकी भक्तिमें मग्न गोपी ऊधोजीसे कहती हैं—
हे ऊधो ! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मोहन हमको योग देकर आप कुवजासे भोग विलास करते हैं जब सब सखियों ने एक स्वरसे यही बात कही तब उनका सच्चा स्नेह देख कर ऊधोजीकी वे सब (गोपियां) प्रेमा भक्तिरूपी मेघोंकी माला समान ललित हुईं । यह 'म भ स म' का 'जलधरमाला' वृत्त है ॥

मणिमाला (त य त य)

तू यों तय देही जैसे तप आगी

रामा भजु रामा पापासन भागी ॥

छाँड़ो सब जेते हैं रे जगजाला ।

फेरो हरिके नामोंकी मणिमाला ॥ १५ ॥

टी०—तू अपनी देहको यों (तय) तपा कि जैसे आगी तपती है और पापीसे दूर भागकर राम राम भज । अरे ! सब जग जालको छोड़ और हरिके नामोंकी मणिमाला फेरा कर । यह 'त य त य' का 'मणिमाला' वृत्त है ॥

मालती (न ज ज र)

निज जर हाय ! विमूढ़ काटहीं ।

विमुख प्रभू रहि जन्म नासहीं ॥

अधर अमी चख कऊज राजती ।

कहि कहि लागत छन्द मालती ॥ १६ ॥

टी०—हाय !!! विमूढ़जन परमेश्वरका गुणानुवाद करना छोड़ (मालती) स्त्रियोंकी अमृत समान अधर, कमल सदृश (चख) नेत्र शोभा दे रहे हैं इत्यादि वर्णन कर करके उनकी पीछे लगते हैं और अपने सुखकी जड़को काटते हैं अर्थात् नष्ट करते हैं । यह 'न ज ज र' का 'मालती' वृत्त है ॥

मोदक (भ भ भ भ)

भा चहु पार जु भौ-निधि रावन ।

तौ गहु रामपदै आतिपावन ॥

आय घरै प्रभु ले चरनोदक ।

भूख भगै न भखे मनमोदक ॥ १७ ॥

टी०—जब रावणकी सभाके सब योद्धा अङ्गदका पांव तनिक भी न चला सके वरन यकित्त ही हारमान बैठ गये तब रावण स्वयं उठा और ज्योंही अंगदका पांव उठानेको तत्पर हुआ त्योंही अङ्गदने अपना पांव उठा कर कहा—हे रावण ! यह पांव तेरे योग्य नहीं है । यदि पांव ही धरना है और भव-समुद्र पार होना है तो श्रीरामजीके अति पवित्र पदको धर । देख ! तेरे घरमें प्रभु (शाय) आये हुए हैं चल कर चरणोदक ले इत्था गाल दजानेसे अर्थात् अपने मुंह अपनी बड़ाई मारनेसे तेरा कल्याण कभी न होगा । यह 'भा चहु' अर्थात् चार भगणका 'मोदक' वृत्त है ।

मोतियदाम (ज ज ज ज)

जँचौ रघुनाथ धरे धनु हाथ ।

विराजत सानुज जानकि साथ ॥

सदा जिनके सुठि आठहु याम ।

विराजत कण्ठ सु मोतियदाम ॥ १८ ॥

टी०—जिन रघुनाथजीने हाथमें धनुष धारण किया है और जो लक्ष्मण सहित श्रीजानकीजीके साथ शोभायमान हो रहे हैं, जिनके कण्ठमें सदा बाँठीं याम सुन्दर मोतियोंकी माला विराजती है उन्हींसे निजइष्टके सिद्धार्थ याचना करो । 'हार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोरि' इति भावः । यह 'जँचौ' अर्थात् चार जगणका 'मोतियदाम' वृत्त है । इसीके दुगुणको मुक्ताहरा कहते हैं ॥

सारंग (त त त त)

तू तौ तितै कृष्ण ना जाउं मो बाल ।

मैं आनि तोको यहीं देऊँ गोपाल ॥

सारङ्ग नीके हरे लाल जो भाव ।

नीले रु पीले लखो शुभ्र मो शाव ॥ १९ ॥

टी०—विचित्र पक्षियोंको देख कर उनके प्राप्तार्थ रोतेहुए श्रीकृष्ण से श्रीमती यशोदाजी कहती हैं कि हे कृष्ण! हे मेरे बाल! तू वहां मत जा, हे लाल! हे मेरे (शाव) छवना! सुन्दर र लाल, हरे, नीले, पीले, शुभ्र आदि (सारंग) पक्षियोंमेंसे जो तुझे भावें वे सब हे गोपाल! मैं यहीं ला देती हूँ। तू उन्हें यहीं देख। यह 'त त त त' का 'सारंग' वृत्त है इसे मैनावली भी कहते हैं। किसी २ कविने इसीको द्विगुणित वारके आभारवृत्त माना है ॥

तरलनयन (न न न न)

नचतु सुघर सखिन सहित ।

थिरकि थिरकि फिरत मुदित ॥

तरलनयन नवलयुवति ।

सु हरि दरस-अमिय पिवति ॥ २० ॥

टी०—थिरक थिरकके आनन्दपूर्वक सुघर सखियोंके साथ श्री-कृष्ण नाचते फिरते हैं। चंचलाची गोपनवाङ्मना हरिके द-र्शनरूपी अष्टतको निज नेत्रोंके द्वारा पान किया करती हैं।

इस पद्यमें 'सु' पादपूर्णार्थ है । यह 'न चतु' अर्थात् चार नगणका 'तरलनयन' वृत्त है ॥

ललिता (त भ ज र)

तैं भाजि री अलि ! छिपी फिरै कहाँ ।

तू ही बता थल हरी नहीं जहाँ ॥

बोली सुशालि ललिता सुजान ती ।

खेलौं लुकौअल जु हो पदारती ॥ २१ ॥

टी०—कोई सखा कहता है—अरी अली ! अपनेको छिपानेके उद्देशसे तू कहां भगी फिरती है ? भला तू ही बता दे कि ऐसा स्थान कहां है कि जहां हरि नहीं जा सकते । इस प्रकार की उक्ति सुन कर शीलसम्पन्ना ललितानाम्नी सखी बोली कि मैं यह सब भली प्रकार जानती हूं । मैं भगी नहीं फिरती परन्तु हरिके चरणोंमें (रति) प्रीति होनेकेहेतु उनके साथ लुकौअलसंज्ञक खेल खेलती हूं । यह 'त भ ज र' का 'ललिता' वृत्त है ॥

पुट (न न म य)

न न मयदुहिता ! तेरी कुवानी ।

सुनहुँ कहत भागो तू डिरानी ॥

श्रवण-पुट करी ना जान रानी ।

रघुपतिकर याकी मीचु ठानी ॥ २२ ॥

टी०—'श्रीरामचन्द्रजीकी शरण लीजिये' इत्यादि कहतीहुई मन्दी-दरीसे रावणने कहा—हे मयसुता ! मैं तेरी यह कुवाणी

नहीं सुनूंगा नहीं सुनूंगा क्योंकि तू भयसे कातर हो कर
ऐसा कहती है। यों कह कर (भागो) सभाको चला गया।
रावणकी रानीने जाना कि सुवाणीको कुवाणी कह कर डू-
सने (श्रवणपुट) नहीं सुना इस से मुझे ज्ञात होता है
कि श्रीरामचन्द्रजीके हाथसे इसकी (सीचु) मौत ठनी है।
यह 'न न म य' का 'पुट' वृत्त है ॥

प्रियवदा (न भ ज र)

न भज राघव सुजानते नरा ! ।

भजत जाहि विधि शम्भु निर्जरा ॥

सहित मातु सिय जू प्रियवदा ।

जनहिं जो नित अहैं सु शर्मदा ॥ २३ ॥

टी०—हे नर ! सुजान-रघुनाथजीसे (न भज) पलायमान मत
रहो। हे राम-वही है जिन्हें (प्रियवदा) प्रियभाषिणी एवं
भक्तोंका कल्याण करनेहारी सीताजीके साथ सुर ब्रह्मा श-
ङ्करादि भजते अर्थात् पूजते हैं। यह 'न भ ज र' का 'प्रिय-
वदा' वृत्त है ॥

उज्वला (न न भ र)

न नभ रघुवरा कह भूसुरा ।

लसत तरणितेज भनों फुरा ॥

धरणि-तल जबै मिल ना थला ।

गगन भरति कीरति उज्वला ॥ २४ ॥

टी०—कोई ब्राह्मण श्रीरामचन्द्रजीसे कहता है कि हे रघुवर ! मैं

सत्य सत्य कहता हूँ कि यह आकाशमें जो प्रकाश हो रहा है सो सूर्यका प्रकाश नहीं है किन्तु आपकी उज्ज्वल कीर्ति है । वह पृथ्वीतलको व्याप्त कर स्थानसंकोचवशात् आकाशमें जा कर छा रही है । यह 'न न भ र' का 'उज्वला' वृत्त है ।

नवमालिनी (न ज भ य)

निज भय छांड़ि चीन्ह हनु लीजे ।

हरि महिरावणैहिं वलि दीजे ॥

किमि हनु तो प्रवेश इहिं काला ।

प्रभु नवमालिनी सुमनमाला ॥ २५ ॥

टी०—महिरावणकी कुलस्वामिनीके सन्मुख खड़ेहुए रामचन्द्रजीसे हनुमानजी कहते हैं—हे राम ! अपने इस दास हनुमानको पहिचान लक्ष्मभय हो कर शीघ्र ही महिरावणको वलि दीजिये । कठिन प्रसंगमें हनुमानजीकी ऐसी प्रोत्साहनदात्री वाणी सुन कर रामचन्द्रजीने पृच्छा कि हे हनु ! इस कठिन समयमें तेरा प्रवेश यहाँ कैसे हुआ ? इसे सुन कर हनुमानजीने उत्तर दिया हे प्रभु ! जिस समय (नवमालिनी) तरुण मालिन देवीके अर्घ्य पुष्पमाला लाई उसी समय यह दास उक्त मालाके साथ यहाँ पर आ गया । यह 'न ज भ य' का 'नवमालिनी' वृत्त है । इसे नवमालिका भी कहते हैं ।

लखना (भ स स स)

भूमि सिसू धावैं कव री सजनी ।

यों कह कौशल्या हरिकी जननी ॥

भारत ही सोये सुथरे पलना ।
चारिउ भैया री सुथरे ललना ॥ २६ ॥

टी.—श्रीमती कौशल्याजी कहती हैं हे सखी ! वह सुन्दर अवसर काव प्राप्त होगा कि जब पृथ्वी पर इधर उधर मेरे बालक दौड़ने लगेंगे । देखो तो मैंने ज्योंही इन्हें (सुथरे पलना) सुन्दर झूलेमें शयन कराया त्योंही मेरे सुधर बालक चारों भय्या सो गये । यह 'भ म स स' का 'ललना' वृत्त है ॥

धारी (ज ज ज य)

जु काल यहै छवि देखत बीते ।
तुम्हार प्रभू गुण गावत हीते ॥
कृपा करि देहु वहै गिरिधारी ।
यचौं कर जोरि सुभक्ति तुम्हारी ॥ २७ ॥

टी.—हे प्रभु ! जो काल आपकी इस छविके देखने तथा (हीते) अन्तःकरणसे गुण गान करनेमें व्यतीत होता है, हे गिरिधारी ! अनुग्रहपूर्वक वही मुझे दीजियेगा अर्थात् जनोंका मानससन्तापहारिणी आपकी मनोहर छवि मेरे हृदयमें सदा बास किया करे और मैं सदा आपके गुणानुवादमें लगा रहूँ । यही (सुभक्ति) अविरल भक्ति मैं आपसे हाथ जोड़ कर मांगता हूँ । यह 'जुकालय' अर्थात् तीन जगण और एक यगणका 'धारी' वृत्त है ॥

ललित (न न म र)

न निमि रह चखा सीता ज्यों लखा ।
रघुवर सु सखा राख्यो जो मखा ॥

ललित जिन छवी सीताकी लखी ।

अमरतिय कहैं सो धन्या सखी ॥ २८ ॥

टी०—जिन रघुवरने महर्षि विश्वामित्रके मखकी रचा की उन सुन्दर सखाकी सीताने ज्योंही देखा ल्योंही सीताकी (चखा) नेत्रोंमें निमिराजा न रहे अर्थात् रामचन्द्रजीको सीता एक टक देखती रहीं । सीताजीकी उक्त मुहावनी (ललित) कवि की जिन षट्सुलोककी सखियोंने देखा उन्हें देवाङ्गनाओंने धन्य माना । यह 'न न म र' का 'ललित' वृत्त है ॥

गौरी (त ज ज य)

ती जो जय विश्व चहै चिरथाई ।

गौरीपंगरेणु धरै सिर लाई ॥

देहैं द्रुततोषप्रिया सुइ वामा ।

वेगी जय सुन्दरि पूरणकामा ॥ २९ ॥

टी०—जो स्त्री संसारमें (चिरथायी) चिरस्थायी जय चाहती हो वह गौरीजीके चरणोंकी रेणु आदरपूर्वक अपने माथे पर चढ़ावे । भक्तिपरायण (वामा) स्त्रीको सुन्दरी एवं पूर्णकाम (द्रुततोषप्रिया) आशुतोषप्रिया शीघ्र ही जयप्रदान करेंगी । यह 'त ज ज य' का 'गौरी' वृत्त है । यह वृत्त रामचन्द्रिका-में पाया जाता है ।

✓ विद्याधारी (म म म म)

में चारों बंधू गाऊं भक्तीको पाऊं ।

रे लाभै सारे यामें अन्तै ना जाऊं ॥

जानै भेदा याको सत्संगाको धारी ।

वोही सांचो भक्ता सांचो विद्याधारी ॥३०॥

टी०—एक भक्त कहता है—मैं चारों भाइयोंका अर्थात् राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नका गुण गान करके भक्ति प्राप्त करूंगा । रे भाइयो ! इसीमें सब लाभ है । मैं दूसरी जगह कहीं नहीं जाऊंगा । इस पद्यमें 'रे ला भै सा' आदि पदान्तर्गत वर्णों के 'रे' से राम 'लां' से लक्ष्मण 'भै' से भरत और 'सा' से शत्रुघ्न आदिका बोध होता है । पुनः आदि 'रे' से राम और अन्य 'सा' से सीताका बोध होता है । रे और साके मध्यमें 'लाभ' शब्द है इससे यह सूचित होता है कि सीतारामके भजनसे लाभ ही लाभ होता है । इसका भेद वेही जानते हैं जो सत्सङ्गको धारण करते हैं । वेही सच्चे भक्त और विद्वान् हैं । यह 'मैं चारों' अर्थात् चार सगणका विद्याधारी' वृत्त है।

अतिजगती ।

(त्रयोदशाक्षराहृत्तिः ८१६२)

तारक (स स स स ग)

ससि सीस गरे नरमाल पुरारी ।

सुनिये सतिनाथ पुकार हमारी ॥

पढ़ि पिङ्गल छन्द रचैं सब कोई ।

करतार करौ शुभ वासर सोई ॥ १ ॥

टी०—मार्थ पर चन्द्र और गलेमें नरमुण्डमाल धारण किये हुए है पुरारी ! हे सतीनाथ ! हमारी प्रार्थना सुनिये । हे कर्तार!

सब लोग पिङ्गलाचार्यकृत 'छन्दःशास्त्रको पढ़ कर दीर्घदूषण रहित उत्तमोत्तम काव्य बनाने लगे' ऐसा सुन्दर समय ला-
इये । यह 'स स स स ग' का 'तारक' वृत्त है ॥

मञ्जुभाषिणी (स ज स ज ग)

सजि साज गौरि सदनै गई लिये ।

कर पुष्पमाल सिय मांगती हिये ॥

वर देहु राम जनतोषकारिणी ।

सुनि एवमस्तु वद मञ्जुभाषिणी ॥ २ ॥

टी०—सीताजी बहुत प्रकार आभूषित हो हाथमें पुष्पमाला ले-
कर गौरीजीके मन्दिरकी ओर गईं । जाते समय मनमें यही
मांगती जाती थीं कि हे जनतोषकारिणी ! हमको राम ही
वर देव । सीताजीकी ऐसी मानसिक प्रार्थना सुन कर कामला-
लापिनी गिरिजा वाली 'एवमस्तु' अर्थात् तुमको राम ही
वर मिलें । यह 'स ज स ज ग' का 'मञ्जुभाषिणी' वृत्त है ।
इसे प्रवोधिता और मुनन्दिनी भी कहते हैं । इसमें ४ और
पर यति है ॥

माया (म त य स ग)

माता ! या सौंगी नटने का छल कीन्हे ।

रोवै कान्हा मानत नाहीं कछु दीन्हे ॥

कोऊ बोली ता कहँ लै आव सयानी !

माया वाने या पर डारी हम जानी ॥ ३ ॥

टी०—श्रीमहादेवजीके श्रीकृष्णदर्शन कर जाने पर श्रीकृष्णको

रोते देख श्रीमती यशोदाजी किसी एक वृद्धा गोपीसे कहती हैं—हे साता ! नहीं मालूम उस सोंगी नटने इसके साथ क्या छल किया है । देख तो जबसे उसकी दृष्टि इस पर पड़ी है तबसे इस मेरे कन्धैयाने रोना ही साधा है। कुछ भी दिये मानता ही नहीं । इस बातको सुन कोई अन्य सखी बोली है सयानी ! उस सोंगी नटको तुम बुलाओ, हमको जान पड़ता है कि उसने इस पर अपनी मायाका प्रयोग किया है। यह 'म त य स ग' का 'माया' वृत्त है । इसे मत्तमयूर भी कहते हैं ॥

प्रहर्षिणी (म न ज र ग)

मो ना जार गदति गोपि हाथ जोरी ।

तो ज्वाला विरह रखौ जु लाज मोरी ॥

गोपीनाथ ! रचहु रासहीं कन्हाई ।

भावै जो शरदप्रहर्षिणी जुन्हाई ॥ ४ ॥

टी०—रासक्रीड़ासक्त गोपी श्रीकृष्णसे कहती है—हे गोपीनाथ ! मैं हाथ जोड़ कर कहती हूँ कि आप मुझे अपनी विरहरूपी ज्वालामें न जलाइये, मेरी लाजकी रक्षा कीजिये । हे गोपीनाथ ! हे कन्हाई ! वही रास रचिये कि जिससे यह शरत्कालमें आनन्द देनेहारी जुन्हाई मुझको भली भांति भावे । यह 'म न ज र ग' का 'प्रहर्षिणी' वृत्त है ॥

रुचिरा (ज भ स ज ग)

जु भास जोग जुगतसो हूँ ना कदा ।

सु राम भक्तिबस वसैं हिये सदा ॥

सु धन्य जो छवि रुचिरा हृदैं धरें ।
न सो कबौं यहिं भवजालमें परें ॥ ५ ॥

टी०—जिनका भास योग और युक्तिसे भी नहीं होता वे राम केवल भक्तिके वश ही कर हृदयमें सदा बास करते हैं । वे लोग धन्य हैं जो ऐसी सुन्दर छविका ध्यान हृदयमें धरते हैं, वे कभी भवजालमें नहीं पड़ते । यह 'ज भ स ज ग' का 'रुचिरा' वृत्त है । इसे प्रभावती भी कहते हैं ॥

चण्डी (न न स स ग)

न नसु सिगरि नर ! आयु तु अल्पा ।
निसिदिन भजत विलासिनितल्पा ॥
कुबुध-कुजन-अघओघनखण्डी ।
भजहु भजहु जनपालिनि चण्डी ॥ ६ ॥

टी०—हे नर ! तू अहोरात्र सुन्दर स्त्री और (तल्पा) शय्यादिके सेवन करनेमें अपनी अल्पायु सबकी सब नष्ट मत कर । कुपण्डित कुत्सितजन और पाप समूहोंका नाश करके भक्तोंकी रक्षा करनेहारी चण्डीका भजन कर भजन कर । यह 'न न स स ग' का 'चण्डी' वृत्त है ॥

चन्द्रिका (न न त त ग)

न नित तगि कहूं आनको धावरे ।
भजहु हर घरी रामको बावरे ॥
लखन जुत भजौं मातु सीता सती ।
वदनदुति लखे चन्द्रिका लाजती ॥ ७ ॥

टी०—हे वावरे ! तू नित्य उधर उधर (तगि) भटक कर दूसरेका आसरा मत कर, हर घड़ी श्रीरामजीको भज । लक्ष्मण सहित श्रीजानकीजीका भी, जिनके मुखकी द्युति देख चन्द्रिका भी लज्जित होती है, भजन किया कर । यह 'न न त त ग' का 'चन्द्रिका' वृत्त है । इसके ० और ६ पर यति होती है॥

कलहंस (स ज स स ग)

सजि सी सिंगार कलहंसगती सी ।

चलि आइ रामछवि मण्डप दीसी ॥

जयमाल हर्षि जव हीमहँ डारी ।

सुर लोग हर्ष खल-भूप दुखारी ॥ ८ ॥

टी०—सकल भूषणोंसे अलंकृत हो कर सुन्दर हंसके समान चलती हुई (सी) सौताने मण्डपमें आकर रामचन्द्रजीकी शोभा देखी और हर्षित हो कर उनके हृदयमें जयमाल पहिरा दी । इस दृश्यको देख कर देवगण आनन्दको प्राप्त हुए परन्तु रावणादि खलभूप खेदको प्राप्त हुए । यह 'स ज स स ग' का 'कलहंस' वृत्त है । इसे सिंहनाद और नन्दिनी भी कहते हैं ॥

चञ्चरीकावली (य म र र ग)

यमो रे ! रागै छाँड़ौ यहै ईश भावै ।

न भूलौ माधोको विश्वही जो चलावै ॥

लखौ या पृथ्वीको बाटिका चम्पकी ज्यों ।

बसौ रागै त्यागे चञ्चरीकावली ज्यों ॥ ९ ॥

टी०—रे जनों ! यमौ अर्थात् निर्द्वैरता, सत्यालाप, चीरीत्याग, वीर्यरक्षा और विषय भोगादिकोंसे घृणा, इन पांच यमोंका सेवन करो रागका त्याग करो । क्योंकि प्रभुको यही भाता है । जो माधव सकल विश्वको चलाता है उसे मत भूलो । निर्द्वैरतादि पांच यमोंका सेवन और रागादि विकारोंका त्याग करके इस चम्पकवाटिकारूपी पृथ्वी पर (चञ्चरीकावली) भँवरोंकी पाँतीवत् निवास करो । यह 'य म र र ग' का 'चञ्चरीकावली' वृत्त है ।

सू०—चम्पा पर भ्रमर नहीं जाता अर्थात् लुब्ध नहीं होता यह सुप्रसिद्ध ही है ॥

कन्दुक (य य य य ग)

यचौ गाड़कै कृष्णको राधिका साथ ।

भजो पादपाथोज नैके सदा माथा ॥

धरो रूप वाराह धारी मही माथा ।

लियो कन्दुकै काज कालीयहीं नाथा ॥ १० ॥

टी०—हे मनुष्यो ! यदि तुमको याचना करनी हो तो जिन श्रीकृष्णने वाराहदेह धारण करके पृथ्वी अपने माथे पर ली अर्थात् उसकी रक्षा की, और अपने (कन्दुक) गेँदकेलिये काली नाग नाथा उन्हींके पादपाथोजको सदा नमस्कार करो और उन्हींसे निजिष्ठकी याचना करो । यह 'यचौ गाड़कै' अर्थात् चार यगण और एक गुरुका 'कन्दुक' वृत्त है ॥

क्षमा (न न ज त ग)

न निज तिगम सुभाव छाँडै खला ।

यदपि नित उठ पाव ताको फला ॥

तिमि न सुजनसमाज धारै तमा ।

जग जिनकर सु साज नीती छमा ॥ ११ ॥

टी०—जैसे खल अपनी (तिगम) तीक्ष्ण प्रकृतिका योग्य फल वारंवार पाया करता है परन्तु उसे छोड़ता नहीं जैसे ही कोई कितना भी अपराध करे परन्तु सज्जनलोग, जिनका भूषण जगमें नीति और क्षमा ही है, तमोगुणाको धारण नहीं करते अर्थात् क्रोध दिलानेवाले पर कुपित नहीं होते । यह 'न न ज त ग' का 'क्षमा' वृत्त है ॥

कञ्जअवलि (भ न ज ज ल)

भानुज जलमहँ आय परै जब ।

कञ्जअवलि विकसै सरमें तव ॥

त्यौं रघुवर पुर आय गये जब ।

नारि रुनर प्रमुदे लखिके सब ॥ १२ ॥

टी०—जैसे जब प्रातःकाल होता है और (भानुज) सूर्यकी किरणें तड़ागमें आपड़ती हैं तब कमलपंक्तियां विकसित होती हैं अर्थात् आनन्दित होती हैं । जैसे ही श्रीरामचन्द्रजीके अयोध्यापुरीमें आते ही वहाँकी स्त्री पुरुष उनको देख कर आनन्दित हुए । यह 'भ न ज ज ल' का 'कञ्जअवलि' वृत्त है । इसे पङ्कजवाटिका, एकावली और पङ्कअवलि भी कहते हैं ॥

कन्द (य य य य ल)

यचौ लाइकै चित्त आनन्दकन्दाहि ।
 सु भक्ती निजा नाथ दीजे अनाथाहि ॥
 हरे ! राम ! हे राम ! हे राम ! हे राम !
 करौ मोहियेमें सदा आपनो धाम ॥ १३ ॥

टी०—आनन्दकन्द श्रीरामचन्द्रजीसे ध्यान लगा कर यही याचना
 करो कि हे प्रभु ! मुझ अनाथको अपनी (सुभक्ती) जन-पा-
 वनी भक्ति दीजिये और सदा मेरे अन्तःकरणमें अपना (धाम)
 निवासस्थान कीजिये । यह 'यचौ ल' चार यगण और एक
 लघुका 'कन्द' वृत्त है ॥

राग (र ज र ज ग)

रे जरां जगौ न नीद गाढ़ सोउ रे ।
 पाय देह मानुषी न जन्म खोउ रे ॥
 ह्वै अनन्द राग गा सु मुक्ति पाउ रे ।
 राम राम राम राम राम गाउ रे ॥ १४ ॥

टी०—हे भाई ! जरा तो जगो गाढ़ी निद्रामें मत पड़े रहो म-
 नुष्यदेह पा कर जन्म वथा नष्ट मत करो आनन्दपूर्वक ईश्वर-
 का गुणानुवाद उत्तम उत्तम रागोंमें गा कर मुक्ति प्राप्त करो
 और सदा राम राम राम यही गाया करो । यह 'र ज र ज ग'
 का 'राग' वृत्त है । इसको दूसरी व्युत्पत्ति 'नन्द राग गा'
 से प्रगट होती है अर्थात् नन्द = गुरु लघु, राग = ६, तो ६ + ग
 अर्थात् ६ वार गुरु लघु और अन्तमें एक गुरुका 'राग' वृत्त
 है । यह प्रस्तारकी रीतिसे नवीन रचा गया है ॥

राधा (र त म य ग)

रे-तुं माया गोपिनाथा जानि कै भारी ।
भूलि सारी त्यागि कै लै आपको तारी ॥
प्रेमसों तू नित्य प्यारे छांड़िकै रागा ।
कृष्णराधा कृष्णराधा कृष्णराधा गा ॥ १५ ॥

टी०—अरे भाई! तू गोपीनाथ श्रीकृष्णचन्द्रजीकी मायाको महा-
प्रबल जान कर सब भूलोंको त्याग दे और अपने तरनेका
उपाय कर । सब रागोंका परित्याग करके प्रेमसहित नित्य
राधाकृष्ण राधाकृष्ण गाया कर । यह 'र त म य ग' का
'राधा' वृत्त है । यह प्रस्तारकी रीतिसे नूतन रचा गया है ॥
शर्करी ।

(चतुर्दशाक्षरावृत्तिः १६३८४)

वसन्ततिलका (त भ ज ज ग ग)

तैं भोजजोग गुनि कै कहु लाभ हानी ।
यों मुञ्जवात सुनि कै कह दैव ज्ञानी ॥
है है सुदानपर पावहिं विज्ञ मांगे ।
हों सर्व सन्त तिलका लखि मोद पागे ॥१॥

टी०—राजा मुञ्ज और ज्योतिषीके प्रश्नोत्तर—हे दैवज्ञ! तू भोज
के योगोंका विचार करके उसकी भविष्यत् लाभालाभसे मुझे
ज्ञात कर । यह मुन कर दैवज्ञने कहा कि यह बालक अतीव
सुदानशील होगा और इसकी पाससे केवल विज्ञ ही दान
पावेंगे । इसका राज्यतिलक देख कर (सर्व सन्त) सब सज्जन

लोग प्रसुद्धित होंगे । यह 'त भ ज ज ग ग' का वसन्ततिलका' वृत्त है । इसकी अन्य संज्ञायें उद्धर्षिणी, सिंहोन्नता वसन्ततिलका प्रभृति हैं ॥

असम्बाधा (म त न स ग ग)

माता ! नासो गंग ! कठिन भवकी पीरा ।
जातें हूँ निःशंक भवति ! तुम्हरे तीरा ॥
शावों तेरो ही गुण निसदिन बेबाधा ।
पावों जातें वेगि शुभगति असंबाधा ॥ २ ॥

टी०—हे माता ! हे गंगा ! मेरी कठिन सांसारिक पीड़ाओंका नाश करो, जिससे हे भवति ! मैं निःशङ्क हो कर तुम्हारे तीर पर अहोरात्रि तुम्हारा ही गुणगान करके शीघ्र (असम्बाधा) निर्वाधा एवं शुभगतिको प्राप्त होऊँ । यह 'म त न स ग ग' का 'असंबाधा' वृत्त है ॥

अपराजिता (न न र स ल ग)

न निरस लग रामकी जनको कथा ।
सुनत बढ़त प्रेम-सिन्धु शशी यथा ॥
रघुकुल करि पावनो सुख साजिता ।
जिन किय थित कीरती अपराजिता ॥ ३ ॥

टी०—जिन रामचन्द्रजीने रघुकुलको पावन करके अर्थात् उसमें अवतीर्ण हो कर (अपराजिता) अजातजन्त्री कीर्ति इस संसारमें स्थित की उनकी कथा भक्तजनोंको कदापि निरस

नहीं लगती । वे उसे जब २ सुनते हैं तब २ जैसे पूर्ण चन्द्र-
को देख समुद्र बढ़ता है वैसे ही कथा श्रवण करनेसे उनका
स्नेह बढ़ता है । 'राम कथा जी सुनत अघाहीं । रस विञ्जिप
तिन जाना नाहीं' इति भावः । यह 'न न र स ल ग' का
'अपराजिता' वृत्त है ।

प्रहरणकालिका (न न भ न ल ग)

न नभ नल ! गये वचहिं खल असू ।

तहँहुँ धरब रावणहिं विभुजसू ॥

सहि रघुवर जन्म खल दलनको ।

प्रहरण कलि काटन दुख जनको ॥ ४ ॥

टी०—कोई कपि नलसे कहता है—हे नल ! यदि यह खल अ-
र्थात् रावण आकाशमें भी जा कर छिपेगा तोभी इसके (असू)
प्राण न वचेंगे । वहां भी (विभु) निग्रहानुग्रहसमर्थ श्री-
रामचन्द्रजीका यश इस रावणको ग्रसित करेगा क्योंकि पृथ्वी
पर श्री रामजी का जन्म दुष्टोंके दलनार्थ और भक्तोंके (कलि)
पाप एवं दुःखोंके हरणार्थ ही हुआ करता है । 'परिचाणाय
साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि
युगे युगे' इति भावः । यह 'न न भ न ल ग' का 'प्रहरण-
कालिका' वृत्त है । इसे प्रहरणकालिका भी कहते हैं ॥

वासन्ती (स त न म ग ग)

साता ! नौ में गंग ! चरण तोरे त्रैकाला ।

नासौ बेगी दुःख विपुल औरौ जंजाला ॥

जाके तीरा राम पहिर भूर्जाकी छाला ।

भूकन्याको देत सुमन-वासन्ती-माला ॥ ५ ॥

टी०—जिनके तीर पर श्रीमद्रामचन्द्रजीने भूर्जपत्रके वसम धारण करके (भूकन्या) श्रीमती जानकीजीके सहवर्त्तमान आनन्दपूर्वक उन्हें वसन्तकालीन पुष्पोंकी मालादि पहिरा कर कुछ काल व्यतीत किया सोई हे गंगा ! हे माता ! मैं तुम्हारे चरणोंको चिकाल (नी) नमन करता हूँ । तुम मेरे सांसारिक अनैकानैक दुःख एवं अन्यान्य जञ्जालोंको शीघ्र ही नष्ट करो । यह 'म त न म ग ग' का 'वासन्ती' वृत्त है । वृत्तरत्नाकरमें इसकी उत्पत्ति 'म त न य ग ग' कही है ।

सञ्चरी (स ज स य ल ग)

सजि सीय लै गइ सखी जवै मण्डपा ।

सुषमा निहारि शशि आदि लागी त्रपा ॥

सुवितान वाग फव आमकी मंजरी ।

रघुनाथ-नैन मुद जोह ज्यों चञ्चरी ॥ ६ ॥

टी०—कोई एक चतुर सखी जब सीताजीको सकल आभरण पहिरा कर मण्डपमें ले गई तब उनके सुखादि सुअञ्जनोंकी (सुषमा) शोभाको देखकर चन्द्रादि लज्जित हुए । उस समय वितानरूपी सुन्दर बाटिकामें श्रीसीताजी रसालसञ्चरी सदृश (फव) राजती थीं और रघुनाथजीकी नयन-भ्रमर उनके आनन्दपूर्वक (जोह) देख देख कर लुब्ध हो रहे थे ।

यह 'स ज स य ल ग' का 'मञ्जरी' वृत्त है । इसे वसुधा और पद्या भी कहते हैं ॥

कुटिल (स भ न य ग ग)

सुभ नायो गगरिक तुव गङ्गा ! पानी ।
जिन शम्भू सिर जननि ! दयाकी खानी ॥
कपटी कूर कुटिल कुयशीको साथ ।
तजिके पावत शुभगति गावैं गाथा ॥ ७ ॥

टी०—हे गंगा ! हे माता ! हे दयाकी खानि ! तुम्हारा शुभ जल एक गागरि भर भी जो लोग शिवजीके सीस पर चढ़ाते हैं वे कपटी कूर कुयशी आदि पुरुषोंका कुसङ्ग छोड़ कर शुभ गतिको प्राप्त होते हैं । ऐसा पुराणादि सद्ग्रन्थ प्रतिपादित करते हैं । यह 'सं भ न य ग ग' का 'कुटिल' वृत्त है ॥

इन्दुवदना (भ ज स न ग ग)

भौजि ! सुनु गागरि न पैहहु उतारी ।
बन्धु मम नाम जब ताँइ न उचारी ॥
इन्दुवदना वदत जाउँ बलिहारी ।
जान मुहिं दे घरहिं सत्वर विहारी ॥ ८ ॥

टी०—श्रीकृष्णजी और उनको भातजायाकी उक्तिप्रत्युक्ति—हे भौजी ! जब तक तुम हमारे भाईका नाम न लोगी तब तक हम तुम्हारी (गागरि) गगरी न उतारेंगे इतना सुन कर चन्द्र-मुखी भौजाईने कहा हे विहारी ! मैं तुम्हारी बलिहारी जाती

हूँ । मुझे शीघ्र घर जानि दीजिये । यहां पर बलिहारीकी ओ-
खिसे श्रीकृष्णजीकी ज्येष्ठ भ्राता श्रीवलरामजीका नाम लिया
और अपनेको हारी भी मान लिया । यह 'भ ज स न ग ग'
का 'इन्दुवदना' वृत्त है ।

चक्र (भ न न न ल ग)

भौननि न लगत कतहुं ठिकनवां ।
राम विमुख रहि सुख मिल कहँवां ॥
चक्र हरिहिं अरु ऋषि न विसरिये ।
चक्रधरहिं भजि भव-दुख कटिये ॥ ९ ॥

टी०—क्या श्रीमत् सच्चिदानन्द रामचन्द्रजीसे पराङ्मुख रहने-
हारेको कहीं भी सुख प्राप्त होता है ? नहीं २ । चौदह भु-
वनोंमेंसे उसका कहीं भी ठिकाना नहीं लगता । (हरिचक्र
अरु ऋषि) सुदर्शन और दुर्वासा ऋषिके इतिहासको न
भूल कर चक्रपाणि विष्णुका भजन करो और अपने सब सं-
सारी दुःखोंको काटो । यह 'भ न न न ल ग' का 'चक्र' वृत्त
है । इसे चक्रविरति भी कहते हैं ॥

नान्दीमुखी (न न त त ग ग)

नित गहि दुइ पादै गुरुकेर जाई ।
दशरथ सुत चारी लहे मोद पाई ॥
हिय महँ धरिके ध्यान शृङ्गी ऋषीको ।
मुदित मन कियो श्राद्ध नान्दीमुखीको ॥ १० ॥

टी०—श्रीगुरुवर्य वशिष्ठजीके पाद कमलोंको नित्य प्रति जा जा

कर नमन करते २ महाराज दशरथजीने चार पुत्र पाये ।
पुत्रजन्य सुन आनन्दित हुए और हृदयमें शृङ्गीश्रृषिका
ध्यान करके प्रसन्नचित्तसे (नान्दीमुखी) मङ्गलमुखी श्राव
क्रिया । यह 'नित गहि दुइ' अर्थात् दो नगण दो तगण और
दो गुरुका 'नान्दीमुखी' वृत्त है ॥

लोला (म स म भ ग ग)

मा सोमौ भग गौ री काहू ती-मुख देखे ।

सिंहौ री कटि जोहे हस्ती चालहिं पेखे ॥

लोलासी सृदुवैना पूछै वाल नवीना ।

बोली सातु फवैना वाणी नीतिविहीना ॥११॥

टी.—एक लक्ष्मीसमान सुशीला मधुरालापिनी नववाला अ-
पनी मातासे पूछती है कि हे साता ! क्या यह लोकोक्ति सत्य
है कि स्त्रीके मुखकी सुन्दरता देख चन्द्रमा लज्जित ही भा-
गता अथवा छिपता फिरता है वैसे ही स्त्रीकी कटि देख
सिंह और चाल देख कर हाथी छिपते फिरते हैं । यह सुन
कर माता कहती है कि हे बेटी ! यह केवल कहने ही मात्र
को है जो वाणी नीतिविहीन है वह नहीं फवती अर्थात्
नहीं सुहाती । यह 'म स म भ ग ग' का 'लोला' वृत्त है ।
इसके सात सात वर्ण पर यति होती है ॥

हरी (ज र ज र ल ग)

जरा जरा लगाय चित्त मित्त नित्तहीं ।

सियापती भजौ अजौ विचार हित्तहीं ॥

सने लगा सतै न छाँड़ि गा सवै घरी ।
हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी ॥३२॥

टी०—हे मित्र ! अब तौ भी अपना हित विचार पूर्ण चित्तसे थोड़ा २ नित्य ही सियापति रामचन्द्रजीका भजन किया करो मनको सत्यकी ओर लगाओ और सदा हरी हरी हरी यही गाया करो । यह 'ज र ज र ल ग' 'का' हरी वृत्त है । इसीकी दूसरी व्युत्पत्ति 'लगा सतै' से प्रगट होती है अर्थात् सात बार लघु गुरु आनेसे 'हरी' वृत्त सिद्ध होता है । प्रसार की रीतिसे यह वृत्त नया रचा गया है ॥

अतिशङ्करी ।

(पञ्चदशाक्षरावृत्तिः ३२७६८)

शशिकला (न न न न स)

नचहु सुखद यसुमतिसुत सहिता ।
लहहु जनम इह सखि सुख अमिता ॥
वढत चरन रति सु हरि अनुपला ।
जिमि सित पछ नित वढत शशिकला ॥ १ ॥

टी०—एक सखी सखियोंसे कहती है—हे सखियो ! सुखदाता यशोदानन्दनके साथ नृत्य करो और इस जन्मके अमित सुखोंको प्राप्त होओ । जैसे (सितपछनि) शुकपक्षमें चन्द्रकला बढ़ती जाती है वैसीही तुम्हारी (रति) प्रीति हरिके चरणोंमें प्रति पल बढ़ती जाय । यह 'न चहु सु' अर्थात् चार नगण और एक सगणका 'शशिकला' वृत्त है । इसे मणिगुण और शरभ भी

कहते हैं । इस वृत्तकी प्रत्येक चरणमें ६ और ६ पर विराम होनेसे यह 'सक्' कहाता है । वैसेही ८ और ७ पर विरति होनेसे 'मणिशुणनिकर' कहाता है । इसी चन्द्रावर्ता भी कहते हैं ॥

मालिनी (न न म य य)

न नमिय यह धारो पार्थ ! शिक्षा सुधन्या ।
कवहुं तजि हमारी मालिनी मूर्ति अन्या ॥
जिनकर यह नेमा मित्र ! मैं देखि पावों ।
तिनहित सब कामें छाँडि कै शीघ्र धावों ॥ २ ॥

टी०—श्रीकृष्णजी अर्जुनजीसे कहते हैं—हे पार्थ ! तुम हमारी इस सुधन्य शिक्षाको धारण करो कि हमारी (मालिनी) माला पहिरीहुई मूर्तिके अतिरिक्त किसी अन्य मूर्तिको प्रणाम मत करो । हे मित्र ! मैं जिन भक्तोंका यह दृढ़ निश्चय देखता हूँ उनकेलिये अपने सब कामोंको छोड़ कर शीघ्र ही दौड़ता हूँ । यह 'न न म य य' का 'मालिनी' वृत्त है । आठ और सात पर यति हैं ॥

विपिनतिलका (न स न र र)

निसि नर रघूत्तम जु कैकई मन्दिरा ।
गवन किय क्रुद्ध लखि भाषि मीठी गिरा ॥
तु दुइ तजि चार वर मांगि कै लीजिये ।
विपिन तिलका सु कह रामहीं दीजिये ॥ ३ ॥

टी०—रात्रि समय जब नरश्रेष्ठ रघूत्तम दशरथजी कैकेयीके म-

न्दिरकी गये और उसे क्रुद्ध देखा तब अत्यन्त कामल वाणी-
से उसकी खिन्नताका कारण पूछा खिन्नताका कारण वरप्र-
दानकी शिथिलता सुन कर कहा कि तुम देा छिाड चार
वर ली । इतना सुन कर दशरथजीसे शपथ ले कर कैकीयी ने
काहा कि हे राजन् ! रामकी (विपिनतिलका) बनवास
दीजिये । यह 'न स न र र' का 'विपिनतिलका' वृत्त है ॥

चामर (र ज र ज र)

रोज रोज राधिका सखीन संग आइ कै ।

खेल रास कान्ह संग चित्त हर्ष लाइ कै ॥

वांसुरीसमान बोल सप्त ग्वाल गाइ कै ।

कृष्णहीं रिझावहीं सु चामरै डुलाइ कै ॥ ४ ॥

टी०—उधर तो रोज २ राधिकाजी सखियोंके साथ आ कर आनन्द-
चित्तसे श्रीकृष्णचन्द्रके साथ रास खेला करती थीं और उधर
ग्वालगण भी वांसुरीके समान सप्तस्वर गातेहुए श्रीकृष्ण पर
चँवर डुलाके उन्हें रिभाया करते थे । इस वृत्तमें इस वृत्तके
लक्षण भिन्न भिन्न रीतिसे दो बार कहे हैं । यथा—

(१) यह 'रोज रोजरा' अर्थात् रगण जगण रगण जगण
और एक रगणका 'चामर' वृत्त है ॥

(२) 'सप्त ग्वाल गा इकै' अर्थात् क्रमसे गुरु लघु सात बार
और अन्तमें एक गुरुका यह 'चामर' वृत्त है । इसे तूण भी
कहते हैं ॥

चन्द्रलेखा (म र म य य)

मैं री मैया ! यही लैहों चन्द्रलेखा खिलौना ।
रोवै आली ! नहीं मानै मो कही यो सु छौना ॥
धाई कोई सखी लाई शीघ्र ही वारिवारो ।
कुम्भा तामें महो चन्दा औ हँसो नन्दवारो ॥५॥

टी०—श्रीमती यशोदाजी किसी सखीसे कहती हैं—हे आली !
'री मैया ! मैं इस चन्द्रकलाको ही खेलनेकेलिये लूंगा'
ऐसा कह कह कर मेरा (सुखौना) सुन्दर बालक रोता है,
कितना ही समझातीहूँ पर मानता ही नहीं । इस बातको
सुनते ही कोई गोपी शीघ्र ही दीड़ी और (वारिवारो) स-
जलकुम्भ ले आई । उसमें श्रीकृष्णको चन्द्र बताया, कुम्भमें
चन्द्रका प्रतिबिम्ब पकड़के नन्दजीके नन्दन हँसे । यह 'म
र म य य' का 'चन्द्रलेखा' वृत्त है ॥

चित्रा (म म म य य)

मो मो माया याही जानौ याहि छाड़े बिना ना ।
पावै कोऊ प्यारे भौ-सिन्धू कबों पार जाना ॥
है या नारी रूपा मो कौन्तेय ! माया विचित्रा ।
धारै जो भक्तीहीं मोरी मुक्ति पावै सु मित्रा ॥६॥

टी०—श्रीकृष्ण अर्जुनसे कहते हैं—हे प्यारे ! (मो मो) यह मेरा
वह मेरा इत्यादि सब मेरी मायाका पसारा है । इसको
छाड़े बिना कोई कदापि इस भवसागरके पार नहीं ही स-

कता । हे कुन्तीपुत्र ! यह स्त्रीरूपिणी मेरी माया विचित्र है । हे सुमित्र ! जो लोग मेरी भक्तिको हृदयमें धारण करते हैं वेही इस प्रबल सायासे वच कर मुक्तिको प्राप्त होते हैं । यह । 'स म स य य' का 'चित्रा' वृत्त है ॥

निशिपाल (भ ज स न र)

भोज सुनि राघवकवीन्द्रकुलकी नई ।
काव्यरचना विपुल वित्त कविको दर्ई ॥
वार निशि पालत हमें बुध कवी जनै ।
हो नृप चिरायु अखिलेश ! कवि यो भनै ॥ ७ ॥

टी०—राघवसंज्ञक कविश्रेष्ठकी नूतन काव्यरचना सुन कर श्री मङ्गोजराजाने उसको विपुल वित्त दिया । पारितीषक पाकर कवि राजाको आशीर्वाद देता है कि हे अखिलेश ! इस कविकी तुझसे यही प्रार्थना है कि जो हम पण्डित और कविलोगोंकी अहोरात्रि उपहारादि दे कर पालता है वह चिरायु हो । यह 'भ ज स न र' का 'निशिपाल' वृत्त है ॥

मनहंस (स ज ज भ र)

सज जीभ री ! कर जो सु-कीर्त्तन रामको ।
न तु व्यर्थ है मुख में तु टूक हि चामको ॥
जिमि वाग सूमन हंस सोहत मानसो ।
तिमि तू लसै मुखमें हरीगुणगानसो ॥ ८ ॥

टी०—री जीभ ! यदि तू श्रीमद्रामचन्द्रजीका सु-कीर्त्तन करेगी

तो शोभाको प्राप्त होगी नहीं तो चमड़ेके टुकड़ेके समान
तेरा मुखमें पड़े रहना व्यर्थ है । जैसे वाटिका पुष्पों और
मानसरोवर हंसीसे शोभाको प्राप्त होता है वैसे ही तुझमें
हरिगुणगान रहनेसे तू भी मुखमें शोभाको प्राप्त होगी ।
यह 'स ज ज भ र' का 'मनहंस' वृत्त है । इसे मानहंस,
रणहंस और मानसहंस भी कहते हैं ॥

नलिनी (स स स स स)

ससिसों सु सखी रघुनन्दनको वदना ।
लखि के पुलकीं मिथिलापुरकी ललना ॥
तिनके सुखतें दिश फूल रहीं दशहूं ।
पुरमें नलिनी विकसी जनु ओर चहूं ॥ ९ ॥

टी०—जनकपुरीसे चारद्वेद्वे कोई एक स्त्री कहती है—हे सु-सखी!
मिथिलापुरकी स्त्रियां श्रीरघुनन्दनजीका चन्द्रसमान मुख
देख कर पुलकीं अर्थात् आनन्दसे रोमाञ्चितगात्रा हृदं ।
उनके मुखसे दशों दिशा फूल उठीं । मुखसे फूलीहृदं वे पुर-
में ऐसी भासती थीं कि मानो पुरमें चारों ओर (नलिनी)
कुमुदिनियां चन्द्रको देख विकसित हुई हैं । यह 'स स स स
स' का 'नलिनी' वृत्त है । इसे भमरावली, ती, और मन-
हरण भी कहते हैं ॥

प्रभद्रिका (न ज भ ज र)

निज भुज राघवेन्द्र दश सीस ढाइहैं ।
करि सुर-काज आपु सह औध जाइहैं ॥

सुनि हनुवैन सीय लखि राममुद्रिका ।

सुदित अशीस दीन तुरतै प्रभद्रिका ॥१०॥

टी०—हनुमानजी श्रीमती सीताजीसे कहते हैं—हे माता ! रा-
घवेन्द्र श्रीरामचन्द्रजी अपने हाथीसे (रावणकी) दशों सीस
पतित करेंगे । इस प्रकार देवीका कार्य्य साध करके आपकी
साथ पावनपुरी अयोध्याजीको गमन करेंगे । श्रीमती सीता-
जी इस प्रकारके हनुमद्वचन सुनके और श्रीमान् रामचन्द्र-
जीकी मुद्रिका पहिचान कर प्रसुदित हुईं और (तुरतै)
श्रीमन्न ही हनुमानको (प्रभद्रिका) कल्याणदात्री असीस दी।
यह 'न ज म ज र' का 'प्रभद्रिका' वृत्त है । कहीं २ इसकी
संज्ञा प्रभद्रक और सुखिलक भी पाई जाती है ॥

सीता (र त म य र)

रे तू माया रञ्चहू जानी न सीतारामकी ।

हाय क्यों भूलो फिरै ना सीख मेरी कान की ॥

जन्म बीता जात मीता अन्त रीता बावरे !

राम सीता राम सीता राम सीता गाव रे ॥११॥

टी०—रे ! तूने सीतारामकी माया रञ्चभर भी न जानी । हाय!!!
तू भूला भूला क्यों फिरता है ? मेरी शिक्षा तूने तनिक भी
न सुनी । हे बावरे सीत ! सब जन्म बीता जाता है, अन्तमें
रीता ही जाना पड़ेगा। अतएव अब तू भी सीताराम सीता-
राम गाया कर । यह 'र त म य र' का 'सीता' वृत्त है ।
यह वृत्त प्रस्तारकी रीतिसे मूतन रचा गया है ॥

मोहनि (स भ त य स)

सुभतो ये सखिरी ! आदिहं जो चित्त धरी ।

नर औ नारि पढ़ें भारतके एक घरी ॥

शुद्ध भाषा ब्रजकी वीर बड़ी सोहनि है ।

सांचहू नागरि है आगरि है मोहनि है ॥ १२ ॥

टी०—एक स्त्री दूसरीसे कहती है—री सखी ! इस देश अर्थात् भारतका कल्याण तभी होगा कि जब एक घड़ी भर भी भारतके स्त्री पुरुष चित्त लगा कर ब्रजकी शुद्ध भाषाको पहिचिहीसे पढ़ेंगे । यह भाषा नागरीके नामसे परिचित है, और यथार्थमें सुन्दर सब गुणआगरी और मनको मोहित करनेहारी है । यह 'स भ त य स' का 'मोहनि' वृत्त है ॥

सू०—'री आदिहंसे' यह अभिप्राय है कि इस वृत्तके आदिमें र-गण भी होता है । यहां पर इस वृत्तके दो पद सगण और दो पद रगणसे आरम्भ किये गये हैं । परन्तु विद्यार्थीको उचित है कि जब वह इस वृत्तकी रचना करे तो चारों पदके आदिमें सगण वा रगणका ही प्रयोग करे ।

भाम (भ म स स स)

भाम ससी सोहैं नभमें सुख सों जवलों ।

वैदिक सांचो धर्म रहै जगमें तबलों ॥

लोक सुखी व्है कै दिन रात भजैं तुमहीं ।

मांगत तोसो दान यही प्रभु दे हमहीं ॥१३॥

टी०—(भाम) सूर्य और चन्द्रमा आकाशमें जब तक सुख रूप विराजमान हैं तब तक इस जगमें सत्य वैदिक धर्म-का प्रचार रहै । सब लोग सुखी हो कर अहोनिशि तेरा भ-जन करें । हे प्रभु ! यही दान तुझसे मांगता हूं सो कृपा करके दे । यह 'भ स स स स' का 'भाम' वृत्त है । प्रसारकी रीतिसे यह वृत्त नवीन रचा गया है ॥

अथाष्टिः ।

(षोडशाक्षरावृत्तिः ६५५३६)

चञ्चला (र ज र ज र ल)

री जरा जुरो लखो कहां गयो हमें विहाय ।
कुंजधीच योहिं तीय ग्वाल वांसुरी बजाय ॥
देखि गोपिका कहें परी जु टूटि पुष्पमाल ।
चञ्चला सखी गई लिवाय आजु नन्दलाल ॥ १ ॥

टी०—श्रीकृष्णसे वंचित सखियोंकी परस्परोक्ति—री सखियो ! जरा एकत्रित हो कर देखो तो, कि श्रीकृष्ण हम गोपियोंको वांसुरी बजा मोहित कर कुञ्जीमें छोड़ कहां चले गये । ऐसा कह २ कर खोज करने लगीं । खोज करते २ मार्गमें पड़ी हुई पुष्पोंकी टूटी माला पा कर गोपियाँ आपसमें कहने लगीं 'री सखियो ! इस मालाके देखनेसे हमें विदित होता है कि आज कोई चञ्चला सखी श्रीनन्दलालजीको लिवा ले गई है ।' इस वृत्तमें इस वृत्तके लक्षण भिन्न २ रीतिसे दो बार कहे गये हैं । यथा—

(१) यह 'र ज र ज र ल' का 'चञ्चला' वृत्त है ॥

(२) 'ग्वाल वासु' अर्थात् क्रमसे आठ वार गुरु लघुका 'च-
ञ्चला' वृत्त है । इसे चित्र भी कहते हैं ॥

चकिता (भ स म त न ग)

भो सुमति ! न गोविन्दाहीं जानो निपट नरा ।
देखत जिन गोपीग्वालाके जो गिरिहिं धरा ॥
जोहत चकिता गोपीग्वाला पाणि डिगत सो ।
कीन्ह निडर ऐसे स्वामीको धन्य भजत सो ॥२॥

टी०—भो सुमति ! गोविन्दको निपट मनुष्य ही मत जानो । ये
वेही गोविन्द हैं जिन्होंने गोप गोपियोंके सन्मुख (गिरिहिंधरा)
गोवर्द्धन पर्वत उठा लिया और उन सबोंकी रक्षा की, उस
पर्वतके भारसे इनके हलतेहुए हाथको देख जो गोपी गोप
चकित हुए थे उन्हें इन्होंने निर्भय किया । ऐसे स्वामीको
जो लोग भजते हैं सो धन्य हैं । यह 'भ स म त न ग' का
'चकिता' वृत्त है ॥

पंचचामर (ज र ज र ज ग)

जु रोज रोज गोपतीय कृष्ण संग धावतीं ।
सु गीत नाथपांवसों लगाय चित्त गावतीं ॥
कबों खवाय दूध औ दही हरी रिझावतीं ।
सु धन्य छांड़ि लाज पञ्च चामरें डुलावतीं ॥३॥

टी०—नित्यप्रति जो गोपियां बंसोकी टेर सुन दौड़ कर श्रीकृष्ण

के पास जाया करती हैं, और उनके चरणोंमें चित्त लगाकर (गीत) उनका गुणानुवाद गाया करती हैं, इसी प्रकार कभी २ दूध दही आदि खिला कर उनको रिभाया करती हैं और कभी २ प्रेमातिशयात् पंचोंकी लाज छोड़ कर उन पर चमर डुलाया करती हैं वे अति धन्य हैं । इस वृत्तमें इस वृत्तकी व्युत्पत्ति भिन्न २ रीतिसे दो बार कही गई है । यथा,

(१) यह 'ज र ज र ज ग' का 'पंचचामर' वृत्त है ॥

(२) यह 'वसो लगा' अर्थात् क्रमसे आठ लघु गुरुका 'पञ्चचामर' वृत्त है । इसे नराच और नागराज भी कहते हैं ॥

मदनललिता (म भ न म न ग)

कैं भैं नेमी नगपति महादेवा शरणकी ।

सांग्यो जी-दान निज पति हूँ दासी चरणकी ॥

बोले येरी मदन-ललिता ! खासी पतिरता ।

पैहैं श्रीकृष्णकर सुवनै प्रद्युम्न भरता ॥४॥

टी०—रतिवचन—मैंने कैलाशपति महादेवजीके चरणोंकी शरण लेनेका नैस धारण किया और उनके चरणोंकी दासी हो कर निज प्राणवल्लभके पुनः प्राप्त होनेकी प्रार्थना की । मेरी प्रार्थना सुन कर शिवजी बोले, री मदनललिता ! तू बड़ी पतिव्रता है । तेरे पातिव्रत्यको देख कर मैं वर देता हूँ कि तेरा पति श्रीकृष्णजीका पुत्र प्रद्युम्न नामसे परिचित हो कर तुझे प्राप्त होगा । यह 'म भ न म न ग' का 'मदनललिता' वृत्त है

वाणिनी (न ज भ ज र ग)

न जु भज रागसों लखन युक्त राम सीता ।
जन हित कीन्ह मानव-चरित्र जो पुनीता ॥
तिहिंकर सोह ना भणित कैसेहूं जु नीकी ।
हरि बिन वाणि नीति-रहिता लगै जु फीकी ॥५॥

टी०—जिन्होंने भक्तोंके अर्थ पवित्र मानवचरित्र किये हैं ऐसे श्रीराम लक्ष्मण सीताको जो प्रीतिपूर्वक नहीं भजता, उसकी (भणित) कविता कितनी ही सुन्दर हो तो भी हरि-विमुखताके कारण नहीं शोभती, हरिचर्चा बिना वाणी नीति-रहित एवं फीकी लगती है । यह 'न ज भ ज र ग' का 'वाणिनी' वृत्त है ॥

प्रवरललिता (य म न स र ग)

यमी नासै रागादिक सकल जञ्जाल भाई ।
यहीतें घेरै ना प्रवरललिता ताहि जाई ॥
अहो भोरे सीता ! यदि चहहु संसार जीता ।
तजौ सारे रागा भजहु भवहा रामसीता ॥६॥

टी०—रे भाई ! यमी अर्थात् निर्वैरता सत्य प्रलापादि पांच संयमोंका करनेवाला सम्पूर्ण वस्तुओंके अनुरागको नष्ट कर देता है इसी कारण (प्रवरललिता) अति सुन्दर स्त्री उसे (जाइ घेरै ना) अपने वश नहीं कर सकती । अहो मेरे मित्रगण ! यदि तुम संसार पार होना चाहते हो तो सब

रागींकी छोड़ी, और भवहा अर्थात् जन्ममृत्युकी नाश करने-
वाले श्रीसीतारामको भजी । यह 'य म न सर ग' का 'प्र-
वरललिता' वृत्त है ॥

अचलधृति (न न न न न ल)

न शिवमुख लखि डरहिं हिम गिरिपुर ।

नर अरु युवाति जिहिं अचल धृति फुर ॥

लखि भव भयद छवि पुरवटु कहत ।

सु धन वर लखि जिन वपु जिउ रहत ॥७॥

टी०—गिरिपुर अर्थात् हिमाचलपुरकी स्त्री पुरुष जिन्हें सच्चा एवं
स्थिर धैर्य्य है वे शिवका मुख देख कर भयभीत नहीं होते ।
परन्तु (भव) शिवकी भयङ्कर शोभाको देख पुरवालक क-
हते हैं कि वरको देख कर जिनके शरीरमें प्राण रहेंगे वे धन्य
हैं । यह 'न शिवमुख ल' अर्थात् पांच नगण और एक लघुका
'अचलधृति' वृत्त है । इसे गीत्यार्थ्या भी कहते हैं, इसी की
दृगुनेको डमरू कहते हैं ॥

गरुडरुत (न ज भ ज त ग)

न जु भज तैं गुपाल निशि वासरा रे मना ।

लहसि न सौख्य भूलि कहुं यत्न कीन्हे घना ॥

हरि हरिके कहे भजत पापको जूह यों ।

गरुड-रुतै सुने भजत सर्प को व्यूह ज्यों ॥८॥

टी०—रे मन ! यदि तू अहोरात्रि गोपाल श्रीकृष्णका भजन न
करेगा तो अनेकानेक यत्न करने पर भूलकी भी कहीं सुख न

वाणिनी (न ज भ ज र ग)

न जु भज रागसों लखन युक्त राम सीता ।
जन हित कीन्ह मानव-चरित्र जो पुनीता ॥
तिहिकर सोह ना भणित कैसेहूं जु नीकी ।
हरि बिन वाणि नीति-रहिता लगै जु फीकी ॥५॥

टी०—जिन्होंने भक्तोंके अर्थ पवित्र मानवचरित्र किये हैं ऐसे श्रीराम खल्लण सीताको जो प्रीतिपूर्वक नहीं भजता, उसकी (भणित) कविता कितनी ही सुन्दर हो तो भी हरि-विमुखताके कारण नहीं शोभती, हरिचर्चा विना वाणी नीति-रहित एवं फीकी लगती है । यह 'न ज भ ज र ग' का 'वाणिनी' वृत्त है ॥

प्रवरललिता (य म न स र ग)

यसी नासै रागादिक सकल जञ्जाल भाई ।
यहीते घेरै ना प्रवरललिता ताहि जाई ॥
अहो सोरे सीता ! यदि चहहु संसार जीता ।
तजौ सारे रागा भजहु भवहा रामसीता ॥६॥

टी०—रे भाई ! यसी अर्थात् निर्वैरता सब प्रलापादि पांच सं-यसोंका करनेवाला सम्पूर्ण वस्तुओंके अनुरागको नष्ट कर देता है इसी कारण (प्रवरललिता) अति सुन्दर स्त्री उसे (जाइ घेरै ना) अपने वश नहीं कर सकती । अहो मेरे मित्रगण ! यदि तुम संसार पार होना चाहते हो तो सब

रागीकी छोड़ो, और भवहा अर्थात् जन्ममृत्युके नाश करने-
वाली श्रीसीतारामकी भजो । यह 'य म न स र ग' का 'प्र-
वरललिता' वृत्त है ॥

अचलधृति (न न न न न ल)

न शिवमुख लखि डरहिं हिम गिरिपुर ।
नर अरु युवति जिहिं अचल धृति फुर ॥
लखि भव भयद छवि पुरवटु कहत ।
सु धन वर लखि जिन वपु जिउ रहत ॥७॥

टी०—गिरिपुर अर्थात् हिमाचलपुरके स्त्री पुरुष जिन्हें सच्चा एवं
स्थिर धैर्य्य है वे शिवका मुख देख कर भयभीत नहीं होते ।
परन्तु (भव) शिवकी भयङ्कर शोभाको देख पुरवालक क-
हते हैं कि वरको देख कर जिनके शरीरमें प्राण रहेंगे वे धन्य
हैं । यह 'न शिवमुख ल' अर्थात् पांच नगण और एक लघुका
'अचलधृति' वृत्त है । इसे गीत्यार्या भी कहते हैं, इसी के
दुगुनेको डमरू कहते हैं ॥

गरुडरुत (न ज भ ज त ग)

न जु भज तैं गुपाल निशि वासरा रे मना ।
लहसि न सौर्य्य भूलि कहुं यत्न कीन्है घना ॥
हरि हरिके कहे भजत पापको जूह यों ।
गरुडरुतै सुने भजत सर्प को ब्यूह ज्यों ॥८॥

टी०—रे मन ! यदि तू अहोरात्रि गोपाल श्रीकृष्णका भजन न
करेगा तो अनेकानेक यत्न करने पर भूलके भी कहीं सुख न

पावेगा । जैसे (गरुड़रुतै) गरुड़की ध्वनि सुन कर सर्प-स-
मूह भगता है वैसे ही हरि हरिकी ध्वनि सुन कर पापसमूह
मनुष्यको छोड़ कर भगता है । यह 'न ज भ ज त ग' का
'गरुड़रुत' वृत्त है ॥

नील (भ भ भ भ भ ग)

भा शिव आनन गौरि जबै मन लाय लखी ।

लै गइ ज्यों सुठि भूषण धारि वितान सखी ॥

चिन्तित होय गई तुरतै लखि नील गरो ।

पालक है सुरको यह की जन-पाप भरो ॥ ९ ॥

टी०—कोई सखी जब सुन्दर २ भूषण पहिना कर (गौरी) श्री-
पार्वतीजीको सरहडपमें ले गई तब उनने मन लगाके शिव-
जीके मुखकी शोभा देखी । शोभा देखते २ ज्योंही शिवजीके
नीलकरण पर दृष्टि पड़ी ल्योंही वह (चिन्तित) व्याकुल हो
गई और विचार करती है कि इसमें देवीकी प्रालकताका
चिन्ह (हालाहल) भरा है वा भक्तोंके पाप भरे हैं ? यदि भक्तोंके
पाप भरे हैं तो सैने जो पूर्व जन्ममें शिवजीके वचनों पर वि-
श्वास नहीं किया उसका स्मरण उनको अद्यावधि बना हीगा
यही व्याकुलताका हेतु है । यह 'भा शिव आनन गौ' अर्थात्
पांच भगण और एक गुरुका 'नील' वृत्त है । इसे विशेषक,
और अश्रवगति भी कहते हैं ॥

धीरललिता (भ र न र न ग)

भोर नरा न गावहिं जु कृष्ण कृष्ण सु मना ।

जन्म वृथा चलो न फिरि पावहिं नर-तना ॥

धारहु नेम धीर ! ललिता सखी जस कियो ।
सर्वस छांड़ि नेह बलसों हरी बस कियो ॥ १० ॥

टी०—जो लोग प्रातःकाल उठके शुद्ध मनसे 'कृष्ण कृष्ण' ऐसा नहीं गाते उनका जन्म वृथा ही चला जाता है । यह नर-तन वारंवार नहीं मिलता, अतएव हे धीर ! जैसे ललिता सखीने सर्वस्व छोड़के स्नेहद्वारा हरिको अपने वश कर लिया वैसे ही तुम भी हरिकी भजनका (नेम) नियम धारण करो और तद्वारा उनकी कृपा सम्पादित करो । यह 'भ र न र न ग' का 'धीरललिता' वृत्त है ॥

अथाव्यष्टिः ।

(सप्तदशाचरावृत्तिः १३१०७२)

शिखरणी (य म न स भ ल ग)

यमी ना सो भोला, गुनत जु पिये मोह-मदिरा ।
महापापी पावें, अधम गति जानौ श्रुति-गिरा ॥
यमी को ? सम्भू सो, जिन मदन जीत्यो भट महौ ।
जवै कीन्हें ध्याना, गिरि शिखर नीके बट छहौं ॥१॥

टी०—जिन लोगोंने मोह मदिरा पान की है वे समझते हैं कि शम्भू यमी न थे । यथार्थमें वे लोग महापापी हैं अतएव वे अधमगतिकी प्राप्त होते हैं, यह वेदवचन है । कहो तो शम्भू समान यमी कौन है ? कि जिन्होंने गिरिशिखर पर सुन्दर वृक्षकी कायामें ध्यानस्थ बैठे २ महाभट मदनकी जीत लिया

नकि उसके वश होगये । यह 'य स न स भ ल ग' का 'शि-
खरणी' वृत्त है । ६ और ११ पर यति है ॥

पृथ्वी (ज स ज स य ल ग)

जु साजि सिय लै गई, सुघर मण्डपे जो सखी ।

सु भाग तिनको बड़ो, अमरनारि भाषैं लखी ॥

जु रामछवि कङ्कणै, निरखि आरसी संयुता ।

लगाय हियसों घरी, कर न दूर पृथ्वीसुता ॥ २ ॥

टी०—जो सखियां सियाको अलङ्कृत करके सुन्दर मण्डपमें ले
गईं उनको देख कर अमराङ्गना कहती हैं कि इनका बड़ा
सौभाग्य है । और जिसने कङ्कणसंयुत आरसीमें श्रीरामजी-
की छवि देख उसे हृदयमें लगा ली पुनः घड़ी भरके लिये
भी वह छवि हृदयसे दूर न की उस पृथ्वीसुता जानकीका
भी सौभाग्य है । इसमें आदि जकार पादपूर्वार्ध है । यह
'ज स ज स य ल ग' का 'पृथ्वी' वृत्त है । आठ और नव
पर यति है ॥

हरिणी (न स म र स ल ग)

न सुमिर सुली गोस्वामी रामहीं तजि आनको ।

भजत जिहिं पाव योगी मोक्षके शुभ धामको ॥

विपिन बसि कीन्हें नाना युक्तितें बनके यती ।

बहु विधि सुखी औ मान्यो हेमको हरिणीपती ॥३॥

टी०—जिन श्रीरामचन्द्रजीके भजन द्वारा योगी लोग मोक्षके
शुभ धामको प्राप्त होते हैं, जिन्होंने बनमें बास करके नाना

युक्तियोंसे वनके यतीगणोंको सुखी किया और (हेमको हरिणीपती) काञ्चन मृग मारा, उन गोखामी श्रीमद्रामचन्द्रजीको छोड़ (सूली) शूली अर्थात् महादेवजी अन्यको नहीं (सुमिर) भजते । यह 'न स म र स ल ग' का 'हरिणी' वृत्त है । इसे हरिणी भी कहते हैं ॥

मन्दाक्रान्ता (म भ न त त ग ग)

मो भा ना तात ! गगनमहीमें कहै जो अजाना ।
 सर्वव्यापी समुद्धि मुहिं सो आत्मज्ञानी सुजाना ॥
 मोरी भक्ती सुलभ तिहिंको शुद्ध है बुद्धि जाकी ।
 मन्दाक्रान्ता कर सु छवि मो हो घनी प्रीति ताकी ॥४॥

टी०—योगेश्वर श्रीकृष्ण अपने परम मित्रसे कहते हैं—हे तात ! जो ऊहता है कि आकाश और पृथ्वीमें मेरी (भा) दीप्ति नहीं है वह अजान है परन्तु जो ऐसा समझता है कि यह सम्पूर्ण जगत् मुझसे अतप्रोत व्याप्त है वही आत्मज्ञानी और सद्बिक्की है । जिसकी बुद्धि शुद्ध है उसीको मेरी भक्ति सुलभ है और वही मेरी मनोहर छविको (मन्दाक्रान्ता कर) धीरे र निज स्नेहाधिक्यसे आक्रान्त कर सकता है अर्थात् निजप्रेमाधिक्यसे मुझे ऐसा बना लेता है कि मैं उसके हृदयमें सदा बना ही रहता हूँ । यह 'म भ न त त ग ग' का 'मन्दाक्रान्ता' वृत्त है ॥

भाराक्रान्ता (म भ न र स ल ग)

मो भा नारी सुलग सुभगा खरे हितसों सदा ।
 सेवै पीको तन-मन-धनै तजै तिहिं ना कदा ॥

भासै सीता ! पति रति विना सु भूषित हूं खरी ।
भारा क्रान्ता अभरननि ज्यों अलंकृत पूतरी ॥५॥

टी०—श्रीमती सीताजीसे परम पतिव्रता अनुसुइयाजी कहती हैं
हे सीता ! यदि तुम हित करके पूकृती हो तौ मैं तो यही
कहती हूं कि मुझे वही स्त्री (भा) भाती है और वही (सु-
भगा लग) सुन्दर प्रतीत होती है जो सदा (खरे) यथार्थ
हितसे एवं तन-मन-धनसे प्रेमपूर्वक निज पतिकी सेवा क-
रती है और उसे कदापि नहीं छोड़ती । हे सीता ! स्त्री
(पतिरति विना) पतिस्नेह हीन होनेके कारण कितने ही
भूषणोंसे भूषित तथा (सौन्दर्यभाराक्रान्ता) सौन्दर्यभार-
से आक्रान्त होने पर भी सजीहुई कठपुतरीके सदृश प्रतीत
होती है । यह 'म भ न र स ल ग' का 'भाराक्रान्ता' वृत्त
है । ४, ६ और ७ पर यति है ॥

मालाधर (न स ज स य ल ग)

निसिजु ! सिय लों गभीर मम नेहमें जो पगी ।
तुमहिं विनु कौन जाय लयके सँदेशा भगी ॥
फिरत हम साथ बन्धु तुम्हरी हि चिन्ता भरे ।
गिनत पल जात जो विरह हाथ माला धरे ॥६॥

टी०—श्रीरामजी रात्रिको उद्देश कर कहते हैं—हे रात्रीजू ! तु-
म्हारे अतिरिक्त मेरे अथाह प्रेममें पगीहुई सीता तक मेरा
सन्देश कौन ले जा सकता है कि तुम्हारी ही चिन्तासे
भरा हुआ मैं भाईके साथ तुम्हारे (विरह) वियोग जन्य

खिदमें, जो काल व्यतीत होता है, उसकी गणनाकिलिये हाथमें माला लिये फिरता हूँ । 'इस भावकी सीताजी रात्रि समय स्वप्नमें जैसे अनुभव कर सकेंगी वैसे अन्य किसी भी स्थितिमें न कर सकेंगी इति भावः' । यह 'न स ज स य ल ग' का 'मालाधर' वृत्त है ॥

अथष्टुतिः ।

(अष्टदशाक्षराष्टुतिः २६२१४४)

नन्दन (न ज भ ज र र)

नजु भज शरिफूलफलआदितें रघूनन्दना ।

सुनहु सुजान मोत मतिमन्द ते करैं क्रन्दना ॥

सब ताजि नेहसों दिवसरेन सोयके नाहको ।

भजत सनेम सो सुमति जीत मोहके जालको ॥१॥

टी०—हे सुष्ठुबुद्धिसम्पन्न मित्र ! जो लोग फूल फल (रोरी) कुंकुम आदिसे (रघूनन्दना) रामचन्द्रजीकी पूजा नहीं करते वे सतिमन्द पीछे (करैं क्रन्दना) रोते हैं परन्तु जो लोग सबको छोड़ (सनेम) नियमपूर्वक अहर्निशि सीतापति श्री रासको भजते हैं वे ही बुद्धिमान मोह समूहको जीत ज्ञानसम्पन्न हो कर मोचको प्राप्त होते हैं । यह 'न ज भ ज र र' का 'नन्दन' वृत्त है ॥

कुसुमितलतावेञ्जिता (म त न य य य)

माला नायो काल इन वरजोरी दही मू हमारे ।

भूठै लाई तो पहुँ उलहनो आज होतै सकारे ॥

मैं ना जाऊं अन्त कतहुं लखौं नित्य भानूसुताकी ॥
शोभावारी हूँ कुसुमितलतावेल्लिता वीचि जाकी ॥ २ ॥

टी०—प्रातःकाल गोपियोंकी अपनी माता यशोदासे उलहना कहते देख श्रीकृष्ण कहते हैं—हे माता ! इन्होंने अर्थात् गोपियोंने कल जोरावरीसे मेरे मुंह पर दही (नाया) डाल दिया अर्थात् लगा दिया और आज सबेरा होते ही तेरे पास झूठा उलहना ले कर आई है । हे माता ! मैं तो इधर उधर कहीं भी नहीं जाया करता, केवल सूर्यनन्दिनी यमुनाजीकी किनारे जाया करता हूँ और वहाँ पुष्पवती लताओं कारकी (वेल्लित) कम्पित एवं सुन्दर २ उनकी (वीचि) अल्पतरंगोंकी देखा करता हूँ । यह 'मा ता ना यो काल' अर्थात् मगण, तगण, नगण और तीन यगण का 'कुसुमितलतावेल्लिता' वृत्त है ॥

नाराच (न न र र र र)

न नर ! चहुँ डुला मनै धाइले ईशको निर्भरा ।
भजत जिहि सबै सचीकान्तजू आदि दै निर्जरा ॥
नस तुव अघओघ सारे प्रभूभक्तिकी ओटसों ।
सहि निसिचर वंस ज्यों रामनाराचकी चोटसों ॥३॥

टी०—हे नर ! मनको चारों ओर मत डुला परन्तु जिन ईशको इन्द्रादिक देव भजते हैं उनको निर्भर प्रेमसे भज । भक्तिके प्रभावसे तेरे पापसमूह ऐसे नष्ट हो जायंगे जैसे रामचन्द्रजीकी नाराचसे पृथ्वीमें निशिचरवंश नष्ट हो गया । यह 'न न

र चहुँ अर्थात् दो नगण और चार रगणका 'नाराच' वृत्त है । इसे सहासालिनी और तारका भी कहते हैं ॥

चित्रलेखा (म भ न य य य)

मैं भीनी यों गुणानि सुनु यथा कामरी पाइ बारी ।
 थोलो ना आलि ! तुमहिं कर जोरी कहों वारिवारी ॥
 देख्यो मैं एक पुरुष सपनेमें अहै काम भेषा ।
 छांडौ शोकै सु कह जु न मिलै नाम ना चित्रलेखा ॥४॥

टी०—प्रद्युम्नको स्वप्नमें देख तत्प्रेमासक्त जषा चित्रलेखा से कहती है—हे आली ! मैं हाथ जोड़ कर तुझसे वारंवार कहती हूँ कि तू मुझसे मत बोल । मैं इस समय विह्वल हो रही हूँ । सखीने विह्वलताका कारण पूछा तब वह कहती है हे सखी ! मैंने रातको स्वप्नमें काम सदृश सुन्दर पुरुष देखा उसके गुणोंसे भीज कर भीजीहुई कामरीके समान जड़ हो गई हूँ अर्थात् उसके सौन्दर्यको देख और जगन्मातापिता उमागङ्गारके वरप्रदानका स्मरण कर इतनी अधीर हो गई हूँ कि मुझे मेरे शरीरकी चेतना तक नहीं है । श्रीकृष्णात्मजके चरणोंमें जषाका पवित्र स्नेह देख सखीने कहा हे जषा ! तू शोकको छोड़ । यदि उस पुरुषको मैं तुझसे अभी ही न मिला दूँ तो मेरा नाम चित्रलेखा ही नहीं । यह 'मैं भीनी यों गुण' अर्थात् मगण, भगण, नगण और तीन यगणका 'चित्रलेखा' वृत्त है ॥

शार्दूलललिता (म स ज स त स)

मोसों जो सुत ! सांच पूछहु पिता गे मीचुसदना ।
हा!!! काहे ? सुत शोक को कहु चहूंमें राम भल ना ॥
काहे ? गे बन राम औ लखन दूनो सीय सहिता ।
राजाकी सुनि बाणिहे सुत ! विभू शार्दूल ! ललिता ॥५॥

टी०—भरतजीके मातुलग्रहसे आने तथा पिताकी कुशन पूछने पर कैकेयी कहती है—हे सुत ! यदि मुझमें सत्य २ पूछते हो तो सुनो तुम्हारे पिता मृत्युवश हो गये । इतना सुनते ही भरतजी शोकापन्न हो गये और दीर्घ स्वरसे हा ! ! ! कह कर पूछा कि पिताकी मृत्युका क्या कारण है ? तब कैकेयीने कहा कि वे पुत्र शोकसे मृत्युको प्राप्त हुए । भरतजी ने पूछा कि चार पुत्रोंमेंसे यह कौन सा पुत्र है जिसके शोकसे राजाकी मृत्यु हुई सो कहो । कैकेयीने कहा रामके शोकसे मरे । भरतजी अति ही खिन्न हो कातर स्वरसे बोले अरे रे ! ! ! यह भला न हुआ । फिर मातासे पूछने लगे, रामकी ओरसे क्या शोक हुआ । कैकेयी बाली, लक्ष्मण और सीताको ले कर राम वनको गये । भरतजीने फिर पूछा, राम वनको क्यों गये ? कैकेयीने उत्तर दिया, हे पुत्र ! हे विभूश्रेष्ठ ! राजाकी ललित बाणी सुन कर सीता लक्ष्मण समेत राम वनको गये । (प्रश्न) कैकेयीने राजाकी बाणीको 'ललित' विशेषण क्यों दिया ? यथार्थमें तो यह बाणी कठोर है (उत्तर) निज दोष छिपानेकेहेतु कैकेयीने भरतजीसे ऐसा ही

कहा । यह 'भ स ज स त स' का 'शार्दूललिता' वृत्त है ।
कहीं २ इसीकी संज्ञा 'शार्दूलसिता' भी पाई जाती है ।

हीर (भ स न ज न र)

भे सुनि जन राघवकर आवन मुदके भरे ।
दुःख लखत पुत्र वदन मातु तिहुनके टरे ॥
भा विपुल उछाह अवध मङ्गल धुनि व्है रहीं ।
दीन बहुत हेम सहित हीरक सब विप्रहीं ॥६॥

टी०—जब श्रीरामचन्द्रजी वनसे अयोध्याको आये तब अयोध्या-
वासी नर नारी उनका शुभागमन सुन कर प्रमुदित हुए ।
पुत्रका मुख देखते ही तीनों माताओंके दुःख नष्ट हो गये ।
अयोध्यापुरीमें घरीघर आनन्दपूर्वक अत्यन्त उत्साह मनाया
गया । माताओंने सब ब्राह्मणोंको सुवर्णहीरकादिकोंका
बहुत दान दिया । यह 'भ स न ज न र' का 'हीर' वृत्त
है । १२ और ६ पर यति है ॥

महामोदकारी (य ६)

यचौ यो यशोदाजुको लाड़िलो जो कला पूर्ण धारी ।
जिहीं भक्त गावैं सदा चित्त लाये खरारी पुकारी ॥
यही पूरवैगो सबै लालसा तो लला देवकीको ।
करै गाथ जाको मंहा मोदकारी सबै काव्य नीको ॥७॥

टी०—श्रीकृष्णजीकी ओर तर्जनी दिखा कर कोई महात्मा जनों-
से कहता है कि जिसे भक्त लोग खरारी नामसे पुकारते हैं,

और चित्त लगा कर गाते हैं, और जो पूर्णावतार है उसी इस यशोदाजीके लाड़िलेसे तुम परम पदकी याचना करो । और जिसके अखंडतानन्द देनेहारे चरित्रोंके वर्णनसे सम्पूर्ण काव्य शोभाको प्राप्त होता है वही यह देवकीनन्दन तुम्हारी सब याचनाओंको पूरी करेगा । यथा मुधानिधौ—

“सन्त औ असन्तनिको मुख दुख देतो कौन, कौन ऐसी लीला करि भूमिभार हरतो । कुञ्जमें ललित किलि करि राधिकादिकसौं, प्रेमके प्रकासको प्रगट कौन करतो ॥ होती छवि छार्द्र कवितार्द्रमें कहत तोष, कौनको सुजस गाय दू-पन निदरतो । कौन मुख खान एतो करतो जहान आन, परस सुजान कान्ह जो न अवतरतो ॥”

यह ‘य चौ यो य’ अर्थात् चार यगण और दो यगण ऐसे छः यगणका ‘महामोदकारी’ वृत्त है । इसे क्रीड़ाचक्र भी कहते हैं

चञ्चरी (र स ज ज भ र)

री सजै जु भरी हरी गुणसे रहै नित वाणि ! तू ।
 औ सदा लह मान सन्त समाजमें जगमांहि तू ॥
 भूलिके जु विसारि रामहिं आनको गुण गाइ है ।
 चम्पकै सस ना हरीजन चञ्चरी मन भाइ है ॥८॥

टी०—री वाणी ! यदि तू सदा हरि गुणोंसे भरी रहैगौ अर्थात् अहोरात्रि हरिगुणानुवाद किया करेगी तो (सजै) शोभाको प्राप्त होगी और सर्वकाल सन्तोंकी समाजमें मान पावेगी । यदि तू भमसे रामको तज अन्य किसीका गुण गान

करेगी तो चम्पक पुष्पके समान हरिजन चञ्चरीकींकी तू
जान्य न होगी । यह 'र स ज ज भ र' का 'चञ्चरी' वृत्त है ।
इसे चर्चरी, चञ्चली, विबुधप्रिया आदि भी कहते हैं ॥

मञ्जीर (म म भ म स म)

मोमें भूमें सो मापालक, दूजो कोउ न है मो ताता ।
रे मूढा ! तैं मिथ्या भाषत, है तोरी अनहोती बाता ॥
वाणी प्रल्हादाकी श्रीपति, ज्योंहीं कानकरी सापीरा ।
आये खम्भा फारी ता छिन, बाजीं दुन्दुभि औ मञ्जीरा ९

टी०—हिरण्यकश्यपने कुपित हो कर जब श्रीरामचन्द्रजीके अ-
नन्य भक्त प्रल्हादसे पूछा कि रे मूढ ! वता तेरा राम कहां
है ? तब जगपावन प्रल्हादने कहा, हे मेरे तात ! मुझमें
और पृथिव्यादि पञ्चतत्व करके जो निर्मित हैं उन सबहीमें
(मापालक) लक्ष्मीकान्त विद्यमान हैं उनके अतिरिक्त दू-
सरा कोई नहीं है । इसे सुन कर हिरण्यकश्यपने कहा रे
मूढ ! मिथ्या प्रलाप क्यों करता है ? तेरा कथन सर्वथैव
असम्भाव्य है । अपनी साधु वाणीकी मिथ्या सुन कर प्रल्हाद
ने आर्तनादसे पुकार की उसे ज्योंहीं श्रीपतिने सुना ल्योंही
परम भागवतकी वाणीकी सत्य करनेकेहेतु श्रीभ्रष्टी खम्भा
फाड़ कर उसीमेंसे प्रगट हुए । उनका आविर्भाव होते ही
सुरोंकी समाजमें दुन्दुभि मञ्जीरादि मङ्गल वाद्योंका घोष
होने लगा । यह 'म म भ म स म' का 'मञ्जीर' वृत्त है ॥

अथाधृतिः ।

(जनविंशत्यक्षरावृत्तिः ५२४२८८)

मेघविस्फूर्जिता (य म न स र र ग)

यमुना सौरी रागयुत निशिमैं वांसुरी ज्यों बजाई ।
सखी धाई बौरी सपदि उठिकै लाजकाजै विहाई ॥
लह्यो भारी मोदा पुलकि लखिकै मोहना नाम जाको ।
बनैले ज्यों केकी लहत सुनि कै मेघविस्फूर्जिताको ॥१॥

टी०—किसी अवसर पर रात्रि समय (सौरी = शौरी) श्रीकृष्णने यमुना तीर पर रागयुत ज्योंही वांसुरी बजाई त्योंही उसे सुन कर सब सखियां (बौरी) विंचिप्र बन लाजकाजको छोड़ शीघ्रही उनकी ओर उठ धाई और यमुना तीर पर जा पुलकिततनु हो मोहननामाभिधेयीको देख कर ऐसी आनन्दिता हुई जैसे (बनैले) अरखवासी (कीकी) मयूर-गण (मेघविस्फूर्जिता) मेघध्वनिको सुन कर प्रमुदित होते हैं । यह 'य म न स र र ग' का 'मेघविस्फूर्जिता' वृत्त है ॥

छाया (य म न स त त ग)

यमुनासों ताँती गवलितनया माँगैं नितै जाय कै ।
वही दे माता ! जो बर हम माँगैं माथा तुम्हें नायकै ॥
धरे बंसी माला बन-कुसुम-वारी राज जो श्रीपती ।
लखैं जाको वृन्दावन सुवट छायामाँहि हो सो पती ॥ २ ॥

टी०—(गवलिततनया ताँती) गोपकन्यावली यमुनाजीसे निल

याचना कारती हैं कि हे माता ! हम तुम्हें प्रणाम करके जो वर मांगती हैं वही वर तुम हमें दो । हम यही मांगती हैं कि जिस श्रीपतीको वंसी और वन-पुष्पीकी माला धारण किये वृन्दावनके सुन्दर वृक्षोंकी छायामें सब लोग देखा करते हैं वेही हमारे पति होंगे । यह 'य म न स त त ग' का 'छाया' वृत्त है ॥

शार्दूलविक्रीडित (म स ज स त त ग)

मोसों जो सत तू गरूर तजि के पूछे मतो ज्ञानको ।
कैहों में भजले विदेहतनया तासों बड़ो आन को ॥
शक्ती आदि अकथ्य जासु महिमा राखे वचा पीड़िते ।
संहारयो जन लागि दुष्ट असुरै शार्दूल विक्रीडिते ॥३॥

टी०—श्रीमती जानकीजीका कोई अनन्य भक्त किसी जिज्ञासु-से कहता है—यदि तू दम्भ छोड़ मुझसे सत्य ज्ञानका विचार वा सत पूछता है तो मैं तो यही कहूंगा कि श्रीमती वेदेही को, जिनसे श्रेष्ठ अन्य कोई नहीं है, प्रीति एवं उत्साहपूर्वक भज । उनका भजन ही सत्य ज्ञानका मार्ग है । षड्गुणैश्वर्य्य सम्पन्ना आदिशक्ति जिनकी महिमा अवर्णनीय है और जो सब भक्तोंको (पीड़िते) आधि व्याधि दुःखोंसे पृथक् रखती हैं वह यही जनकदुलारी श्रीरघुवीरपियारी श्रीमती जानकीजी हैं, सिंहसमान पराक्रम करके भक्तप्रीत्यर्थ सहस्रबाह्यादि दुष्ट असुरोंका संहार इन्होंने किया है । यह 'म स ज स त त ग' का 'शार्दूलविक्रीडित' वृत्त है । १२ और ७ पर यति है ।

शम्भू (स त य भ म म ग)

सत या भूमी मग जोपै खोजहु सिच्छां मेरी मानो जू ।
गिरिजानाथा नमिये माथा नित याही नेमै धारो जू ॥
तजि कै कामा भजिये नामा समयो ना ऐसो पावो जू ।
शिववम्भोला शिववम्भोला बम भोला शम्भू गावो जू ॥४॥

टी०—यदि इस पृथ्वी पर तुम सत्य मार्ग खोजनेकी आकांक्षा रखते हो तो मेरी शिक्षा मानो नित्य नियमपूर्वक श्रीगिरि-जानाथको सीस नवाञ्चो और सब कामनाओंका त्याग करके शिववम्भोला शिववम्भोला गाया करो—देखो ऐसा सुश्रवसर फिर तुम्हें कदापि प्राप्त न होगा । यह 'स त य भ म म ग' का 'शम्भू' वृत्त है ॥

फुल्लादाम (म त न स र र ग)

सो तो नासौ रे रंगहु अपनको रामके रागमाहीं ।
ध्यावै धाता शम्भु सहित सुरके छांड़ि कामादि जाहीं ॥
जाने भंज्यो मैथिलि दुख रु पिनाकै नृपाली सभामें ।
जाके कण्ठे युक्त विपुल जय मेली सिया फुल्लादामें ॥५॥

टी०—रे भाइयो ! यह मेरा और वह तेरा इत्यादि मायाके प्रपञ्चोंको नष्ट करो और जिसे कामादि विकारोंकी छोड़ देवगणोंके साथ ब्रह्मा महेश ध्याते हैं, और जिनने (नृपाली सभामें) राजाओंकी सभामें मैथिलीके दुःख तथा शिवजीके चापका भंजन किया अतएव जिनके कण्ठमें सीता के प्रचुरजयसम्पन्ना विकसित पुष्पोंकी माला पहिराई उ-

म्हींकी प्रीतिमें अपनेको रँग लो । यह 'म त न स र र ग'
का 'फुल्लदाभ' वृत्त है ।

सू०—यहां 'रँगहु' में 'र' की एक ही मात्रा लेनी चाहिये ॥

अथवृत्तिः ।

(विश्वत्यक्षरावृत्तिः १०४८५७६)

वृत्त (र ज र ज र ज ग ल)

रोज रोज राजगैलतें लिये गुपाल ग्वाल तीन सात ।
वायुसेवनार्थं प्रात वाग जात आव लै सु फूल पात ॥
लाय के धरें सबै सु फूलपात मोद युक्त मातु हात ।
धन्य मान मातु बाल वृत्त देखि हर्ष रोम रोम गात ॥१॥

टी०—श्रीनोपाखण्डा दस एक ग्वालोंको साथ ले कर ठहलनेकी
लिये प्रातःकाल राजमार्गसे पुष्पवाटिकामें नित्यप्रति जाया
करते और वहांसे सुन्दर २ पुष्पपत्र ले कर घरको आया करते
थे । घर पहुंचने पर सब पुष्पपत्र आनन्दपूर्वक माताकी हाथमें
धरा करते थे । पुष्पपत्र पा. माता बालक श्रीकृष्णके (वृत्त)
चरित्रमें मग्न हो कर अपनेको धन्य मानती और रोम २ ह-
र्षित हुआ करती थी । इस वृत्तमें इस वृत्तकी व्युत्पत्ति भिन्न
भिन्न रीतिसे दो. वार कही गई है । यथाः—

(१)—यह 'रोज रोज राजगैल' अर्थात् 'र ज र ज र ज ग ल'
का 'वृत्त' संज्ञक वृत्त है ।

(२) यह 'ग्वाल तीन सात' अर्थात् क्रमसे दस गुरु लघु का
'वृत्त' संज्ञक वृत्त है । इसे दण्डिका अथवा गण्डिका भी क-
हते हैं ॥

गीतिका (स ज ज भ र स ल ग)

सज जीभरी ! सु लगे मुहीं सुन मो कहा चित लाय के ।
नय काल लक्ष्मण जानकी सह रामको नित गाय के ॥
पद ! मो शरीरहिं रामके कल धामको लय धावहू ।
कर ! वीन लै अति दीन ह्वै नित गीतिकान सुनावहू ॥२॥

टी०—री जीभ ! यदि तू मेरा कहा चित्त लगा कर श्रवण करेगी
और लक्ष्मण सीता समेत नित्य रामजीका गुणगान करके
(काल नय) कालजेप करेगी तो (सज) शोभा को प्राप्त होगी
अतएव मुझे भी (सु लगे) प्यारी लगेगी । इसी प्रकार हे पद !
तुम यदि मेरे शरीरको रामजीके सुन्दर धामको ले चलेगी
तो मुझे प्यारे लगोगे वैसेही हे कर ! यदि तुम अति दीनता-
पूर्वक प्रभुके चरित्रोंके उत्तम उत्तम गीत वीनमें बजा कर
कानमें श्रवण कराओगे तो प्यारे लगोगे । यह 'स ज ज भ
र स ल ग' का 'गीतिका' वृत्त है ॥

शोभा (य म न न त त ग ग)

यमुना ना तू तौ गगरि लय कवों जा सुनै वात मेरी ।
फिरै कान्हा नित्यै यमुनतट वहू ग्वाल संगी लिये री ॥
लखै वाकी शोभा विपुल गुण युता जो सु वाला नवीनी ।
न जानौं सो कैसे सपदि सुतवधू ! प्रीतिमें जाय भीनी ॥३॥

टी०—कोई सास कहती है—हे पुत्रवधू ! तू निश्चयपूर्वक मेरी
वात मान कि गगरी ले कर यमुना तीर पर जल लेनेको क-
दापि मत जाया कर । क्योंकि उसके तीर पर अपने साथके

ग्वालवालोंको ले कर कान्ह नित्य ही फिरा करता है । जो अप्रौढ़ सुन्दर गोपी उसकी अमित गुणकलित शोभाको देख पाती है वह न जाने किस प्रकार (सपदि) शीघ्रही उसकी प्रीतिमें (जाय भीनी) रँग जाती है । यह 'य म न न त त ग ग' का 'शोभा' वृत्त है । ६,७ और ७ पर यति है ॥

अथ प्रकृतिः ।

(एकविंशत्यक्षरावृत्तिः २०६७१५२)

स्रग्धरा (म र भ न य य य)

सोरे भौने ययू यो कहहु सुत ! कहाँ लिये आवते हो ।
भाका आनन्द आजी तुम फिरि फिरि कै माथ जो नावते हो ॥
बोले माता ! विलोक्यो फिरत सह चमू वागमें स्रग्धरे ज्यों ।
काढी माला रुमारे विपुल रिपुवली अश्व लो जीतिके त्यों ॥ १ ॥

टी०—सुनि आश्रममें बसती हुई सीता निज पुत्रोंसे पूछती है—हे पुत्रो ! कहाँ तो सही ! तुम इस (ययू) मेधाश्रवको हमारे आश्रम पर कहाँसे ले कर आ रहे हो ? आज तुम्हें क्या आनन्द हुआ है कि जिससे तुम पुनः २ सुभे प्रणाम करते हो ? इन प्रश्नोंको सुन कर पुत्रोंने कहा हे माता ! हमने इस मेधाश्रवको (स्रग्धरे) माला पहिरे सैन्यके साथ बगीचेमें फिरते देखा और वहाँसे इसे पकड़ कर लिये आते हैं । ज्योंही हमने इसे पकड़ा त्योंही असंख्य बलवान शत्रु हमसे युद्ध करने को आ गये, हमने उन्हें मार इस मेधाश्रवको जीत लिया और इसकी माला उतार ली । यही हमारे आनन्दका का-

रण है । यह 'म र भ न य य य' का 'स्रग्धरा' वृत्त है ।

७,७ और ७ पर यति होती है ॥

सरसी (न ज भ ज ज ज र)

न जु भज जो जरा पुहुमिजा सरसीरुह-नैन जानकी ।
भजत जिन्हें लहें जन कृपा द्रुत राम दयानिधानकी ॥
लहत न ते कतौं सुख नराधम देह धरे निकाम यों ।
सुनहु सुधी ! अजागल कहों पुनि जानहु श्वानपूँछ ज्यों ॥२

टी०—एक भक्तकी उक्ति—जिन (सरसीरुह नैन) कमलनयनी
(पुहुमिजा) भूकन्या जानकीजीका भजन करके भक्तलोग
शीघ्र ही दयानिधान श्रीमद्रामचन्द्रजीके कृपापात्र बनते हैं,
जो लोग उन्हें जरा भी नहीं भजते उनको सुख कहीं नहीं
प्राप्त होता । इतनाही नहीं पर हे बुद्धिमान् ! वे लोग मनु-
ष्योंमें अधम समझे जाते हैं उनका नरदेह धारण करना
(अजागल) वकरीके गलेके सनोंके समान (निकाम) व्यर्थ है ।
पुनः कहता हूँ कि उनका मनुष्यदेह धारण करना श्वानकी
पूँछके सदृश व्यर्थ है । यह 'न ज भ ज ज ज र' का 'सरसी'
वृत्त है ॥

अहि (भ भ भ भ भ भ म)

भोर समैं हरि गेंद जु खेलत संग सखा यमुनातीरा ।
गेंद गिरो यमुना दहमें झटि कूद परे धरि के धीरा ॥
ग्वाल पुकार करी तब नन्द यशोमति रोवत ही धाये ।
दाउ रहे समुझाय इतै अहि नाथि उतै दहतें आये ॥३॥

टी०—किसी समय श्रीकृष्ण सखागणोंके साथ प्रातःकाल यमुना तीर पर गेंद खेल रहे थे, खेलतेर श्रीकृष्णका गेंद यमुनादहमें जा गिरा । उसके दहमें गिरते ही श्रीकृष्ण भी धैर्य धारण करके शीघ्र ही दहमें कूद पड़े । श्रीकृष्णके दहमें कूदते ही ग्वालोंने पुकार की उभे सुनते ही नन्द यशादा रोतेहुए उठ दौड़े । इधर (दाज)वलरामजी कातर नन्द यशादाकी भसभ्ता ही रहे हैं कि दूतनेमें उधरसे (अहिनाथि) कालियाको नाथकर यमुनादहसे श्रीकृष्ण आ गये । यह वृत्त प्रस्तारकी रीति से नूतन रचा गया है । यह 'भी रस मै' अर्थात् छः भगण और एक भगण का 'अहि' संज्ञक वृत्त है ॥

अथाकृतिः

(द्वाविंशत्यक्षरावृत्तिः ४१६४३०४)

मदिरा । भ भ भ भ भ भ भ ग)

भा सत गौरि गुसाँइनको वर राम धनू दुइ खण्ड कियो । मालिनिको जयमाल गुहो हरिके हिय जानकि मैलि दियो ॥ रावनकी उत्तरी मदिरा चुप चाप पयान जु लङ्क कियो । राम वरी सिय मोद भरी नभमें सुर जै जयकार कियो ॥ १ ॥

टी०—श्रीगोस्वामिनी महासाया पार्वतीजीका वर-प्रदान(सत भा) सत्य हुआ । रामचन्द्रजीने धनुषके दो खण्ड कर दिये । मालिनकी गुहीहुई जयमाला जानकीजीने श्रीरामजीकी पहिना दी । रावणकी गर्वरूपी मदिरा उत्तरी । वह चुप चाप

लङ्काको चला गया। श्रीरामने (मोद भरी) आनन्दयुक्त सीता का पाणिग्रहण किया। आकाशमें सुरोंने जय जयकी ध्वनि की। यह 'भासत०गी' अर्थात् ७ भगण और एक गुरुका 'मदिरा'वृत्त है। इसे मालिनी, उमा और दिवा भी कहते हैं। इसी प्रकारके वृत्तोंका दूसरा नाम सवैया है जिनके कई भेद हैं जो यथास्थान दिये गये हैं ॥

सू०—सवैया और कवित्तोंके तुकान्त अवश्य मिलने चाहिये अर्थात् चारों चरणोंके अंत्याक्षर एकसे होने चाहिये ॥

हंसी (म म त न न न स ग)

मैं मो तो ना नाना सोंगै तजहु सुबुध ! न तु ग्रस-
हरिमाया । जो याते ना लूटे पावे कवहुँ न सुख कह
सुजन निकाया ॥ वषैं अगनी चाहै चन्दा अकरम करम
करहिं अवतंसी । वाढें कंजा माथे शैला लवण जलधि-
पय पिय वरु हंसी ॥ २ ॥

टी०—कौई भक्त कहता है—हे सुबुध ! मैं हूँ यह मेरा है तेरा नहीं है इत्यादि (सोंग) मिथ्या कल्पनाओंको छोड़ नोचेत् तुझे हरिकी माया ग्रसित करैगी । सज्जन लोगोंका कथन है कि चाहे चन्द्रसे अग्नि वषैं, श्रेष्ठ पुरुष निन्द्य कर्म करै, पर्वतकी चोटी पर कमल पैदा हों, वैसेही खारे समुद्रका जल हंसी पान करै, परन्तु जो इस मायासे मुक्तता नहीं पाता उसे कदापि सुख नहीं मिलता । यह 'म म त न न न स ग' का 'हंसी' वृत्त है । ८ और १४ पर यति है ॥

मोद (भ भ भ भ भ म स ग)

भे सरमें सिगरे गुण^१ अर्जुन जाहिर भूपालौ हु
लजाने । ज्योंहि स्वयम्बरमें मछरी दइ बेधि सभासों
द्रौपदि आने ॥ जाय कह्यो निज मातहितें फल एक
मिलो ये तोहि बखाने । बाँटहु आपसमें तव बोलत
मोद गहे कुन्ती अनजाने ॥ ३ ॥

टी०—अर्जुनके संपूर्ण गुण बाणमें प्रकाशित हुए । ज्योंही अर्जुन
ने स्वयम्बरमें मछरीको वेध कर द्रौपदीका जीत लिया ल्योंही
सब राजालोग लज्जित हो गये । जय प्राप्त करके घर आने
पर कुन्ती मातासे सब भाइयोंने कंहा कि हे माता ! हमको
एक फल मिला है । इतनाही कहने पाये थे कि मातानि
आनन्दपूर्वक अनजाने कह दिया कि उसे तुम सब आपसमें
वांट लो । यह 'भे सरमें सिग' अर्थात् पांच भगण एक भगण
एक सगण और एक गुरुका 'मोद' वृत्त है ॥

भद्रक (भ र न र न र न ग)

भोर नरा नरी नगधरै हिये धरत नेहसों समुझि
के । ध्यावत ताहि जात अघओघ जा विधि मनोरथा
कुमतिकै ॥ भाव कुंभाव आलस पुनी लिये अनख जो
रटैं दिननिसा । होत सबै प्रभद्रक सु नाम शम्भु
मुनि कुम्भ औ दशसिसा ॥ ४ ॥

टी०—किसी भक्तकी उक्ति—प्रातःकाल जो स्त्री पुरुष (नगधर)

गिरिधारी श्रीकृष्णको प्रेमपूर्वक हृदयमें धारण करते हैं और उनका ध्यान करते हैं उनके पापपुंज कुमतिके मनोरथके समान नष्ट हो जाते हैं। इस सुन्दर नामीकी कोई कैसेही रात दिन जपे वह सबको मङ्गल ही देता है। भाव, कुभाव, आलस्य और अनखपूर्वक जपनेहारे शङ्कर, (मुनि) वाल्मीक, (कुम्भ) कुम्भकर्ण और रावण इनकी परिणामकी सोचा। 'भाव सहित शङ्कर जघ्यो, कहि कुभाव मुनि वाल। कुम्भकरण आलस जघ्यो, अनख जघ्यो दशभाल' ॥ यह 'भ र न र न र न ग' का 'भद्रक' वृत्त है ॥

मन्दारमाला (त त त त त त त ग)

तू लोक गोविन्द जावै नरा छोड़ जंजाल सारे भजे नेमसों । श्रीकृष्ण गोविन्द गोपाल माधो मुरारी जगन्नाथहीं प्रेमसों ॥ मेरी कही मानले मीत तू जन्म जावै वृथा आपको तार ले । तेरी फलै कामना हीयकी नाम-मन्दारमाला हिये धार ले ॥ ५ ॥

टी०—हे नर ! यदि तू सारे जंजालोंको त्याग कर नियमपूर्वक ईश्वरका प्रेमसे भजन करेगा तो तुझे परमधाम अवश्य प्राप्त होगा । हे मीत ! मेरी कही मान । जन्म वृथा जा रहा है संसारसे अपने तरनेका उपाय कर । तेरी मनोकामना फलैगी । हृदयमें ईश्वरके कल्पवृक्षरूपी नामोंकी मालाको धारण कर । यह 'तू लोक यो' अर्थात् सात तगण और एक गुरु का 'मन्दारमाला' वृत्त है ॥

अथ विकृतिः ।

(त्रयोविंशत्यक्षरावृत्तिः ८३८८६०८)

सुन्दरि (स स भ स त ज ज ल ग)

ससि भास तजो जों लजि सखि ! ढूँढों कुंजगली
विछुरी हरिसों । इक एक लखी यामुनतटकी वल्ली
बहु पूछ करी तिनिसों ॥ कहूँ कोउ कहें ना हम लखि
पाये माधव पाणि गहे वँसुरी । नहिं जानतिहों सुन्दरि !
इक वारी आजुहिं दैव फिरो कसुरी ॥ १ ॥

टी०—श्रीकृष्णाका खोज करती हुई कोई गोपी किसी सखीसे
कहती है—हे सखी ! हरिसे विछुड़ी हुई मैं जब लग कुञ्ज-
गलीमें उन्हें ढूँढती हूँ थी कि इतनेहीमें (ससि भास तजो) च-
न्द्रास्त हो गया । इतने पर भी मैंने यमुना तीरकी एक एक
वल्ली शोधी और उनसे बहुत प्रकार पूछापाछी भी की परन्तु
कहीं किसीने भी न कहा कि हमने अमुक स्थान पर हाथमें
वंसी लिये माधवको देखा है । री सुन्दरी ! नहीं जानती कि
आजके आजही एक पलमें मेरा दैव कैसा फिर गया अर्थात्
विपरीत हो गया । यह 'स स भ स त ज ज ल ग' का 'सु-
न्दरि' वृत्त है ॥

अद्रितनया (न ज भ ज भ ज भ ल ग)

न जु भज भाज भूल गहिके हिमाद्रितनया तिया सु
ननमें । जिन हित शम्भु राम महिमा कही सुनत
पाप जायँ छनमें ॥ नहिं तिनसों अभागि जगमें कहों

सुमति ! ज्यों खरी विचरतीं । न पति करैं सनेह ति-
नसों कदापि मनसों सदुःख मरतीं ॥ २ ॥

टी०—कोई पार्वतीपदपरायणा स्त्री कहती है कि जिनके हि-
तार्थ श्रीशम्भुजीने (राम महिमा) रामायण, जिसके अर्थ
करते ही पाप समूल नष्ट हो जाते हैं, (कही) प्रकाशित की
उन हिमाद्रितनया पार्वतीजीकी जो स्त्रियां संसारमें चित्त
लगा कर नहीं भजतीं परन्तु भूलके भागती हैं अर्थात् मोह
वश उनसे पराङ्मुख रहती हैं, हे सुमति ! मैं सत्य कहती हूँ
कि उनके समान अभागिनी इस संसारमें अन्य कोई नहीं
हैं । पार्वतीकी भक्तिसे विमुख रहनेके कारण उनके पति उन
पर मनसे कदापि प्रीति नहीं करते इसी कारण वे यावज्जी-
वन गधीके समान संसारमें फिरती हैं और अन्तमें खेदयुक्त
ही लब्धको प्राप्त होती हैं । यह 'न ज भ ज भ ज भ ल ग'
का 'अद्रितनया' वृत्त है । कहीं २ इसका नाम अश्वल्लित
भी पाया जाता है ।

चकोर (भ भ भ भ भ भ ग ल)

भासत ग्वालसखीगनमें हरि राजत तारनमें
जिमि चन्द । नित्य नयो रचि रास मुदा ब्रजमें हरि
खेलत आनँद कन्द ॥ या छवि काज भये ब्रजवासि
चकोर पुनीत लखैं नँदनन्द । धन्य वही नरनारि
सराहत या छवि काटत जो भव-फन्द ॥ ३ ॥

टी०—ब्रजमें जब २ नित्य नया रास रच कर आनन्दकान्त श्रीकृष्ण

आनन्दपूर्वक क्रीड़ा करते थे तब २ ग्वाल और सखियोंकी मध्य तारागणमें चन्द्रकी समान विराजतेहुए वे भासते थे । इस दृश्यकेलिये ब्रजवासी चकोर वन पावन नन्दनन्दनको देखा करते थे । इस संसारमें वेही स्त्री पुरुष धन्य हैं जो श्रीकृष्णकी इस छबिकी सराहना करतेहुए निज भवफन्दको काटते हैं । यह 'भा सत ग्वाल' अर्थात् सात भगण और एक गुरु लघुका 'चकोर' वृत्त है ॥

सत्ताक्रीडा (म स त न न न न ल ग)

मो माता ! नाचो लौ गोपाल ! पय दधि इमि मुहिं पकरि कहती । जो ना नाचो मोरी माता ! सब मिलि युवति मुहिं भजत धरती ॥ यों रानी माधोकी बानी सुनि कह कस तिय असत कहत री । लाजो ना सत्ता क्रीडा भाषत गुरुजनसन गत-भय सिगरी ॥ ४ ॥

टी०—एक समय गोपियां श्रीयशोदाजीसे श्रीकृष्णके उलहने कह रही थीं कि उसी समय श्रीकृष्ण भी खेलते कूदते वहां पर आ गये । माताने सखियोंकी विवरणीकी सम्बन्धमें इनसे पूछा तो कहते हैं—हे मेरी माता ! ये सखियां मुझे पकड़ कर कहती हैं 'हे गोपाल ! नाचो और यह दही दूध लो' । हे माता ! यदि मैं इनका कहना नहीं मानता और इनके पाससे भागता हूं तो ये मुझे पकड़ लेती हैं । श्रीकृष्णके इस कथनको सुन कर यशोदाजीने कहा अरी गोपियो ! असत्य क्यों बोलती हो ? तुम सबकी सब कैसी मत्त हो गई हो

जो निर्भय हो कर गुरुजनोंसे ऐसी २ क्रीड़ाओंका वर्णन करते लाजती नहीं हो । यह 'म म त न न न न ल ग' का 'मत्ताक्रीडा' वृत्त है ॥

मत्तगयन्द (भ भ भ भ भ भ भ ग ग)

भासत गङ्ग न तो सम आन कहूँ जगमें मम पाप हरैया । वैठि रहे मनु देवसवै तजि तो पर तारन भारहिं मैया ॥ या कलिमें इक तूहि सदा जनकी भवपार लगावत नैया । है तु इकै हरि अम्ब खरी अघमत्तगयन्दहिं नास करैया ॥ ५ ॥

टी०—श्रीगङ्गाजीकी स्तुति—हे गङ्गा ! तुझसमान अन्य सेरे पाप हरण करनेहारा जगमें मुझे कहीं नहीं प्रतीत होता । हे मैया ! मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि मानो सब देवता पापियोंके तारनेका बोझ तुझ ही पर छोड़के बैठ रहे हैं । इस कलिमें (जन) भक्तोंकी नाव भवसागरके पार लगानेवाली तू ही एक है । हे अम्ब ! जनोंके अघरूपी मत्तगयन्दोंको नष्ट करनेकेलिये (खरी) यथार्थमें तू (हरि) सिंहके समान है । यह 'भा सत गङ्ग' अर्थात् सात भगण और दो गुरुका 'मत्तगयन्द' वृत्त है । इसे मालती भी कहते हैं ॥

सुमुखी (ज ज ज ज ज ज ज ल ग)

जु लोक लगेँ सियरामहिं साथ चलें बनमाहिं फिरै न चहें । हमें प्रभु आयसु देहु चलें रउरे सँग यों कर जोरि कहें ॥ चलें कछु दूर नमें पगधूरि अरु

फल जन्म अनेक लहैं । सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हें
बहु भांतिनतें समुझाइ कहैं ॥ ६ ॥

टी०—जो लोग वनको जातेहुए सीतारामके साथ लग जाते थे वे उनके साथ ही साथ वनमें जाना चाहते थे, पीछे पलटना ही नहीं चाहते थे । वारंवार हाथ जोड़ कर कहा करते थे हे प्रभु ! 'हमको अपने साथ चलनेकी आज्ञा दीजिये । आपके साथ कुछ दूर चल आपके चरणोंकी धूलिको नमन करनेसे हमको अनेक जन्मोंके फल प्राप्त होंगे' । सुवदना सीता और श्रीरामजी भी साथ लगेहुए लोगोंको अनेक प्रकारसे समझा बुझा कर पीछे फेर दिया करते थे । यह 'जु लोक लगे' अर्थात् सात जगग और एक लघु गुरुका 'सुमुखी' वृत्त है । इसे मानिनी और मल्लिका भी कहते हैं ॥

अथ संस्कृतिः ।

(चतुर्विंशत्यक्षरावृत्तिः १६७७०२१६)

गंगोदकं वा गंगाधर (१८)

रे वसो धाइके अन्त कासीहि के धाम निश्चित गं-
गोदके पान के । कोटि वाधे कटें पाप सारे घटें शम्भु
शम्भू रटें नाथ जो मान के ॥ जन्म बीता सबै चेत
मीता अवै कीजिये का तवै काल ले आन के । मुण्ड-
माला गरैसीस गंगाधरै आठ यामै हरै धाइ लेगान के ॥ १ ॥

टी०—रे जनो ! कासीजीको ही मोक्षप्रद धाम जानो और अन्त समय वहीं दौड़के जा वसो वहां पर निश्चित हो कर गङ्गो-

दक पान क्रिया करो । जो लोग शंभुजीकी स्वामी मान कर वहां वास करते हैं और शंभु २ रटा करते हैं उनकी कोटिभः वाधायें कटती हैं और सब पाप क्षयको प्राप्त होते हैं । हे मित्रो ! अब भी तो चेतो नहीं तो जब सब आयुष्य व्यतीत हो जायगी और काल आ कर तुमको पकड़ लेगा तब क्या कर सकोगे ? अर्थात् कुछ न कर सकोगे । अतएव अभीसे जिनके गलेमें मुण्डोंकी माला है और जो शीस पर गङ्गाजीकी धारणा किये हैं उन हरकी आठों याम भजा करो और उन्हींका ध्यान किया करो । इस वृत्तमें इस वृत्तके लक्षण भिन्न २ रीतिसे दो बार कहे गये हैं । यथा—

- (१) 'रे वसो' अर्थात् आठ रगणका 'गङ्गादक' वृत्त है ॥
 (२) चौथी पंक्तिमें 'रे आठ' अर्थात् आठ रगणका 'गङ्गाधर' वृत्त है । इसका लक्ष्मी भी कहते हैं ॥

किरीट (भ भ भ भ भ भ भ भ)

भा वसुधातल पाप महा तव धाइ धरा गइ देव-
 सभा जहँ । आरत नाद पुकार करी सुनि वाणि भई
 नभ धीर धरो तहँ ॥ लै नर-देह हतौ खलपुञ्जनि
 थापहुंगो नय-पाथ महीमहँ । यों कहि चारि भुजा
 हरि साथ किरीट धरे जनमे पुहुमीमहँ ॥ २ ॥

टी०—पृथ्वी पर जब बहुत पाप हुआ तब पृथ्वी जहां देव सभा थी वहां दौड़ कर गई । और उनकी साथ ले कर उसने आर्त्त नादसे पुकार की, जिसको सुन कर आकाशवाणी हुई

कि धीर धर । मैं नरदेह धारण कारकी दृष्टींकी समूहोंको नष्ट करूंगा और पृथ्वी पर न्यायका मार्ग स्थापित करूंगा । इस प्रकार वचन दे कर तदनुकूल चतुर्भुज शङ्खचक्रादि आयुध तथा साथे पर किरीटादि भूषण धारण कियेहुए हरि पृथ्वी पर असाधारण रीतिसे अवतीर्ण हुए । यह 'भा वसु' अर्थात् आठ भगवाका 'किरीट' वृत्त है ॥

तन्वी (भ त न स भ भ न य)

भात न सोभा भन यह सु बुधा यद्यपि सुन्दर मन-
हर तन्वी । जो पतिनेहां रहित सुनयना ज्यों जग घाव
सहित नर धन्वी ॥ शील न लाजा नय नहीं तनिकी
भूषित भूषण तन सुकुमारी । त्रै-कुल नासै कुपथाहिं चलि-
कै पोषत सो तिय लग अघ भारी ॥ ३ ॥

टी०—सत्यगिडतींका यह कथन है कि यद्यपि (तन्वी) स्त्री कैसी ही सुन्दर, मनोहारिणी और सुनयना हो तथापि निज पति स्नेहसे रहित होनेके कारण पीठ पर घाववाले धन्वी के समान लोगोंको नहीं भाती अर्थात् लोगोंमें सन्मानित नहीं होती । वैसे ही सुकुमार अङ्गीमें अनेक भूषणों से भूषित होने पर भी नय, शील, लज्जादि स्त्रियोंके साहजिक भूषणोंसे हीन होने के कारण तीनों कुल नष्ट करनेहारि कुमार्गिणी कहाती है । इसकी पोषण करनेहारिको महत् पाप का भागी होना पड़ता है । यह 'भ त न स भ भ न य' का 'तन्वी' वृत्त है । ५, ७ और १२ पर यति है ॥

सुक्तहरा (ज ज ज ज ज ज ज ज) २४^{११०}

जु आठहुं याम भजैं शिवको नित छांड़ि सबै छल छिद्र
सुजान । सु हैं धन या जगमाहिं लहैं फल जन्म लियेकर
सन्तसमान ॥ प्रसन्न सदा शिव हों तुरतैं जनपै सब
भाषत वेद पुरान । करैं नित भक्तनको भव-मुक्त हरैं
जनके सब छेश महान ॥ ४ ॥

टी०—जो सुजान सब छलछिद्रोंको छोड़ कर अहर्निशि श्रीमहेश्वर
को भजते हैं वे इस संसारमें धन्य हैं क्योंकि शिवजीकी
भजनद्वारा सन्तोंके सदृश उनको अनेक जन्मोंकी सुकृतका
फल मिलता है । वेद पुराणादि सद्ग्रन्थोंसे प्रमाणित होता है
कि भगवान् सदाशिवजी भक्तों पर शीघ्र ही प्रसन्न होते हैं
और उनके सहत् क्लेशोंको हरण करके उनको (भवमुक्त)
जन्ममरणसे मुक्त कर देते हैं । यह 'जु आठ' अर्थात् आठ
जगणका 'सुक्तहरा' वृत्त है ॥

दुर्मिल (स स स स स स स स)

सबसों करि नेह भजो रघुनन्दन राजत हीरन मा-
ल हिये । नवनीलवपू कल पीत झंग्गा झलकैं अलकैं
धुँधुरारि लिये ॥ अरविन्दसमानन रूप-मरन्द अन-
न्दित लोचनभृङ्ग पिये । हियमें न बस्यो अस दुर्मि-
ल बालक तो जगमें फल कौन जिये ॥ ५ ॥

टी०—सकल प्राणीमात्रोंसे स्नेहगर्भित व्यापार रख कर अर्थात्

सर्वभूतात्मभूतात्मा ही कर रघुनन्दन श्रीरामजीकी, जिनके हृदय पर हीरोकी माला विराजती है, जिनका शरीर सद्य-विकसित नीलकमलके समान है, जो पीला भाङ्गा पहिने हैं, और जिनका सुख कमल और रूप मरन्दके समान है कि जिस भक्तोंके नेत्ररूपी भ्रमर आनन्दपूर्वक पान करते हैं, भजो । नर जन्म पा कर उक्त गुणविशिष्ट बालक जो बड़ी कठिनतासे प्राप्त होता है यदि हृदयमें विराजमान न हुआ तो जगमें जन्म लेनिका क्या फल ? अर्थात् कुछ भी नहीं । यह 'सवसीं' अर्थात् आठ सगणका 'दुर्मिल' वृत्त है ।

राम (ज ज ज ज ज ज य)

जु लोक यथामति वेद पढ़ें सह आगम औ दश
आठ सयाने । वनें महिमें शुक शारद शेष गणेश म-
हा बुधिमन्त समाने ॥ चढ़ें गजवाजि सु पीतस आदि
जु वाहन राजनकेर बखाने । लहें भलि वाम अरु
धन धाम तु काह भयो विनु रामहि जाने ॥ ६ ॥

टी०—यदि लोग यथामति वेदशास्त्र और अष्टादश पुराण पढ़के पृथ्वी पर शुकशारदगणेशादि महाबुद्धिमानोंके समान सयाने बने लें तो ही हाथी घोड़े नरवाहनादि जो राजालोगोंके वाहन हैं उनपर भी आरुढ़ हुए, सुन्दर स्त्री और वहुत धन भी प्राप्त किया तथापि बिना रामके जाने क्या हुआ अर्थात् रामके प्रेम बिना इतना सब वैभव व्यर्थ है । यह 'जु लोक य'

अर्थात् सात जगण और एक यगण का 'वाम' सवैयावृत्त है।
इसे मञ्जरी, सकारन्द और माधवी भी कहते हैं ॥

आभार (त त त त त त त)

तू अष्ट जामैं जपै रामको नाम रे शिष्य ! दे त्यागि
सारे वृथा काम । तेरी फलै कामना हीयकी ओ विना
दाम तू अन्त पावै हरीधाम ॥ बोल्यो तबै शिष्य आ-
भार तेरो गुरुजी न भूलौं जपौं आठहू याम । हेराम
हे राम हे राम हे राम हे राम हे राम हे राम ॥७॥

टी०—कोई गुरुजी शिष्यसे कहते हैं—हे शिष्य ! तू सकल वृथा
कामोंकी छोड़ कर आठों याम मङ्गलकारी श्रीरामके नामकी
जपा कर । उसके जपनेसे तेरे अन्तःकरण की कामना पूर्ण
होगी अर्थात् तू विना दाम हरिके धामको प्राप्त होगा । इस
सदुपदेशको श्रवण कर शिष्यने कहा हे गुरुजी ! मैं आपकी
(आभार) उपकारको न भूलूंगा और अष्ट याम 'हे राम हे
राम' जपा करूँगा । यह 'तू अष्ट' अर्थात् आठ तगण का
'आभार' वृत्त है ।

अरसात (भ भ भ भ भ भ भ र)

आसंत रुद्रजु ध्याननिमें पुनि सारसुती जस बा-
निन मानिये । नारद ज्ञानिन पानिनि गङ्ग सु रानिन
में विकटोरिया मानिये ॥ दानिनमें जस कर्ण बड़े तस
भारत-अम्ब खरी उर आनिये । बेटनके दुख मेटनमें
कबहूँ अरसात नहीं फुर जानिये ॥ ८ ॥

टी०—जैसे धानियोंमें श्रीमहादेवजी, बाणियोंमें सरस्वती, ज्ञानियोंमें नारद, जलोंमें गङ्गा श्रेष्ठ प्रतीत होती हैं वैसे ही रानियोंमें श्रीमती राजराजेश्वरी महाराणी विकीरियाजी हैं । जैसे दानियोंमें कर्ण श्रेष्ठ गिने जाते हैं वैसे ही दानशीलता में साक्षात् भारतजननी उक्त महाराणीजीको जानो वे अपने पुत्र भारतवासियोंके दुःख मिटानेको कभी भी आलस्य नहीं करतीं इस बातको सत्य ही मानो । यह 'भासत क' अर्थात् सात भगण और एक रणका 'अरसात' वृत्त है ॥

अथातिवृत्तिः ।

(पञ्चविंशत्यक्षरावृत्तिः ३३५५४४३२)

सुन्दरी (स स स स स स स ग)

सबसों गहि पाणि मिले रघुनन्दन भेंटि कियो सब-
को सुखभागी । जवहीं प्रभु पाँव धरे नगरीमहँ ता-
छिनतें विपदा सब भागी ॥ लखिके विधुपूरण आनन
मातु लह्यो मुद जों मृत सेवत जागी । यहि औसर
की हर सुन्दरि मूरति राखि जपैं हियमें अनुरागी ॥१॥

टी०—श्रीरामचन्द्रकी अयोध्यावासी सब लोगोंसे आलिङ्गनपूर्वक
मिले और सबको अपनी भेंट दे कर सुखी किया । प्रभुके पुरी
में पाँव धरते ही अयोध्याकी सम्पूर्ण विपदा लयकी प्राप्त
हो गई । पूर्ण चन्द्रके समान पुत्रका मुख देख कर माताको
ऐसा आनन्द हुआ कि जैसा मृतके सोतेहुएके समान उठ
बैठनेसे होता है । श्रीमद्रामचरणारविन्दोंके अनुरागी महेश-

जीने इनकी इसी प्रसङ्गकी सुन्दरि मूर्त्तिको हृदयमें धारण किया है और इसीका विमर्षण किया करते हैं । यह 'सब सों ग' अर्थात् आठ सगण और एक गुरुका 'सुन्दरी' वृत्त है । इसे मल्ली और चन्द्रकला भी कहते हैं ।

क्रौञ्च (भ स स भ न न न ग)

भूमि सु भौना चौगुन राजें बसति सुमतियुत जहें
नर अरु ती । शील सनेहा औ नय विद्या लखि तिनकर
मन हरषत धरुती ॥ पूत जहां है मानत माता जनक
सहित नित अरचन करि कै । नारि सुशीला क्रौञ्च समाना
पति वचननि सुन तिय-तनु धरि कै ॥ २ ॥

टी.—जिस गृहमें माता पिताका अर्चन और सन्मान करनेवाला पुत्र वैसे ही (क्रौञ्च) बकसमान दत्तचित्तसे पति की आच्चा-पालन करनेहारी स्त्री वास करती है, वह सुन्दर गृह इरुः पृथ्वी पर, उसमें वास करनेवाले स्त्री पुरुषोंके सुमतियुक्त होनेके कारण, चतुर्गुणित शोभाको प्राप्त होता है । उसमें वास करनेवाले स्त्री पुरुषोंके शील, सनेह, न्याय, विद्यादि सद्गुणोंको देख कर पृथ्वी मनमें हर्षको प्राप्त होती है । यह 'भ स स भ न न न ग' का 'क्रौञ्च' वृत्त है ॥

अथोक्तः ।

(षड्विंशत्यक्षरावृत्तिः ६७१०८८६४)

सुख (स स स स स स स ल ल)

सबसों ललुआ ! मिलि कै रहिये मम जीवनमूरि !

सुनो मनमोहन । इमि बोधि खवाय पियाय सखा
सँग जाहु कहै ललना ! वन जोहन ॥ धरि मातु र-
जायसु सीस हरी नित यामुनकच्छ फिरैं सह गो-
पन । इहि भाति हरी यसुदा उपदेशहिं भाषत नेह
लहैं सुख सो धन ॥ १ ॥

टी०—श्रीमती यशोदाजी श्रीकृष्णसे कहती हैं— हे ललुआ !
हे मेरे जीवनसूरि ! हे मनमोहन ! साथके सब ग्वालवालोंसे
मिल कर रहा करो । इस प्रकार नित्यप्रति समझा बुझा कर
कहती थीं कि हे ललना ! सखाओंके साथ वनशोभा देखने
को जाया करो हरि भी माताकी आज्ञाको सीस पर धारण
कर अर्थात् उसे मान कर सखा गणोंके साथ यमुनातीर
पर फिरने जाया करते थे । इस प्रकारके श्रीमती यशोदाजी
के कृष्णोपदेशको जी लोग स्नेहपूर्वक वर्णन करते हैं और
सुखको प्राप्त होते हैं वे धन्य हैं । यह 'सबसों ललु' अर्थात्
आठ सगण और दै लघुका 'सुख' संज्ञक वृत्त है । इसे कुन्द-
लता भी कहते हैं ॥

भुजङ्गविजृम्भित (म म त न न न र स ल ग)

मो मीता ! नैना नारीसों लगतहिं जप तप शुभ
नेम नाशहिं पाव रे । कामा क्रोधा ईर्षा याही अघ ज-
नकनिकर बहु मोह औ मद भाव रे ॥ त्यागौ यों ती
संगा-इच्छा दुखद नसत सब शुभ कीर्ति पूरव संचि-

ता । प्यारी नागी क्रीड़ा भीनो निरखत गरुड जिमि
तजे भुजङ्गविजृम्भिता ॥ २ ॥

टी०—हे मेरे मित्र ! (नैना नारीसों लगतहिं) स्त्रीसे प्रीति हाते ही जप तप नियमादि शुभ कर्म नाशको प्राप्त हो जाते हैं । इसका कारण यही है कि पापोत्पादक काम, क्रोध, मोह, मद, ईर्ष्या इत्यादिकोंका जो समूह है, वही इसे अर्थात् स्त्रीको धारा लगता है । स्त्रियोंमें आसक्ति वा आसक्तिकी द्रव्या दुःखका मूल है और पूर्वमें संचित कीचुड़ै सम्पूर्ण कीर्तिको नष्ट करती है, इसको ऐसा छोड़ कि जैसे भुजङ्गप्यारी नागीके साथ क्रीड़ामें आसक्त रहने पर भी गरुडको देखते ही अपनी सकल (विजृम्भिता) चेष्टाओंको छोड़ देता है । यह 'म स त न न र स ल ग' का 'भुजङ्गविजृम्भित' वृत्त है ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे वर्णसमान्तर्गतसाधारणवृत्तवर्णनम्

नाम नवमो मयूखः ॥ ६ ॥



अथ वर्णसमांतर्गतदण्डकप्रकरणम् ।

जिस पद्यके प्रत्येक पदमें वर्णसंख्या २६ से अधिक हो उसे दण्डक कहते हैं । दण्डकके कई भेद हैं । उनमेंसे मुख्य २ नीचे दृश्यते जाते हैं ॥

दण्डक

१	चाण्डोष्टिप्रपात (न २ + २)
२	सत्तमांतर्गलीलाकार (२६ वा अधिक)
३	कुसुमस्रवक (स ६ वा अधिक)
४	सिंहविक्रीड (य ६ वा अधिक)
५	त्रिमंगी (न ६ स स भ स ग)
३०	नीलचक्र
३२	सुधानिधि
३८	महीधर
३९	मनहर
३९	जनहरण
३९	कलाधर
३२	रूपघनाक्षरी
३२	जलहरण
३२	उमरुं
३२	क्षपाण

सू०—दण्डकोंमें आद्योपान्त मंगलाका प्रयोग नहीं होता, शेष वर्णोंका ही सकता है ॥

१ चण्डवृष्टिप्रपात (न न र ७)

ल०—न नर ! गिरिधरै तजै भूलि कै राख जो चण्ड-
वृष्टिप्रपाताकुलै गोकुलै ॥

टी०—प्रचण्ड जलवृष्टिसे अति व्याकुल गोकुलकी रक्षा जिन गिरिधारी श्रीकृष्णजीनि की, हे नर ! उन्हें भूलके भी मत तज अर्थात् सदा सर्वकाल उनका भजन किया कर । यह 'न न र गिरि' अर्थात् दो नगण और सात रगणका 'चण्डवृष्टिप्रपात' संज्ञक ढगडक है । इसका नाम चण्डवृष्टिप्रयात भी है ॥

उ०—भजहु सतत रामको रामको रामको रामको रामको रामको रामको । तजहु असत कामको काभको कामको कामको कामको कामको कामको कामको ॥ गुनहु सरस नामको नासको नासको नामको नासको नामको नामको । लहहु परस धासको धासको धासको धासको धासको धासको धासको ॥

सू०—इसी वृत्तके आगे एक एक रगण अधिक रखनेसे जो वृत्त बनते हैं वे सब 'प्रचित' कहाते हैं । प्रचितके भी रगणोंके न्यूनधिक्यके कारण अनेक उपभेद होते हैं उनमेंसे मुख्य २ नीचे दर्शाये जाते हैं । यथा ।

नगण २ + रगण ८ का अर्ण

नगण २ + रगण ९ का अर्णव

नगण २ + रगण १० का व्याल

नगण २ + रगण ११ का जीमूत

नगण २ + रगण १२ का लीलाकर

नगण २ + रगण १३ का उद्दाम

नगण २ + रगण १४ का शंख इत्यादि

परन्तु श्रीसङ्गहादासजी और श्रीकीदारभट्टजीके मतानुसार दो नगणके पद्यार्त् सात वा सातसे अधिक यगणोंका प्रयोग करनेसे दगडवृष्टिप्रयात तथा प्रचितके ऊर्ध्वकथित उपभेद होते हैं । इन दो नगण और सात वा सातसे अधिक यगणों के दगडकोंका दूसरा नाम 'सिंहविक्त्राल' भी है ॥

२ मत्तमातङ्गलीलाकर (१६)

ल०—रानि ! धीरै धरौ आजु मान्यो खरो कंसको
मत्त मातङ्गलीला करी श्यामने ॥

टौ०—हे रानी ! अर्थात् हे यशोदारानी धीर धरो, आज तुम्हारे श्यामने खेलते २ कंसका कुवलियासंज्ञक मत्त हाथी-यथार्थमें मार डाला । यह 'रा निधि' अर्थात् ६ रगणका 'मत्त-मातङ्गलीलाकर' दगडक है । यथा ।

उ०—योग ज्ञाना नहीं यज्ञ दाना नहीं वेदमाना नहीं या कलौ माहिँ मीता ! कहूँ । ब्रह्मचारी नहीं दगडधारी नहीं कर्म-कारो नहीं है कहा आगमें जो छहूँ ॥ सच्चिदानन्द आनन्द-के कन्दको छाँड़िके रे सतीमन्द ! भूलो फिरै ना कहूँ । या-हिते हौं कहीं ध्याइले जानकीनाहको गावहीं जाहि सानन्द वेदा चहूँ ॥

सू०—जिस दगडकमें ६ से अधिक रगण हों वह भी मत्तमातङ्ग-लीलाकरके भेदोंमें गिना जाता है ॥

३ कुसुमस्तवक (स ६ वा अधिक)

ल०—सुरसै पिय कै अलिपंक्ति भजै सखिरी ! तजि
वृक्षलताकुसुमस्तवके ॥

टी०—री सखी ! देख यह भ्रमरावली वृक्षलतादिकोंकी (कुसु-
मस्तवक) पुष्पगुच्छोंका सुरस रस पी कर उन्हें छोड़ चली
जा रही है । यह 'सुरस' अर्थात् ६ सगणका 'कुसुमस्तवक'
संज्ञक दण्डक है । यथा—

उ०— भजिये हरको हरको हरको हरको हरको हरको हरको
हरको । गहिये सतकी सतकी सतकी सतकी सतकी सतकी
सतकी सतकी ॥ तजिये मदकी मदकी मदकी मदकी मदकी
मदकी मदकी मदकी । लहिये सुखको सुखको सुखको सु-
खको सुखको सुखको सुखको सुखको ॥

सू०—६ से अधिक सगणोंका प्रयोग करनेसे जो दण्डक सिद्ध
होते हैं वे सब कुसुमस्तवकके उपभेद माने जाते हैं ।

४ सिंहविक्रीड (य ६ वा अधिक)

ल०—यचौ पंच इन्द्री लगा सीय देवी सहस्राननै
मार जो सिंहविक्रीडवारी ॥

टी०—सिंहवत् क्रौडा करनेहारी जिन आदिशक्ति जगज्जननी
श्रीसीताजी महाराणीने सहस्रानन दैत्यको मारा उन्हींसे
निजैष्ट सिद्ध्यर्थ पांचों ज्ञानेन्द्रियां लगा कर याचना करी । यह
'यचौ पंच' अर्थात् ६ यगणका 'सिंहविक्रीड' दण्डक है । यथा

उ०—नहीं शोक मोहीं पिता मृत्युकीरो लहे पुत्र चांरी किये यज्ञ
केतौ पुनीता । नहीं शोक मोहीं लखी जन्मभूमी रमानाथ-
केरी अयोध्या भई जा अमीता ॥ नहीं शोक मोहीं कियो
जाउ माता भलेई कहैं मोहिँ मूढ़ा सुवडी न मीता । जरै

नित्य छाती यहै एक गीकां विना पादत्राणा उदासी फिरै
राम सीता ॥

सू०—६ यगणोंसे जिन दगडकोंमें अधिक यगण हों वे सब सिंह-
विक्रीडके उपभेद माने जाते हैं ॥

५ त्रिभङ्गी (६ न स स भ म स ग)

ल०—न निसर ससि भभि सगरि लखत साखि ससि-
वदनी ब्रजकी रंगन रंगी श्याम त्रिभंगी ॥

टी०—राममण्डलकी रात्रिमें चन्द्रको अचल देख किसी कविकी
उक्ति—चन्द्रमा सब ब्रजकी सखियोंको त्रिभंगी श्यामके प्रेम
में मग्न और चन्द्रमुखी देख कर भ्रमित हुआ कि सत्य चन्द्र
में हूं या ये ब्रजगीप ललनायें हैं इसी सोचमें अपने स्थानसे
न हिला अर्थात् अचल रहा। यह न निसर = १ नगण + निसर
पांच नगण अर्थात् ६ नगण सगण सगण भगण सगण सगण
और एक गुरुका 'त्रिभंगी' दगडक है। यथा छन्टागांवे—

ल०—सजलजलद तनु लसत विमल तनु अमकन ल्यों भलको
है उमगा है बुन्द मनौ है । भुव युग मटकनि फिरि फिरि
लटकनि अनिसिष नैननि जाहे हरषा है है मन मोहै ॥ पगि
पगि पुनि पुनि खिन खिन सुनि सुनि सटु सटु ताल सटुंगी
सुरचङ्गी भौंभ उपङ्गी । बरहि बरहि अरि अमित कलनि करि
नचत अहीरन संगी बहुरंगी लाल त्रिभंगी ॥

६ अशोकपुष्पमञ्जरी (ग ल यथेच्छ)

ल०—गौ लिये निजेच्छया फिरै गुपाल घाट घाट
ज्यों अशोक पुष्प मंजरी मलिन्द ।

टी०—रोज रोज श्रीकृष्ण गौर्झोंकी ले कर स्थान २ पर चरानिके हेतु अशोकपुष्पसंजरीके अर्थ मलिन्दके समान फिरा करते थे । 'गौ लिये निजच्छया' अर्थात् गुरु लघुका यथेच्छ न्यास करनेसे यह 'अशोकपुष्पसञ्जरी' संज्ञक दण्डक सिद्ध होता है परन्तु प्रत्येक चरणमें वर्ण संख्या समान रहे । यथा ।

उ०—सत्य धर्म नित्य धारि व्यर्थ काम सर्व डारि भूलि कै करै कदा न निन्द्य काम । धर्म अर्थ काम मोक्ष प्राप्त होय मीत ।
तोहिँ सत्य सत्य अन्त पाव राम धाम ॥ जन्म बार बार मा-
नुषी न पाइये जपौ लगाय चित्त अष्ट जाम सत्य नाम । राम
राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम
राम ॥

सू०—कवियोंने अशोकपुष्पसञ्जरीके निम्नलिखित भेद और मान लिये हैं ॥

नीलचक्र (३० वर्ण गुरु लघु)

ल०—रोज पञ्च प्राण गारि ग्वाल गोदसा विचारि
गाय जक्तनाथ राज नीलचक्र द्वार ॥

टी०—प्रतिदिन पंचप्राणोंको गारि कर ग्वाल और गौर्झोंकी सु-
गतिको ध्यानमें ला कर श्रीजगन्नाथजीका, जिनके द्वार पर
नीलचक्र विराजता है, गुण गान किया करो । यह 'रोजपंच'
अर्थात् रगणजगणात्मक पांच समूहोंका 'नीलचक्र' दण्डक
है । अथवा 'ग्वाल गो दसा' अर्थात् गुरु लघु (गो ५ + दसा
१०) १५ बार क्रमपूर्वक आनेसे 'नीलचक्र' दण्डक सिद्ध
होता है । यथा काव्यसुधाकरे—

उ०—जानिकै समै भुवाल राम राज साज साजि ता समै अ-
काज काज कैकरै जु कीन । भूपतें हराय वैन राम सीय
वश्युक्त वोलके पठाम वेगि काननै सु दीन ॥ ह्वै रह्यो वि-
लापको कलापसो सुनो न जाय राय प्राण भी प्रयाण पुत्रके
विहीन । आयके भरत्य ह्वै विहालकै नृपाल कर्म सोधि चित्र-
कूट गौन ह्वै तनै मलीन ॥

सुधानिधि (३२ वर्ण गुरु लघु)

ल०—रोज प्राण नन्दपुत्र पै लगाय गोपि ग्वाल
लोक भक्ति दिव्य कीन है सुधानिधी समान ।

टी०—वृजके ग्वाल और गोपियोंके नन्दजीके पुत्र श्रीकृष्णजी पर
पांचों प्राण लगा कर लोकोंमें भक्तिको चन्द्रवत् प्रकाशित
कर दिया । यह 'रोज प्राण नन्द' अर्थात् रगण जगणके पांच
ससूहोंका और 'नन्द' एक गुरु लघुका 'सुधानिधि' दण्डक
है । अथवा 'ग्वाल लोक भक्ति' अर्थात् १६ वार क्रमसे गुरु लघु
आनेसे सुधानिधि दण्डक सिद्ध होता है । यथा काव्यसुधाकरे

उ०—का करै समाधि साधि का करै विराग जाग का करै अनेक
जोग भोगइ करै सु काह । का करै समस्त वेद औ पुरान
शास्त्र देखि कोटि जन्म लीं पढ़ै मिलै तज कछू न थाह ॥
राज्य लै कहा करै सुरेश औ नरेश ह्वै न चाहिये कहूं सुदुःख
होत लोक लाज मांह । सांत द्वीप खण्ड नौ त्रिलोक सम्पदा
अपार लै कहा सु कीजिये मिलै जु आप सीयनांह ॥

७ अनङ्गशेखर (ल ग यथेच्छ)

ल०—लगा मनै अनङ्गशेखरै सु कौशलेश पाद वेद
रीति रामहीं विवाहि जानकी दर्ई ।

- टी०—(अनङ्ग) विदेहजीने निज (शिखर) शिरचाणको सुचिततापूर्वक कौश्लेश दशरथजीके पावों पर लगा अर्थात् उन्हें प्रणाम कर वेदविहित रीतिसे श्रीरामचन्द्रजीको जानकी विवाह दी । यह 'लगा मनै' अर्थात् मनमाने लघु गुरुके न्याससे 'अनङ्गशिखर' दंडक सिद्ध होता है । यथा लक्ष्मणशतकी
- उ०—गरज्जि सिंहनादलों निनाद मेघनाद वीर क्रुद्धमान सानसों
क्रशानु वान छंडियं । लखी अपार तेज धार लखनौ कुमार
वारि वानसों अपार धार वर्षि ज्वाल खंडियं ॥ उड़ाय मेघ
मालकों उताल रक्षपाल वाल पौन वान अच घाल कौस
जाल दंडियं । भयो न होत होयगो न ज्यों अमान इन्द्रजीत
रामचन्द्र बन्धुसों कराल युद्ध मंडियं ॥

सू०—इसके प्रत्येक चरणमें वर्णसंख्या समान रहनी चाहिये
इसे दिनराचिका और महानाराच भी कहते हैं ॥

महीधर (ल ग १४)

ल०—जरा जरा जु रोज रोज गगड़ के सुकाव्यशक्तिरत्न
लागि याचिये महीधरै ।

- टी०—रोज रोज प्रभुके गुणगान द्वारा सुकाव्यशक्तिरूपी रत्नकी प्राप्ति-
के अर्थ श्रीप्रभुसे याचना करो । यह 'जर जर जर जर ज ग'
का अथवा 'रत्न लागि' १४ लघु गुरुका 'महीधर' दंडक है ।
- उ०—सदा सुसंग धारिये नहीं कुसंग सारिये लगाय चित्त सीख
मानिये खरी । वथा न जन्म मानुषीहिँ खोइये सुकाल पाय
धाव ईश नित्य वन्दना करी ॥ तजौ असत्य काम धारि सत्य

नास अन्त पाव परमधाम जी जपै सबै घरी । हरी हरी हरी
हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी ॥

८ मुक्तक ।

ल—अक्षरकी गिनती यदा, कहुं कहुं गुरु लघु नेम ।
वर्ण दृत्तमें ताहि कवि, मुक्तक कहैं सप्रेम ॥

(भिखारीदास)

टी०—मुक्तक उसे कहते हैं जिसके प्रत्येक पादमें केवल अक्षरोंकी संख्याका ही प्रमाण रहता है अथवा कहीं २ गुरु लघुका नियम होता है । इसे मुक्तक इसलिये कहते हैं कि यह गणोंके बन्धनसे मुक्त है । इसके सात भेद पाये जाते हैं ॥

१ मनहर ।

ल—भासदिन गयेहु न मनहर प्राणनाथ आये जु पै
लंक मोहिं जियत न पावहीं ।

टी०—श्रीमती सीताजी हनुमानजीसे कहती हैं हे हनुमान ! यदि सुभग प्राणनाथ एक महीनेके भीतर लंकाको आ मुझे सनाथ न करेंगे तो निश्चयपूर्वक मुझे जीती न देखेंगे । 'भास दिन ग' = ३० + १ गुरु अर्थात् ३१ वर्ण हों परन्तु अन्तका वर्णगुरु हो शेषकेलिये गुरु लघुका नियम नहीं है ३१ वर्णमेंसे पहिले (हर ११ + प्राण ५) १६ पर विश्राम होगा और फिर शेष १५ पर जानों । इसको कवित्त वा घनाक्षरी भी कहते हैं । यथा ॥

उ०—आनन्दकी कन्द जगज्यावन जगतवन्द दशरथनन्दकी निवा-

हेई निवहिये । कहैं पदमाकर पवित्रपन पालिवेकी चोर
चक्रपाणिके चरित्रनको चहिये ॥ अवधविहारीके विनादनमें
वीधि वीधि गीध गृह गीधके गुणानुवाद गहिये । रैन दिन
आठों जाम राम राम राम सीताराम सीताराम सीता-
राम कहिये ॥

सू०—मलहरके अन्तमें प्रायः तीन गुरुका एक पूर्ण शब्द नहीं
पाया जाता ।

२ जनहरण (३० + १ ग)

ल०—लघु सब गुरु इकतिसरनमन धर भजु भजु
नर प्रभु अघ जन हरणा ॥

टी०—हे नर ! तू देही बातें सत्य मान एक तो यह कि इस
संसारमें जितने प्राणी हैं सब छोटे हैं और दूसरी यह कि
सबसे बड़ा केवल एक परमेश्वर है वही जनोंके पापोंको ह-
रण करनेहारा है अतएव वही भजनीय है । यह ३० लघु
और अन्तमें १ गुरु सहित ३१ वर्णका 'जनहरण' दण्डक है ॥

उ०—जय जय यदुपति नरहरि कमलनयन कहि कलिमल हर
गिरिधरये । जगपति हरि जय जय गुरु जग जय जय मन-
सिज जय जय मन हरये ॥ जय परम सुमतिधर कुमतिन
छयकर जगत तपत हर नरवरये । जय जलज सदृश छवि
सुजन-नलिन रवि पढ़त मुकवि जस जग परये ॥

सू०—किसी २ कविने इसको जलहरण लिखा है वह प्रमाणिक
नहीं है ॥

३ कलाधर (गुरु लघु-१५ + ग)

ल०—ग्वाल सात आठ गोपि कान्ह संग खेल रास
भानुजा सु तीर चारु चांदनी कलाधरा ।

टी०—चन्द्रकी सुन्दर चांदनी रातमें जमुनाके सुन्दर तीर पर श्री-
कृष्ण गोपियों और सात आठ ग्वालोंके साथ रास खेलते हैं ।
यह 'ग्वाल सात आठ गो' अर्थात् क्रमपूर्वक १५ गुरु लघु और
अन्तमें एक गुरुका 'कलाधर' संज्ञक दण्डक है ॥ यथा
काव्यसुधाकर—

उ०—जायके भरत्य चित्रकूट राम पास वेगि हाथ जोरि दीन ह्ये
सुप्रेमतें विनै करी । सीय तात मात कौशिला वशिष्ठ आदि
पूज्य लोक वेद प्रीति नीतिकी सुरीति ह्ये धरी ॥ जान भूप
वैन धर्मपाल राम ह्ये सबेच धीर दे गँभीर बभ्रुकी गलानि-
की हरी । पादुका दर्ई पठाय औधको समाज साज देख नैह
राम सीयके हिये कृपा भरी ॥

४ रूपघनाचरी (३२ वर्ण-लांत्य)

ल०—राम राम राम लोक नाम है अनूप रूप घन
अक्षरी है भक्ति भवको हरत जाल ।

टी०—इस संसारमें रामनाम अनुपम है । इस नामीके रूपकी
(घन) अविरल एवं (अक्षरी) अक्षरहित भक्ति जनोंके (भव-
जाल) आवागमनको हरण करनेके लिये कारण भूत होती
है । पिंगलार्थ—इसके प्रत्येक चरणमें 'राम ३ + राम ३ +
राम ३ + लोक ७ + भक्ति ६ + भव ७' सोलह सोलह वर्णोंके

विश्रामसे ३२ वर्ण हीते हैं । यह वृत्तिसाजरी अन्य लघुका 'रूपघनाजरी' संज्ञक कवित्त है । यथा कृन्दविनादे—

उ०—रूपक घनाजरीहुं गुरु लघु नियम न वृत्तिस वरन कर रचिये
चरन चारि । कीजे विसराम आठ आठ आठ आठ करि
अन्त एक लघु धरि त्यों नियम करि धारि ॥ या विधि स-
रस भाग कृन्द गुरु सैसनाथ कीनी कविराजनके काज वृद्धि-
तें विचारि । पद्य सिंध तरिवेको रचनाके करिवेको पिङ्गल
बनायो भेद पढ़ि सुद्धिकै सुधारि ॥

५. जलहरण

ल०—वसु जाम रच्छ गोपिग्वाल जलहरन के भजु
नित नव गिरिधाराके युगल पद ।

टी०—असरनाथ इन्द्रके व्रज पर कुपित हो पंचंड दृष्टि करने पर
जिन गिरिधारी श्रीकृष्णजीने उस दृष्टिको हरण कर तत्रस्थ
गोपीग्वालोंकी रक्षा की उन्हींके युगल पदोंका भजन आठों
याम करना समुचित है । यह ३२ वर्णोंका 'जलहरण' द-
गडक है । पहिले वसु ८ + जाम ८ = १६ पर यति और फिर
नव ९ + गिरि ७ = १६ पर यति होती है 'युगलपद' अर्थात्
प्रत्येक पदके अन्तमें दो लघु होते हैं । यथा काव्यमुधाकरे—

उ०—भरत सदा ही पूजे पादुका उते सनेस इते राम सौय बंधु स-
हित सिधारे वन । सूपनखा के कुरूप मारि खल भुंड घने
हरी दससीस सीता राघव विकल मन ॥ मिले हनुमान ल्यों
सुकुण्डसों मितार्डे ठानि वाली हति दीना राज सुग्रीवहिँ

जानि जन । विपिनविहारी केसरीकुमार सिंधु नांधि लङ्क
जारि सीय सुधि लायो मोद बाढो तन ॥

६ डमरू

ल०—हर हर सरस रटत नस मल सब डम डम डमरू
वजत शिव वम वम ।

टी०—जिन वसोलानाथके डमरूसी कल्याणकारी 'डमडम' शब्द
प्रगट होता है उनको जी सरस अर्थात् भक्ति रसमें लीन हो
कर रटता है उसके सब (मल) अघ नाश हो जाते हैं ।
यह 'हर ११ + हर ११ + सर ५ + सर ५' = ३२ वर्णोंका
डमरू दंडक है । 'ल सब' अर्थात् इसके वत्तीसों वर्ण लघु
होते हैं । यथा रामविलासरासायणे—

उ०—रहत रजत नग नगर न गज तट गज खल कल गर गरल
तरल धर । नगन तगन यश सघन अगन गन अतनहतन
तन लसत न कत कर ॥ जलजनयन कर चरन हरन अघ
सकल अचर चर अचर खचर तर । चहत कृनक जय लहत
कहत यह हर हर हर हर हर हर हर हर ॥

सू०—श्रीयुत भिखारीदासजी तथा वैजनायजीने इसीको जलहरण
माना है ॥

७ कृपाण वा किरपान

ल०—ब्रसु वरन वरन धरि चरन चरन कर-समर
वरन गल धरि किरपान ।

टी०—सब मनुष्योंको उचित है कि बहुत सावधानीपूर्वक अपने २ वर्षाश्रम धर्मोंका यथावत् पालन करें और श्रेष्ठोंसे कलह न करें क्योंकि श्रेष्ठोंसे कलह करना माना अपने हाथों अपने गले पर कृपाणाघात करना है । पिङ्गलार्थ—प्रत्येक चरणमें (वसु ८ × वरण ४) आठ २ के विश्रामसे ३२ वर्षों का प्रयोग करनेसे 'किरपाण' वा 'कृपाण' संज्ञक दंडक बनता है । इस वृत्तमें आठ आठ वर्षों पर यति हाती है और ३ यमक हाते हैं अन्तमें 'गल्ल' अर्थात् गुरु लघु हाते हैं । प्रायः इस वृत्तमें वीररस वर्णन किया जाता है । यदि इसके प्रत्येक चरणके अन्तमें नकारका प्रयोग किया जाय तो अतीव ललित एवं कर्णसधुर होता है । यथा जानकीसमरविजये—

उ०—चली है के विकराल महाकालहूकी काल किये दीज दृग लाल धाड़ रन समुहान । जहाँ क्रुद्ध है महान युद्ध करि घमसान लोथि लोथि पै लदान तड़पी ज्यों तड़ितान ॥ जहाँ ज्वाल कोट भानके समान दरसान जीव जंतु अकुलान भूमी लागी यहरान । तहां लागे लंहरान निसिचर हू परान वहां कालिका रिसान भुकि भारी किरपान ॥

सू०—मनहर, रूपवनाक्षरो, जलहरण और कृपाण वर्णदंडकांतर्गत मुक्तकके मेटों मेंसे हैं । इसी कारण ग्रंथारभमें जो दोहा साचिक और वर्णदंडकी मेटों का दिया गया है, उसके नियमसे ये मुक्त हैं । इनकी उस नियमके प्रतिघर्षों में (Exception) समझो ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे वर्णसमान्तर्गतदंडकवर्णननाम दशमो मयूखः ॥१०॥

अथ वर्णाईसमप्रकरणम् ।

जिस वर्ण वृत्तके पहिले और तीसरे चरणमें और दूसरे और चौथे चरणमें समता हो उसे अर्द्धसमवृत्त कहते हैं ॥

अर्द्धसमवृत्तीकी संख्या जाननेकी यह रीति है कि जहां चारों चरणमें अक्षर सम हों तो प्रथम चरणके वर्णोंकी समसंख्या को दूसरे चरणके वर्णोंकी समसंख्यासे गुणा करो और जो गुणनफल आवे उसमेंसे उसी गुणनफलकी मूलराशि घटा दो जो शेष रहे उसीको उत्तर जानो । और जहां समविषम चरणोंमें भिन्नाक्षर हों वहां प्रथम चरणके वर्णोंकी समसंख्याको दूसरे चरणके वर्णोंकी समसंख्यासे गुणा करो जो गुणनफल आवे उसीको उत्तर जानो ॥ यथा—

(१) प्रतिपद समाक्षर अर्द्धसमवृत्त—

१ला चरण २रा चरण ३रा चरण ४था चरण ।

15 55 15 55 चरणभेद
२ २ २ २ वर्णसंख्या

दो वर्णोंकी समसंख्या ४ है अतएव

पहिलापद दूसरापद मूलराशि उत्तर
४ × ४ = १६ - ४ = १२

मूलराशि घटानेका यह अभिप्राय है कि मूलराशिकी संख्याके तुल्य इसमें ऐसे भेद आन पड़ते हैं कि जिनके चारों चरणोंके लक्षण समान होते हैं, जो समवृत्तीके भेदोंमेंसे हैं । अतएव वे अर्द्धसम नहीं हो सकते । यथा—

कोष्ठ १२ भेदोंका जो लिये गये । कोष्ठ ४ भेदोंका जो छोड़े गये ।

— श्रे	पहिला पद ।	दूसरा पद ।	तीसरा पद ।	चौथा पद ।	— श्रे	पहिला पद ।	दूसरा पद ।	तीसरा पद ।	चौथा पद ।
१	१५	५५	१५	५५	१	५५	५५	५५	५५
२	५१	५५	५१	५५	२	१५	१५	१५	१५
३	११	५५	११	५५	३	५१	५१	५१	५१
४	५५	१५	५५	१५	४	११	११	११	११
५	५१	१५	५१	१५	ऐसही और भी जानो ।				
६	११	१५	११	१५					
७	५५	५१	५५	५१					
८	१५	५१	१५	५१					
९	११	५१	११	५१					
१०	५५	११	५५	११					
११	१५	११	१५	११					
१२	५१	११	५१	११					

(२) समविषमपादभिन्नाक्षर अर्द्धसमवृत्तकी संख्या जाननेकी पहिली रीति

	पहिला चरण	दूसरा चरण	तीसरा चरण	चौथा चरण
रूप	SSS	SS	SSS	SS
वर्णसंख्या	३	२	३	२
समसंख्या	८	४	८	४

अब उक्त रीतिसे पहिले चरणकी समसंख्याको दूसरे चरणकी समसंख्यासे गुणा करो ।

८ × ४ = ३२ यही कुल भेद हुए । यथा—

भेद ।	१ चरण ।	२ चरण ।	३ चरण ।	४ चरण ।
१	५५५	५५	५५५	५५
२	५५५	१५	५५५	१५
३	५५५	५५	५५५	५५
४	५५५	११	५५५	११
५	१५५	५५	५५१	५५
६	१५५	१५	५५१	१५
७	१५५	१५	५५१	१५
८	१५५	११	५५१	११
९	५१५	५५	५१५	५५
१०	५१५	१५	५१५	१५
११	५१५	५५	५१५	५५
१२	५१५	११	५१५	११
१३	११५	५५	११५	५५
१४	११५	१५	११५	१५
१५	११५	५५	११५	५५
१६	११५	११	११५	११
१७	५५१	५५	५५१	५५
१८	५५१	१५	५५१	१५
१९	५५१	५५	५५१	५५
२०	५५१	११	५५१	११
२१	१५१	५५	१५१	५५
२२	१५१	१५	१५१	१५
२३	१५१	५५	१५१	५५
२४	१५१	११	१५१	११
२५	५११	५५	५११	५५
२६	५११	१५	५११	१५
२७	५११	५५	५११	५५
२८	५११	११	५११	११
२९	१११	५५	१११	५५
३०	१११	१५	१११	१५
३१	१११	५५	१११	५५
३२	१११	११	१११	११

समविषमपादभिन्नाक्षर अर्द्धसमवृत्तकी संख्या जाननेकी दूसरी रीति—विषम पादकी अक्षरोंकी संख्याको समपादकी अक्षरोंकी संख्यामें जोड़ दो जो योग आवे उसीकी सम संख्याकी तुल्य अर्द्ध-सम वृत्तकी सम्पूर्ण भेद होंगे । यथा—

विषम चरण सम चरण योग सम संख्या
वर्ण ३ + २ = ५ ३२

इसी प्रकार और भी जानो । प्रस्तारकी रीतिसे यदि सम्पूर्ण भेद निकालने बैठो तो असंख्य भेद प्रगट होंगे, परन्तु प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक और समयनाशक है और यथार्थमें इसकी न जाननेसे कोई विशेष हानि भी नहीं है । विद्यार्थियोंको सुख्य २ नियम ही जान लेना बस है ॥

दोहा—लघु गुरु चारों चरणमें, क्रमते मिलें समान ।

वर्ण वृत्त है अन्यथा, साञ्चिक छन्द प्रमान ॥

ग्रन्थके आरम्भमें यह दोहा दिया गया है । इस दोहेके अनुसार वर्ण वृत्तके लक्षण वर्णाङ्गसमवृत्तीके साञ्च सम २ और विषम २ पादोंमें ही मिलने चाहिये ।

अब इसकी आगे वृत्तीका वर्णन किया जाता है ।

१ वेगवती

जिस वृत्तके पहिले और तीसरे चरणमें तीन सगण और एक गुरु हो और दूसरे और चौथे चरणमें तीन भगण और दो गुरु हों उसे 'वेगवती' कहते हैं । यथा—

। । ५ । । ५ । । ५ ५ ५ । । ५ । । ५ । । ५ ५
गिरिजापति मो मन भायो । नारद शारद पार न पायो ॥
कर जोर अधीन अभाग । ठाढ़ भये वरदायक आगे ॥

२ भद्रविराट

जिस वृत्तके विषम पादोंमें तगण जगण रगण गुरु और सम पादोंमें सगण सगण जगण और दो गुरु हो उसे 'भद्रविराट' कहते हैं । यथा—

६ हरिणमुता

जिस वृत्तके विषम चरणोंमें तीन सगण और लघु गुरु हों और सम चरणोंमें नगण भगण भगण और रगण हों उसे 'हरिण-मुता' कहते हैं ॥ यथा—

। । ५ । । ५ । । ५ । ५ । । । ५ । । ५ । । ५ । ५ ।

हरिको भजिये दिन रात जू । ठरहिं तोर सबै भमजाल जू ॥

यह सीख जु पै मनमें धरौ । सहजमें भवसागरहीं तरौ ॥

७ अपरवत्त

जिस वृत्तके विषम चरणोंमें दो नगण एक रगण और लघु गुरु हों और सम चरणोंमें नगण जगण जगण और रगण हों उसे 'अपरवत्त' कहते हैं । यथा—

। । । । । । ५ । ५ । ५ । । । । । ५ । । । ५ । ५ । ५ ।

सब तज सरना गही हरी । दुख सब भागहिं पापहूँ जरी ॥

हरि विसुखन संग ना करी । जप दिन रैन हरी हरी हरी ॥

८ पुष्पिताया

जिस वृत्तके विषम चरणोंमें दो नगण एक रगण और एक यगण हो और सम चरणोंमें नगण जगण जगण रगण और गुरु हो उसे 'पुष्पिताया' कहते हैं । यथा—

। । । । । । ५ । ५ । ५ ५ । । । । ५ । । ५ । ५ । ५ ५

प्रभु सम नहिं अन्य कोइ दाता । सु धन जु ध्यावत तीन लोकचाता ॥

सकल असत कामना विहाई । हरि नित सेवहु मित्त चित्त लाई ॥

९ आख्यानिकी

जिस वृत्तके विषम चरणोंमें दो तगण एक जगण और दो

नर धन जगमहँ नित उठ नगपति कर जस वरनत अति
हितसों । तन मन धन सन जपत रहत तिहिँ कर भजन करत
भल अति चितसों ॥ किमि अरसत मन भजत न किमि तिहिँ
भज भज भज शिव धरि चितहीं । हर हर हर हर हर हर हर हर
हर हर हर हर हर कह नितहीं ॥

सू०—इसीकी उलटेको खञ्जा कहते हैं ॥

१२ खञ्जा

जिस वृत्तकी विषम पादोंमें ३० लघु और अन्तमें एक गुरु
होता है और सम पादोंमें २८ लघु और अन्तमें १ गुरु होता है
उसे 'खञ्जा' कहते हैं ॥ यथा—

नर धन धन जगमहँ नित उठ नगपतिकर जस वरनत अति
हितसों । तन मन धन सन जपत रहत तिहिँ भजन करत भल
अति चितसों ॥ किमि अरसत मन भजत न किमि तिहिँ भज
भज भज भज शिव धरि चितहीं । हर हर हर हर हर हर हर हर
हर हर हर हर कह नितहीं ॥

सू०—इसीकी उलटेको शिखा कहते हैं ॥

शिखा और खञ्जा वृत्तमें २६ अक्षरोंसे अधिक अक्षर हैं प-
रन्तु इनकी गणना दण्डकमें इसलिये नहीं की है कि इनकी चारों
पाद समान नहीं होते ॥

अर्द्धसमवृत्तोंका प्रयोग विशेषकर संस्कृतहीमें पाया जाता
है । भाषामें इन वृत्तोंका प्रचार बहुत कम है ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे वर्णार्द्धसमवृत्तवर्णननामैकादशो मयूखः ॥११॥

अथ वर्णविषमप्रकरणम् ।

जिस वृत्तके चारों चरण असमान हों उसे विषम वृत्त कहते हैं। मात्रिक और वर्ण विषममें यह भेद है कि मात्रिकमें चारों चरणोंकी मात्रा और नियम भिन्न रहते हैं और उनमें गणोंका कोई नियम नहीं अथवा जिस छन्दके सम सम और विषम विषम पाद न मिलते हों अथवा सम मिलते हों परन्तु विषम न मिलते हों वा विषम मिलते हों किंतु सम न मिलते हों । वर्ण विषम वह है जिसके प्रत्येक पादमें अक्षर अथवा गणोंका नियम होता है परन्तु एक चरण दूसरेसे नहीं भिन्नता अथवा जिसके सम सम और विषम विषम पद न मिलते हों अथवा सम मिलते हों विषम न मिलते हों वा विषम मिलते हों किंतु सम न मिलते हों ॥

विषम छन्द अथवा विषम वृत्तकी यह भी पहिचान है कि जो सम अथवा अर्द्धसम न हो वही विषम है ॥

विषम वृत्तोंकी संख्या जाननेकी रीति

जिस विषम वृत्तकी संख्या जाननी हो उसमें पहिले देखो कि प्रत्येक पादमें अक्षरोंकी संख्या समान है वा नहीं । यदि समान है तो प्रथम पादके वर्णोंकी सम संख्याका चतुर्घात करके उसमेंसे उसका वर्गमूल घटा दो जो शेष रहे उसीको उत्तर जानो । यदि वर्ण असमान हैं तो प्रत्येक पादके वर्णोंकी सम संख्याकी आपसमें गुणा करी जो गुणनफल आवे उतने ही भेद जानो । यथा—(१) प्रतिपादसमाक्षर विषम वृत्त ॥

पहिला चरण दूसरा चरण तीसरा चरण चौथा चरण
वर्ण २ ५ ५ १ ५ ५ १ १

समसंख्या $४ \times ४ \times ४ \times ४ = २५६ - १६$ वर्गमूल = २४० कुल भेद

वर्गमूल घटानेका यही अभिप्राय है कि प्रति पादसमाक्षरमें उस संख्याके समान ऐसे भेद आन पड़ते हैं जो सम वा अर्द्धसम वृत्तोंके भेदोंमेंसे हैं जैसे अर्द्धसम वृत्तोंमें कह आये हैं ॥

(२) असमाक्षर विषम वृत्त

पहिला चरण दूसरा चरण तीसरा चरण चौथा चरण
वर्ण १ २ ३ ४

समसंख्या $२ \times ४ \times ८ \times १६ = १०२४$ कुल भेद

दूसरा उदाहरण

पहिला चरण दूसरा चरण तीसरा चरण चौथा चरण
वर्ण १ १ १ २

समसंख्या $२ \times २ \times २ \times ४ = ३२$ कुल भेद

इन संख्याओंकी शुद्धता एक दूसरे नियमसे देख लो अर्थात् चारों चरणोंके अक्षरोंको जोड़ लो जो संख्या आवे उसी संख्याकी समसंख्याके तुल्य कुल भेद होंगे परन्तु स्मरण रखो कि यह नियम उन्हीं विषम वृत्तोंके लिये है जिनमें अक्षरसंख्या समान नहीं है । यथा—

पहिला चरण दूसरा चरण तीसरा चरण चौथा चरण
वर्ण १ + २ + ३ + ४ = १० की सम संख्या १०२४

दूसरा उदाहरण

पहिला चरण दूसरा चरण तीसरा चरण चौथा चरण
वर्ण १ + १ + १ + २ = ५ की समसंख्या ३२

प्रस्तारकी रीतिसे इसके ३२ भेद नीचे लिखे अनुसार होंगे ॥

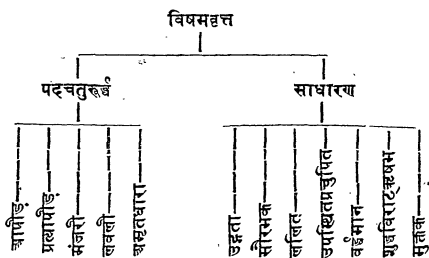
भेद ।	१ चरण ।	२ चरण ।	३ चरण ।	४ चरण ।
१	५	५	५	५५
२	१	५	५	५५
३	५	१	५	५५
४	१	१	५	५५
५	५	५	१	५५
६	१	५	१	५५
७	५	१	१	५५
८	१	१	१	५५
९	५	५	५	१५
१०	१	५	५	१५
११	५	१	५	१५
१२	१	१	५	१५
१३	५	५	१	१५
१४	१	५	१	१५
१५	५	१	१	१५
१६	१	१	१	१५

भेद ।	१ चरण ।	२ चरण ।	३ चरण ।	४ चरण ।
१७	५	५	५	५१
१८	१	५	५	५१
१९	५	१	५	५१
२०	१	१	५	५१
२१	५	५	१	५१
२२	१	५	१	५१
२३	५	१	१	५१
२४	१	१	१	५१
२५	५	५	५	११
२६	१	५	५	११
२७	५	१	५	११
२८	१	१	५	११
२९	५	५	१	११
३०	१	५	१	११
३१	५	१	१	११
३२	१	१	१	११

इस रीतिसे यदि प्रस्तार निकालने बैठो तो असंख्य वृत्त निकलेंगे जिनका प्रारावार जन्म भर लगना कठिन है । प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक और समयनाशक है और यथार्थमें

इसके न जाननेसे कोई विशेष हानि भी नहीं है । ग्रन्थकी परिपाटीके अनुसार सब भेदोंके नियम लिख दिये हैं । विद्यार्थियोंको मुख्य मुख्य नियम ही समझ लेना समुचित है । ग्रन्थके आरम्भमें जो दोहा मात्रिक छन्द और वर्णवृत्तकी पहिचानका दिया गया है वह वर्ण विषम वृत्तमें घटित नहीं हो सकता क्योंकि इसमें प्रतिपदभिन्नाक्षर होते हैं ॥

विषम वृत्तके मुख्य भेद दो हैं जो नीचे लिखे हुए छन्दोवृत्तसे प्रगट होते हैं ॥



पदचतुर्बुध उसे कहते हैं जिसके प्रथम चरणमें ८, दूसरेमें १२, तीसरेमें १६ और चौथेमें २० अक्षर हों । इसमें गुरु लघुका नियम नहीं है ॥

दूसी चतुर्बुधके ५ भेद ऐसे हैं जिनके प्रत्येक पदमें गुरु लघुका अथवा वर्णोंके घट वढ़ होनेका नियम है ॥

१ आपीड

जिस पदचतुर्दशके प्रति चरणमें सर्व वर्ण लघु और अन्तके दो गुरु हों उसे 'आपीड' कहते हैं । यथा—

प्रभु असुर सु हर्ता ८ । जगविदित पुनि जगतभर्ता १२ ॥
दनुजकुल अरि जग हित धरमधर्ता १६ । सरवस तज मन भज
नित प्रभु भवदुखहर्ता २० ॥

२ प्रत्यापीड

जिस पदचतुर्दशके प्रत्येक चरणके आदिमें दो गुरु हों किंवा आदि और अन्त दोनोंमें दो दो गुरु हों और शेष सब वर्ण लघु हों उसे 'प्रत्यापीड' कहते हैं । यथा—

रामा असुर सुहर्ता ८ । सांची अहहिं पुनि जगतभर्ता १२ ॥
देवारि कुल अरि जग हित धरम धर्ता १६ । मोहा मद तज मन
भज नित प्रभु भवदुखहर्ता २० ॥

३ मञ्जरी

जिस पदचतुर्दशके प्रथम पदमें १२ दूसरेमें ८ तीसरेमें १६ और चौथेमें २० वर्ण हों उसे 'मञ्जरी' कहते हैं । यथा—

सांची अहहिं प्रभु-जगतभर्ता १२ । रामा असुर सुहर्ता ८ ॥
दनुजकुल अरि जग हित धरम धर्ता १६ । सरवस तज मन भज
नित प्रभु भवदुखहर्ता २० ॥

४ लवली

जिस पदचतुर्दशके प्रथम पादमें १६ दूसरेमें १२ तीसरेमें ८ और चौथेमें २० वर्ण हों उसे लवली कहते हैं । यथा—

दनुजकुल अरि जग हित धरम धर्ता १६ । सांची अहहिं प्रभु

जगत भर्ता १२ ॥ रामा असुर हर्ता ८ । सरवस तज मन भज
नित प्रभु भवदुखहर्ता २० ॥

५ अमृतधारा

जिस पदचतुर्द्वीके प्रथम पादमें २०, दूसरे पादमें १२, तीसरेमें
१६ और चौथेमें ८ वर्ण हों उसे अमृतधारा कहते हैं ॥ यथा—
सरवस तज मन भज नित प्रभु भवदुखहर्ता २० । सांची अहहिँ
प्रभु जगतभर्ता १२ ॥ दनुज-कुल-अरि जगहित धरमधर्ता १६
रामा असुर सुहर्ता ८ ॥

इति पदचतुर्द्वीधिकारः

१ उद्गता

जिस वृत्तके पहिले चरणमें सगण जगण सगण और लघु हो,
दूसरेमें नगण सगण जगण और एक गुरु हो, तीसरे चरणमें भ-
गण नगण जगण और एक लघु गुरु और चौथे चरणमें सगण ज-
गण सगण जगण और एक गुरु हो उसे 'उद्गता' कहते हैं । यथा—

॥ ५ १ ५ ॥ १ १ ५ १ ॥ १ १ १ ५ १ ५ १ ५

सब त्यागिये असत काम । शरण गहिये सदा हरी ।

५ १ ॥ १ १ १ ५ १ ५ १ ५ १ ५ १ १ ५ १ ५ १ ५

दुःख भव जनित जायँ टरी । भजिये अहो निशि हरी हरी हरी ॥

२ सौरभक

जिस वृत्तके पहिले चरणमें सगण जगण सगण लघु, दूसरेमें
नगण सगण जगण गुरु, तीसरेमें रगण नगण भगण गुरु और
चौथेमें सगण जगण सगण जगण और गुरु हो उसे 'सौरभक'
कहते हैं ॥ यथा—

५ वर्द्धमान

जिस वृत्तके पहिले चरणमें सगण सगण जगण भगण और दो गुरु हों, दूसरे चरणमें सगण नगण जगण रगण और एक गुरु हो, तीसरे चरणमें नगण नगण सगण नगण नगण सगण हो और चौथे चरणमें नगण नगण नगण जगण यगण हो उसे वर्द्धमान कहते हैं ॥ यथा—

SSS ।। S। S। S।। SS ।। S ।। ।। S। S। SS
 गोविंदा पदमें जु मित्त चित्त लगेहै । निहिचै यहि भवसिंधुपार जैहै
 ।। ।। ।। ।। S। ।। ।। ।। SS ।। ।। ।। ।। ।। S। ।। SS
 असत सकल जग सोह मदिहं सबतजरोतनमनधनसनभजिये हरिकोरे

६ शुद्धविराट्छषभ

जिस वृत्तके पहिले चरणमें सगण सगण जगण भगण और दो गुरु हों, दूसरे चरणमें सगण नगण जगण रगण और एक गुरु हो, तीसरे चरणमें तगण जगण रगण हों और चौथे चरणमें नगण नगण नगण जगण और यगण हों उसे 'शुद्धविराट्छषभ' कहते हैं ॥ यथा—

SSS ।। S। S। S।। SS ।। S ।। ।। S। S। SS
 गोविन्दा पदमें जु मित्त चित्त लगेहै । निहिचै यहि भवसिंधुपार जैहै
 SS ।। S। S। S ।। ।। ।। ।। ।। S ।। SS
 त्यागी मद् सोह जाल दे । तन मन धन सन भजिये हरिकोरे ॥

७ मुक्तक

विषम वृत्तोंमें 'मुक्तक' वृत्त उसे कहते हैं जिस वृत्तमें कहीं गुरु लघु और कहीं केवल अक्षरोंकी संख्याका ही नियम होता है । इसके प्रायः दो भेद पाये जाते हैं अर्थात् 'अनङ्गक्रीड़ा' और उसीका उलटा 'ज्योतिःशिखा' यथा—

अनङ्गक्रीड़ा

जिस वृत्तके पूर्व दलमें १६ गुरु वर्ण और उत्तर दलमें ३२ वर्ण हों उसे 'अनङ्गक्रीड़ा' कहते हैं ॥ यथा—

आठौ यामा शम्भू गावो । भौ फण्डातेँ मुक्ती पावो ॥

सिख मम धरि हिय भ्रम सब तजि कर । भज नर हरहरहरहरहरहर
सू०—इसका दूसरा नाम सौम्याशिखा है । इसीकी उलटेको अ-
र्थात् जिसकी पहिले दलमें ३२ लघु और दूसरे दलमें १६ गुरु हों
ज्यातिःशिखा कहते हैं ॥

विषम वृत्तोंका प्रयोग संस्कृतहीमें पाया जाता है भाषामें
इन वृत्तोंका प्रचार बहुत कम है । इन वृत्तों का यदि प्रसार
वढ़ाया जाय तो असंख्य भेद प्रगट होती हैं, परन्तु विद्यार्थियोंकी
केवल मुख्य २ भेद जानलेना ही बस है ॥

दोहा ।

छन्दप्रभाकर ग्रन्थको, जे पढ़िहैं चित लाय ।

तिनपै पिङ्गलरायजू, रहिहैं सदा सहाय ॥ १ ॥

काव्य कछू यदि कीजिये, लहि पिङ्गलको ज्ञान ।

ईशहिको गुण वरणिये, लोक दुहूँ कल्याण ॥ २ ॥

ईश लगै ओ छन्द जग, लगै छन्दको छन्द ।

यहै छन्द सच्छन्द है, और छन्द सब फण्ड ॥ ३ ॥

समुक्ति छन्दको अर्थ जे, पढ़िहैं सुनहिं मतिमान ।

इहैं मुख उहैं मुक्ती लहैं, भाषत वेद पुरान ॥ ४ ॥

हेतु हिये यह आनि मैं, कीन्हों सरल सुपन्थ ।

छन्दशास्त्र सुखदानिको, देखि बहूत सदृगन्थ ॥ ५ ॥

अमित नायका भेदं जे, गूढ सिंगार सुसाज ।
 बुधजन विरचे ई नहीं, छन्द नियमकी काज ॥ ६ ॥
 जगन्नाथपरसादते, जगन्नाथपरसाद ।
 छन्दप्रभाकरमें धरे, छन्द सहित मरजाद ॥ ७ ॥
 काव्य नहीं कविता नहीं, कठिन तामुकी रीति ।
 छन्द वर्ण गुण ग्रन्थि दे, रची माल सह प्रीति ॥ ८ ॥
 सज्जन गुणग्राही सदा, करिहैं हियको हार ।
 छन्द सुमनकी वाससों, पैहैं मोद अपार ॥ ९ ॥
 ब्रह्म बिना नहिं लखि परत, जगमहँ कछु निर्दीष ।
 जानि यहै चुटि टाँपि हैं, लैहैं गुण मति-कोष ॥ १० ॥
 दया दृष्टिसों जो कछु, दर्शैहैं सत भाय ।
 छै कृतज्ञ देहौं तिहीं, पुनरावृत्ति मिलाय ॥ ११ ॥
 सखत नभ सर ग्रह शशी, विक्रममहँ अवतार ।
 छन्दप्रभाकरको भयो, मधु सित षट गुस्वार ॥ १२ ॥
 इति श्रीभानुकविकृत छन्दःप्रभाकरे वर्णविषमवृत्तवर्णानन्नाम
 द्वादशो मयूखः ॥ १२ ॥
 ॥ इति वर्णवृत्तान्युत्तरार्द्धञ्च ॥
 ॥ छन्दःप्रभाकरः समाप्तिसमाप्त ॥
 ॥ शुभम्भूयात् ॥



उपयुक्त सूचना ।

तुकान्त

साहित्यके ज्ञान विना उत्तम कविता नहीं हो सकती। भाषा-
सँ काव्य करनेकेलिये सबसे पहिले तुकान्तका ज्ञान होना पर-
मावश्यक है। संस्कृतमें इसकी विशेष आवश्यकता नहीं है। परन्तु
भाषा काव्यका काम इसके बिना अटक जाता है। अतएव इसके
विषयमें कुछ संक्षेपसे वर्णन किया जाता है ॥

प्रत्येक पद्यके चार चरण होते हैं। इन चरणोंके अन्त्याक्षरकी
'तुकान्त' कहते हैं। भाषा काव्यमें तुकान्त ६ प्रकारके पाये जाते
हैं। यथा—

संख्या	संज्ञा	प्रथम- चरणान्त्य	द्वितीय- चरणान्त्य	तृतीय- चरणान्त्य	चतुर्थ- चरणान्त्य	
१.	सर्वान्त्य	यथा	रा	रा	रा	रा
२	समान्त्यविषमान्त्य	यथा	रा	मा	रा	मा
३	समान्त्य	यथा	मा	मा	रा	मा
४	विषमान्त्य	यथा	रा	रा	रा	मा
५	समविषमान्त्य	यथा	रा	रा	मा	मा
६	भिन्नतुकान्त्य	यथा	} रा	मा	सी	ता
	अथवा	रा		रा	सी	ता
	वा	सी		ता	रा	रा

१ सव्वान्त्य ।

जिस पद्यके चारों चरणोंके अन्त्याक्षर एकसे हों उसे 'सव्वान्त्य'
कहते हैं। यथा—

न ललचहु । सब तजहु ।
हरि भजहु । यम करहु ॥

२ समान्यविषमान्य ।

जिस पद्यके समसे सम और विषमसे विषम पदके अन्त्याक्षर मिलते हैं उसे 'समान्यविषमान्य' कहते हैं । यथा—

जिहिं सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवरबदन ।
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धिराशि शुभगुणसदन ॥

३ समान्य

जिस पद्यके सम चरणोंके अन्त्याक्षर मिलते हैं, परन्तु विषम चरणोंके न मिलते हैं उसे 'समान्य' कहते हैं ॥ यथा—

सब तो । शरणा । गिरिजा । रमणा ॥

४ विषमान्य

जिस पद्यके विषम चरणोंके अन्त्याक्षर एक सङ्ग हैं परन्तु सम चरणोंके न हैं, उसे 'विषमान्य' कहते हैं ॥ यथा—

लोभिहिं प्रिय जिमि दाम, कामिहिं नारि पियारि जिमि ।
तुलसीके मन राम, ऐसे हो कत्र लागिहौ ॥

५ समविषमान्य

जिस पद्यके प्रथम पदका अन्त्याक्षर द्वितीय पदके और तृतीय पदका चतुर्थ पदके अन्त्याक्षरके समान हो उसे 'समविषमान्य' कहते हैं ॥ यथा—

जगो गुपाला । सु भोर काला ।
कहै यशोदा । लहै प्रमोदा ॥

६ भिन्नतुकान्त

जिस पद्यके सप्त और विषम पादोंके अत्याक्षर परस्पर न मिलते हों अथवा प्रतिपदांत्य भिन्न हों, वह 'भिन्नकान्त' कहा जाता है ॥ यथा—

प्रतिपदभिन्नांत्य

रामा जू । ध्यावो रे । भक्तीको । पाओगे ॥

पूर्वाहंतुकान्त ।

श्रीरामा । विश्रामा । दैदीजे । दायकै ॥

उत्तराहंतुकान्त ।

दैदीजे । दायकै । श्रीरामा । विश्रामा ॥

भिन्नतुकांत्यके पद्य भाषा काव्यमें प्रायः नहीं पाये जाते । षट्पदी अथवा अष्टपदीमें दो २ पदके अत्याक्षरोंका क्रमपूर्वक मिलना समुचित है । केवल इतना ही अवश्य नहीं कि अत्याक्षर ही मिल जायें, परन्तु स्वर भी मिलने चाहिये । पद्यकी रचनामें यदि अन्तकी पांच मात्रा तक स्वर एकसे ही मिलते जायें तो परमोत्तम है । परन्तु निम्नाङ्कित नियमों पर विशेष ध्यान देना चाहिये ॥

जहां पद्यके अन्तमें दो गुरु आन पड़ें वहां ५ मात्रा मिलें तो उत्तम

४

४ ,, ,, तो मध्यम

४ से कम मिलें तो निकृष्ट

जहां पद्यके अन्तमें गुरुलघु आनपड़ें वहां ५ मात्रा मिलें तो उत्तम

”

४।

” ३ मात्रा मिलें तो मध्यम

”

” ३ से कम मात्रा मिलें तो निकृष्ट

जहां पद्यकी अन्तमें लघुगुरु आन पड़ें	वहां प्रमात्रा मिलें तो उत्तम
”	१५ ” ३ मात्रा मिलें तो मध्यम
”	” ३से कम मात्रा मिलें तो निरुद्ध
जहां पद्यकी अन्तमें रलघुआन पड़ें	वहां ४ मात्रा मिलें तो उत्तम
”	॥ ” २ मात्रा मिलें तो मध्यम
”	” २ मात्रासिकम मात्रा मिलें तो निरुद्ध

उक्त नियमोंका स्पष्टीकरण नीचे किया जाता है ।

भागु न गो दुहिदे नँदलाला । पाणि गहे कहतीं ब्रजवाला ।

यहां दलाला और जवाला ठीक मिले

यदि दलीला और जवाला हो तो कर्ण मधुर नहीं

यदि दलाली और जवाला तथा

यदि दलेला और जवीला तथा

यदि दलीला और जवोला तथा

यदि दलीली और जवीलू तथा

यदि दलाला और जव्याला तथा

ऐसे ही और भी समझ लो । अभिप्राय यह है कि तुकान्तमें अन्तःप्राचर और उसका स्वर अवश्यमेव मिलें । उपान्तःप्राचर (अंत्य के पूर्वकाऽऽचर) भी जहां तक हो सके सवर्णी ही, यदि वर्ण न मिल सके तो न मिले परन्तु स्वरमिलित तो अवश्य ही ही । उपान्तःप्राचरके पूर्वके अचर जहां तक मिलते जावें अच्छा ही है । यदि न मिलें तो विशेष हानि भी नहीं है । यमक तथा अनुप्रास का विशेष ज्ञान साहित्यके ग्रन्थोंके देखनेसे हो सकता है ॥

॥ इति ॥

छन्दःप्रभाकरस्य शुद्धाशुद्धपत्रम् ।

पृष्ठ ।	पंक्ति ।	अशुद्ध ।	शुद्ध ।
		(भूमिका)	
७	८	विद्युन्ममाला	विद्युन्माला
७	१०	“ म भ न ल ग ,”	“ म भ न ल ग ”
१०	१६	उदारण	उदाहरण
१३	५	निम्नलिखि	निम्नलिखित
१४	८	जायँगी	जायँगी
१५	३	ईश्व भजन	ईश्वरभजन
१६	२	रक	कर
१६	२	चिन्तमें	चित्तमें
१७	१८	न्दर्कीके	छन्दकी
१८	१६	सव	सव
		(ग्रन्थ)	
२	२१	हैं	है
४	१०	किहँ	किहँ
५	१६	नहँ	नहँ,
११	१६	(५) III	(५) IIII
१४	३	कोठ	कोठ
१७	१२	मैसे	मैसे
१८	७	नीचे	नीचें
२०	८	कोठीमैसे	कोठीमैसे
२५	२०	१ १	१ १ चार गुरुका स्थान
३५	१२	पयोधर	पयोध
३५	उपपन्न नं० ३	सुरारी	सुरारि
३८	६	लीला IsI	लीला
५१	१६	असुरारी	असुरारी
५८	१७	खामि	खामि
६०	७	बारौ	वारौ
६८	१३	उदर	उर

पृष्ठ ।	पंक्ति ।	अशुद्ध ।	शुद्ध ।
७२	८	शुभगैहिं रच	शुभगे रची
७५	२	।।।	।।।।
८१	८	राखै	राखैं
८६	४	छम	०
८७	१६	खंढधनि	खंढधुनि
८७	१६	पददल	पददलि
८१	१७	कुसुमाकार	कुसुम आकार
८३	१ से ५	३० से ३६ तकका कोठ	८२ पृष्ठ में २८के पीछे पढ़ो
१०६	१५	गुरु	आदि गुरु
११०	१२ वां भेद	।।।।।	।।।।।
१११	४वर्षोंकानष्ट	१ ।।।।। शेष १५	{ १९४८ दूने १६ { १९९९९ शेष १६
१४३	१६	न स न ग	न स ल ग
१५०	२१	कृष्ण	श्रीकृष्ण
१५०	१०	वैसे	वैसे
१८३	७	महिरावकैहिं	महिरावनाहिं
१८४	१३	प्रभु	प्रभु
२०७	१३	रे तू माया	रे तु माया
२१४	२३	द्वया	द्वया
२१६	१३	सीभाग्य है	सीभाग्य बढ़ा है
२१६	१८	पाव	पावैं
२१७	१८	हृदय	हृदय
२२४	१४	चञ्चरी	चञ्चरी
२२५	६	अनहोती	अनहोनी
२२६	१	अथावृत्तिः	अथातिवृत्तिः
२२६	२१	गवखितनया	गवखितनया
२२८	६	फुलदासै	फुलदासै
२३३	२०	गिरी	गिरी
२३८	८	लौ	लौ
२४०	८	हे तु इके हरि अब्बखरी	{ (पाठान्तर) हेतु खरी जग { केहरिसी

पृष्ठ ।	पंक्ति ।	अशुद्ध ।	शुद्ध ।
२४१	२०	गंग	गंगा
२४६	२०	विकटोरिया	{ विकटोरियाके याकार को लघु मानो
२४८	१	सुन्दरि	सुन्दर
२५३	१५	आगसै	आंगसै
२५७	३	पठाम	पठाय
२६०	८	३० + १ ग	३० ल + १ ग
२६१	१२	सकीच	सकीच
२६३	१७	बैजनाथ	बैजनाथ
२७१	१४	अख्यानिकी	आख्यानिकी
२७८	१	हर्ता	सहर्ता
		(उपयुक्त सूचना)	
२८५	३	भिन्नकान्त	भिन्नतुकान्त
		(सूचीपत्रम्)	
१	खं० १ पं० २	पृष्ठांकाः (सर्वत्र)	पृष्ठांकाः (सर्वत्र)
१	" १ " ५	अत्युक्था	अत्युक्था
१	" १ " १५	अनुष्टुप	अनुष्टुप्
२	" २ " २	१५७	१५८
४	" १ " २०	२२४	२२५
४	" २ " २८	कृष्यै	कृष्यय
४	" २ " २०	४१	४२
४	" २ " २४	४१	४२
४	" २ " १७	चिधा (साविक)	०
५	" २ " २०	४१	४२
६	" २ " ५	१८२	१९८
६	" २ " १४	२१	२११
७	" २ " १३	प्रभावति	प्रभावती
७	" २ " १५	१४०	१४१
८	" १ " १०	वसुमति	वसुमती
१०	" १ " २६	३७	३५
१०	" २ " २१	२०५	२०६
११	" १ " १५	१५०	१५१
१२	" २ " ८	शङ्कनारि	शङ्कनारी

सूचना ।

पाठकोंसे प्रार्थना है कि पढ़नेके पूर्व इन अशुद्धियोंका शुद्ध करले, दृष्टिदाप्रसे जो लुब्ध और अशुद्धियां रह गई होंगी वे सब दूसरी आवृत्तिमें शुद्ध कर दी जायँगी ।

जगन्नाथप्रसाद ।



